नेपाली संस्कृत-अभिलेखों का हिन्दी अनुवाद

डॉ॰ कृष्णदेव अग्रवाल 'अरविन्द'

सन् ४६३ ई० से सन् ७४६ ई० तक की कालावधि में राजा मानदेव से लेकर महाराजा जयदेव द्वितीय तक लगभग १४ नेपाल-नरेशों ने ८९ अभिलेखों को संस्कृत भाषा तथा गुप्त लिपि में उत्कीर्णित कराया। इन अभिलेखों में प्रथम, द्वितीय तथा उनसठवाँ अभिलेख स्तम्भ-अभिलेख हैं, अठसठवाँ ताम्रपत्राभिलेख है। शेष ८५ अभिलेख शिलालेख हैं। इन अभिलेखों में १७ अभिलेख पूर्ण हैं, शेष अभिलेख न्यूनाधिक खण्डित हैं। ८९ अभिलेखो में १० अभिलेख पद्यात्मक, ४९ अभिलेख गद्यात्मक एवं ३० अभिलेख गद्य-पद्यात्मक अथवा मिश्रित हैं। इन अभिलेखों में लगभग ६५ अलङ्कारों तथा १४३ पद्यों में १३ प्रकार के छन्दों का समावेश किया गया है। केवलमात्र आर्या छन्द ही मात्रिक छन्द है, शेष सभी वार्णिक छन्द हैं। प्रस्तुत पुस्तक में श्री रेनिरो नोली की रोमन लिपि में लिखित **Nepalese Inscriptions in Gupta Characters Part I** नामक पुस्तक का अनुवाद किया गया है।

रु० ७०.००

PLATE XXXVI
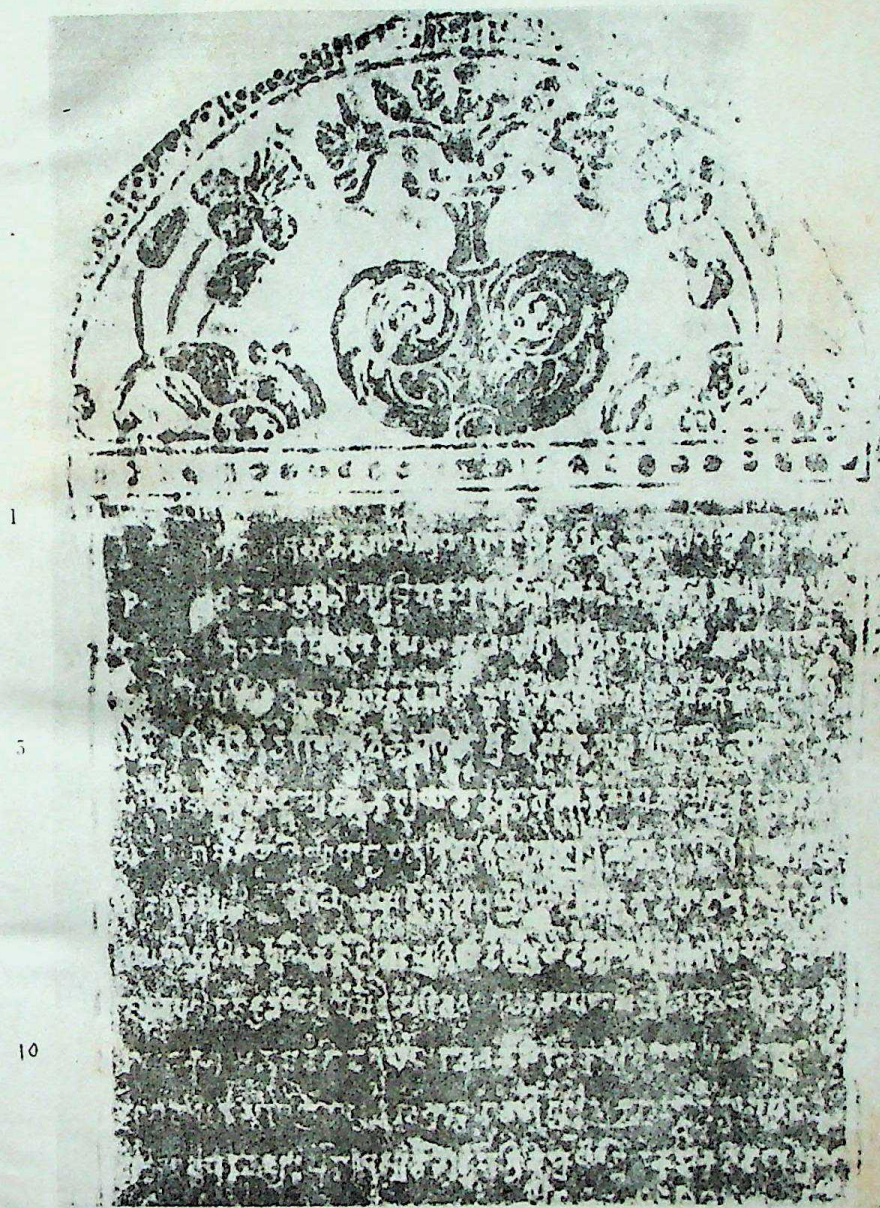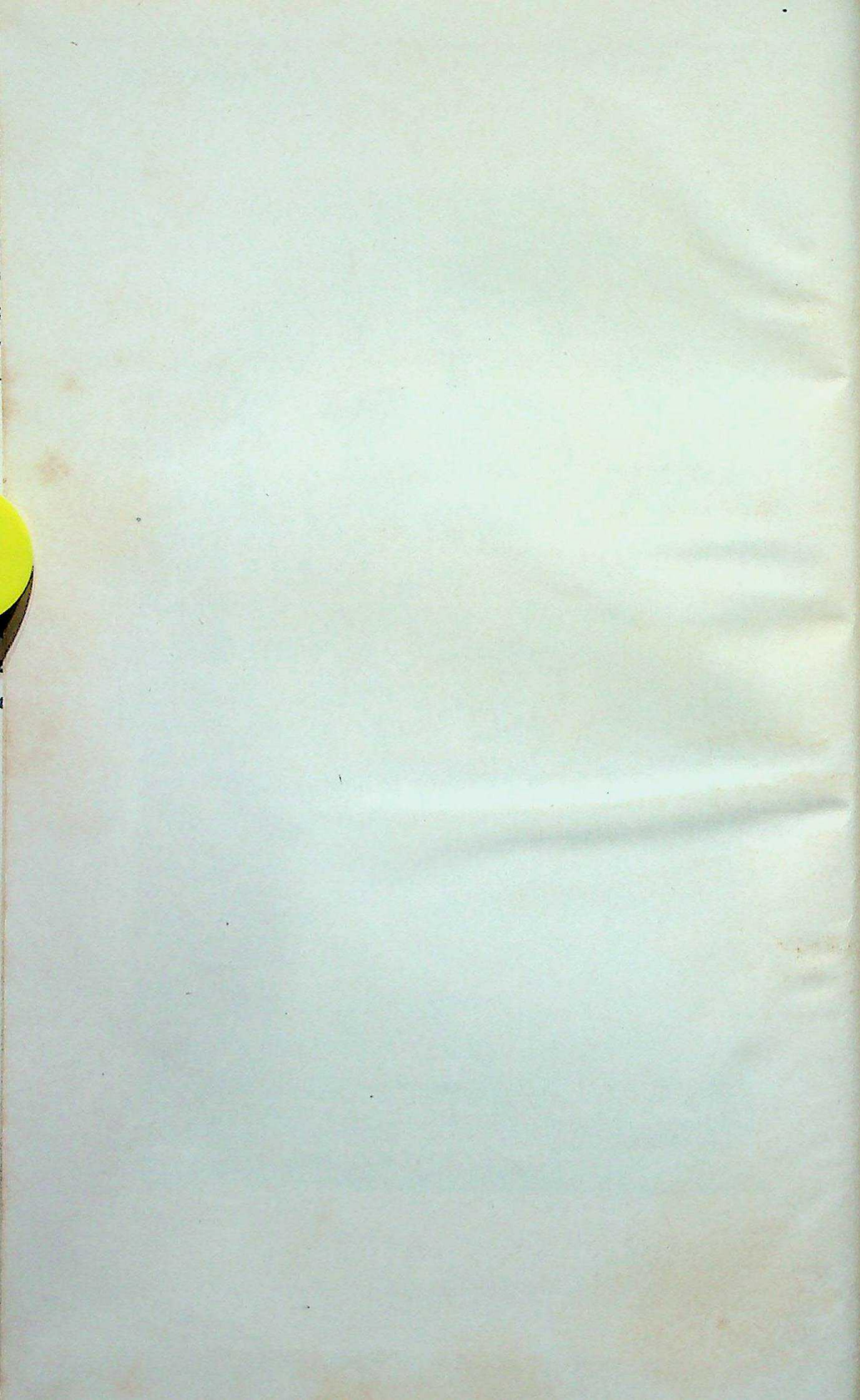
नेपाली संस्कृत अभिलेखों
का
हिन्दी अनुवाद

HINDI TRANSLATION OF
SANSKRIT INSCRIPTIONS
FROM NEPAL

नेपाली संस्कृत अभिलेखों
का
हिन्दी अनुवाद

डा० कृष्णदेव अग्रवाल 'अरविन्द'

ईस्टर्न बुक लिंकर्स
दिल्ली : : (भारत)

५८२५, न्यू चन्द्रावल, जवाहर नगर, दिल्ली-११०००७

प्रथम संस्करण : मार्च, १९८५
मूल्य : रु० ७०.००
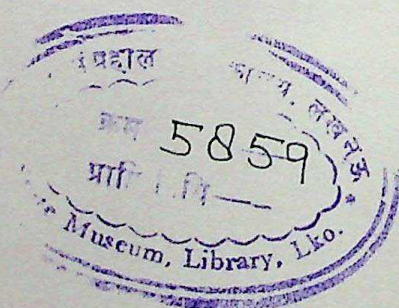
मुद्रक :
अमर प्रिंटिंग प्रेस, (श्याम प्रिंटिंग एजेन्सी),
८/२५, विजयनगर (डबल स्टोरी) दिल्ली-११०००९

HINDI TRANSLATION OF SANSKRIT INSCRIPTIONS FROM NEPAL

DR. KRISHAN DEV AGRAWAL 'AURWIND'

Eastern Book Linkers

DELHI :: (INDIA)

मङ्गलाचरणम्

१. गुणैर्हीनोऽपि यस्य प्रसादेन
वरदहस्तं नरो गृह्णाति शीघ्रम् ।

करोति येन निर्विघ्नं कार्यम्,
गणाधिपति-गणेशं तं नमाम्यहम् ।।

२. वर्द्धितं नेपाल-गौरवं यैः,
उदात्तैः कार्यैः स्वर्णयुगंकृतम् ।

पूज्यमाना सुभूमौ त्रिमूर्तिः
अहं लिच्छवीशान् प्रणमामि नित्यम् ।।

३. रघुवंशे भूत्वा रघुवंश-मानः,
त्यागेन शौर्येण रक्षितो यैः ।

राज्यं कृतं धर्मनिरपेक्षतया तत्,
तान् भूपतीन् प्रणमाम्यहम् ।।

४. रघुवंश-कुलाम्बरे शौर्य-मयूखैः,
हृतम् शत्रु-तिमिरं रघुवंशजातैः ।

स्वकालो व्यतीतो यैः प्रजाहितेषु,
दानाम्बुवर्षीन् प्रणमामि तानहम् ।।

—डा० कृष्णदेव अग्रवाल 'अरविन्द'

संक्षेप

1. Gnoli., R. : Gnoli Reniero
2. NIGC : Nepales Inscriptions in Gupta Characters
3. Ś. No. Śloka No.
4. L. No. : Line No.

आमुख

प्रस्तुत पुस्तक में श्री आर० नोली कृत 'Nepalese Inscriptions in Gupta Character-I' नामक पुस्तक में निहित ८६ अभिलेखों का हिन्दी अनुवाद किया गया है। इन अभिलेखों का हिन्दी अनुवाद मैं सन् १९८१ में 'नेपाल संस्कृत अभिलेखों का साहित्यिक अध्ययन' नामक शोध-प्रबन्ध को प्रस्तुत करने से पूर्व ही आदरणीय गुरुवर डा० एस० एस० राणा जी की प्रेरणा से कर चुका था। शोध प्रबन्ध में अभिलेखों के साहित्यिक अध्ययन के अन्तर्गत अभिलेखों के महत्वपूर्ण अंशों का स्वाभाविक रूप से हिन्दी अनुवाद हो जाने के कारण हिन्दी अनुवाद को एक पृथक् पुस्तक के रूप में लिखने की आवश्यकता को अनुभव नहीं किया। किन्तु डा० हितनारायण झा महोदय के निम्नलिखित वाक्य को* विस्मृत न कर सका और उससे प्रेरित होकर मैंने लिच्छविवंशी भूपतियों के गौरवगाथामय अभिलेखों का हिन्दी अनुवाद किया जो पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है।

अभिलेखों के खण्डित होने के कारण, यत्र-तत्र व्याकरणात्मक त्रुटियों के कारण, जहाँ-तहाँ तिब्बती तथा पहाड़ी उपभाषाओं के संस्कृतेतर शब्दों

---

* "Although, the Lichhavis played a dominant role in the political and cultural life of Ancient India and Nepal, they have not been provided with the deserving place in history".

—The Lichhrvis (of Vaiśāli), Preface, p. 5
Dr. Hit Narain Jha

The Chaukhamba Sanskrit Studies Vol. XXV
Chaukhamba Publication Varanasi-I, 1970 A.D.

के समावेश के कारण हिन्दी-अनुवाद अक्षरशः शुद्ध तो नहीं कहा जा सकता किन्तु सब बातों को ध्यान में रखते हुए हिन्दी अनुवाद करने का अधिकाधिक सङ्गत प्रयास किया गया है। मुझे विश्वास है कि पुरालेखीय विषयों से सम्बन्धित छात्रों को इस अनुवाद के द्वारा सन् ४६३ ई० से ७४७ ई० के मध्य भारत-नेपाल के पारस्परिक राजनैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं ऐतिहासिक विषय सम्बन्धी ज्ञान-प्राप्ति में अवश्य सहयोग मिल सकेगा।

--डा० कृष्णदेव अग्रवाल 'अरविन्द'

१. नेपाल की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

नेपाल का नाम पौराणिक बौद्ध ग्रन्थों, चीनी यात्रियों के ऐतिहासिक यात्रा-प्रसङ्गों एवं गुप्तकालीन ग्रन्थों में सतत रूप से वर्णित होता आ रहा है। नेपाल के प्राचीन इतिहास पर विहंगम दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि राजा धर्माकर के पश्चात् राजा धर्मपाल हुआ। इन्हीं के वंशज राजा सुधन्वा नेपाल-नरेश हुए जो सीता स्वयंवर में राजा जनक के अनुज कुशध्वज के द्वारा मारे गए थे। नेपाल का शासन विदेहवंशी कुशध्वज एवं उसके वंशजों के हाथों में रहा।

महाभारत काल में भगवान् कृष्ण ने नेपाल में आकर दानासुर का वध करके अपने नाती का उद्धार किया। पद्मकास्थ नामक पर्वत पर रहते हुए नेपाल की उपत्यिका में भरे हुए जल को निकालकर प्रजा का कल्याण किया तथा यहाँ भी गौवंश की वृद्धि पर बल दिया। गौवंश का पालन करने वाले मुखिया गण गोपाल कहलाते थे। इसी वंश परम्परा में नेमुनि ने वाग्मती और विष्णुमती नदियों के मध्य स्थित टेकु नामक स्थान पर रहते हुए नेपाल का शासन-सूत्र संभाला। यह देश नेमुनि के द्वारा पालित पोषित होने से नेपाल नाम से अभिहित हुआ। इस प्रकार गोपालवंशी गुप्त राजाओं अथवा गुप्त (गोप) वंशी गोपाल राजाओं ने लगभग ६०० वर्षों तक राज्य किया। तत्पश्चात् गौड नरेश प्रचण्डदेव के पुत्र शक्तिदेव ने राज्य किया। उनके पश्चात् गुणकामदेव, सिंहकेतु तथा राजा सिंहल ने सातवीं श० ई० पू० तक राज्य किया। तत्पश्चात् किरातवंश के राजा यलम्बर से लेकर राजा गस्ती तक लगभग ३० राजाओं ने ७५० वर्षों तक शासन किया। १४वें किरातवंशी स्थंकु के शासनकाल में सम्राट् अशोक अपने गुरु उपगुप्त की प्रेरणा से परिवार सहित २६५ ई० पू० में नेपाल आए और अपनी पुत्री चारुमती का विवाह वहीं पर क्षत्रियवंशी देवपाल के साथ कर दिया। देवपाल और चारुमती ने देवपाटन नामक ऐतिहासिक नगर बसाया। किरातवंशी राजा गण सम्राट् अशोक के करदाता के रूप में राज्य करते रहे। दूसरी शताब्दी ई० पू० से

लेकर ११० ई० पू० तक का नेपाली इतिहास अन्धकारमय है। प्रथम शताब्दी ई० में सोमवंशी राजा निमिष ने २८वें किरातवंशी राजा पटुक को पराजित कर नेपाल में सोमवंश की स्थापना की। उसी ने चतुर्मुखी पशुपतिनाथ की मूर्ति की स्थापना की थी। तत्पश्चात् दूसरी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सूर्यवंशी लिच्छवि राजाओं ने नेपाल में शासन आरंभ किया। पशुपत्ति-वंश प्रशस्ति शिलालेख[1] लिच्छविवंशीय राजाओं की गौरवगाथा को उद्‌घाटित करता है।

महाराजा दशरथ और उसके पुत्र तथा पौत्रों के समान आठ अन्य राजाओं को छोड़कर श्रीमान् लिच्छवि हुए।[2] लिच्छवि वंश के २४वें राजा जयदेव प्रथम के पश्चात् ११ राजाओं के नाम अज्ञात हैं। अन्त में वृषदेव, शङ्करदेव, धर्मदेव और ३९वें राजा मानदेव हुए। लिच्छवि वंशी राजा भास्कर वर्मा की पुत्री कुमार देवी का विवाह भारत के सम्राट् चन्द्रगुप्त प्रथम के साथ हुआ था। मानदेव के पूर्वज भारत के गुप्तवंशी राजाओं के करदाता थे।[3] भारत के सम्राट् स्कन्दगुप्त के शासनकाल में हूणों के लगातार आक्रमणों के कारण सामन्त लोग स्वतन्त्र हो गए थे। इस अवसर का लाभ उठाते हुए राजा मानदेव ने स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर 'मनाङ्कमुद्रा' का प्रचलन किया। राजा मानदेव ने अपनी शासन व्यवस्था में पूर्णरूप से सम्राट् समुद्रगुप्त के आदर्शों को अपनाया।[4]

'लाजिमपाट विक्रान्तमूर्ति अभिलेख'[5] के अनुसार मानदेव ने माता

---

1. Gnoli, R., NIGC No. LXXXI
२. श्रीमत्तुङ्गरथस्ततो दशरथः पुत्रैश्च पौत्रैस् समं राज्ञाऽष्टावपरान् विहाय परितः श्रीमान् अभूल्लिच्छविः ॥५॥
   Gnoli, R., NIGC No. LXXXI, Ś. No. 5
३. यी चार राजाहरू (वृषदेव, शङ्करदेव, धर्मदेव, मानदेव) को अतिरिक्त नेपालमा अन्य राजाहरू को राजनैतिक स्थित एक स्वतन्त्र राजा को रूप मां न रहेर कर दाता महाराज को रूप मा रहे को होला।"
   —नेपाल को ऐतिहासिक विवेचना पृ० ४०
   ढुण्डिराज भंडारी, काठमाण्डु, नेपाल, संवत् २००८
४. यिन को शासनव्यवस्था ले भारतवर्ष का महान् गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त को शासन व्यवस्थापित मेलजोल गरे को दृष्टिगोचर हुन्छ"।
   —नेपाल को ऐतिहासिक विवेचन, पृ० ४३
5. Gnoli, R. NIGC No. III

राज्यवती की पुण्यवृद्धि के लिए भगवान् विष्णु की विक्रान्तमूर्ति की स्थापना की। साथ ही उसने महाचक्रविहार का जीर्णोद्धार तथा अनेक विहार एवं चैत्यों का निर्माण कराया जैसा कि उसके अभिलेखों से विदित होता है। छंगूनारायण स्तंभलेख के अनुसार उसका राज्य उत्तर में पहाड़ियों से लेकर पूर्व में मल्लपुरी तथा कोसी नदी एवं पश्चिम में गण्डक नदी तक फैला हुआ था।[1] तत्पश्चात् महीदेव, वसन्तदेव, उदयदेव I मानदेव II गुणकामदेव एवं शिवदेव II हुए। महाराज अंशुवर्मा शिवदेव I का जमाता था। दोनों ने सम्मिलित रूप से द्वैध शासन किया। नेपाल में शिवदेव I के समय से द्वैधशासनप्रणाली का सूत्रपात हुआ। शिवदेव I के भिक्षु बनने के पश्चात् अंशुवर्मा ने उनके पुत्र ध्रुवदेव एवं उदयदेव द्वितीय के साथ द्वैध शासन किया।। अंशुवर्मा से ५८८ ई० से लेकर सन् ६३५ ई० तक उदयदेव II, ध्रूवदेव एवं जिष्णुगुप्त के साथ द्वैध शासन किया। इसी प्रकार जिष्णुगुप्त, विष्णुगुप्त, भीमार्जुनदेव राजाओं ने स्वतन्त्र रूप से शासन न करके सम्मिलित रूप से शासन किया। इन सब में अंशुवर्मा महान् प्रजाहितैषी एवं शब्दशास्त्र का[2] रचयिता था। नालन्दा विश्वविद्यालय के महान् वैयाकरण चन्द्रवर्मन् का आश्रयदाता एव कैलासकूटभवन का निर्माता था। उदयदेवद्वितीय के पुत्र नरेन्द्रदेव (६४१-६७६) राजा हुए। उनके पुत्र शिवदेव द्वितीय (६८४-७०५) तक राजा हुए 'पशुपति राजवंश प्रशस्ति" अभिलेखानुसार उसका विवाह आदित्यसेन की दौहित्री एवं मगध नरेश भोगवर्मा की पुत्री बत्सदेवी के साथ हुआ था। तत्पश्चात् इनका पुत्र महाप्रतापी एवं महाकवि जयदेव द्वितीय (७०५-७४७) राजा हुए। 'पशुपति राजवंश प्रशस्ति शिलालेख के अनुसार नेपाल नरेश जयदेव द्वितीय का विवाह कलिंग-कौशलनरेश श्री हर्षदेव की पुत्री राज्यमती के साथ हुआ था। इस प्रकार नेपाल और भारत का इतिहास अन्योन्याश्रित एवं एक दूसरे का पूरक है।

---

1. Gnoli R., NIGC No. I S. No 16-19
२. (क) ओऽम् स्वस्ति कैलासकूवभवनात् अनिशिनिशि चानेकशास्त्रार्थ-विमर्शावसादिता सद्दर्शनतया धर्माधिकारस्थितिकारणम्...।
Gnoli, R., NIGC No. XLI L. No. 1-2
(ख) प्रजाहितार्थोद्यतशुद्धचेतसांशुवर्म्मणा
श्रीकलहाभिमानिना।
कथं प्रजा मे सुखिता भवेदिति प्रिया-
व्यवस्थेयमकारि धीमता ॥
Gnoli, R. NINC No. XXXVI L. No. 21-22

२. नेपाली संस्कृत अभिलेखों का सामान्य परिचय

जहाँ शिलालेखों, स्तम्भलेखों, ताम्रपत्रों आदि के द्वारा जहाँ वाली, वोर्नियो, चम्पा, सुमात्रा, जावा आदि देशों में प्रसारित एवं समृद्ध भारतीय संस्कृति का गहरा परिचय मिलता है वहाँ रघुवंशी महाराज लिच्छवि द्वारा स्थापित लिच्छवि वंश के अनेकों प्रतापी नेपाल-नरेशों द्वारा गुप्तलिपि में उत्कीर्णित संस्कृत अभिलेख भी भारतीय संस्कृति के रहस्यों को प्रकाशित करते हैं।[1] भारत और नेपाल की सांस्कृतिक सम्बन्धों की जंजीर से टूटकर लुप्त होने वाली कड़ियों को ढूंढ़ निकालते का बहुत कुछ श्रेय नेपाल के संस्कृत अभिलेखों को है।

सम्राट् हर्षवर्धन के पश्चात् भारत राजनैतिक दृष्टि से कुछ अस्तव्यस्त हो गया था। इसलिए ७-८ श० के अभिलेखों में उत्कृष्ट गुप्ता अभिलेखन-शैली का अभाव हो गया था। इस उत्कृष्ट गुप्ता-अभिलेख-शैली की परम्परा को नेपाल के राजा नरेन्द्रदेव, शिवदेव द्वितीय एवं जयदेव द्वितीय ने अपने अभिलेखों में सुरक्षित रखा।

नेपाल के लिच्छवी वंशी राजाओं ने सन् ४६३ ई०-७४७ ई० के मध्य लगभग ८९ अभिलेख उत्कीर्णित कराए जो पाँचवों श० से आठवीं श० के मध्य भारत-नेपाल के अटूट एवं अमिट सांस्कृतिक सम्बन्धों पर प्रकाश डालते

---

1. The deficiency of material which can be arranged in strictly chronological sequence into some extent made up by contemporary records on stone and copper which have been discovered during the last few decades, not only in all parts of Indian empire but in the adjoining countries towards North. East and South such as Nepal, Central Asia, Jawa, Combodia and Ceylon, wherever the influence of the civilization of India had penetrated".

   —D.B. Diskalkar, *Selection from Sanskrit Inscription* Page 9

हैं।[1] राजा मानदेव के ग्यारह[1] (४६४-५०५), राजा वसन्तदेव के ४[2] (५०६-५३२ ई०), राजा रामदेव के तीन[3] (५४०-५४८ ई०) राजा गणदेव के तीन[4] (५६०-५६७ ई०), राजा शिवदेव प्रथम के तेरह[5] (५९५-६०३ ई०), राजा अंशुवर्मा के तेरह[6] (६१८-६२७ ई०), राजा उदयदेव द्वितीय के दो[7] (६३३-६३४), राजा ध्रुवदेव तथा विष्णुगुप्त के पाँच[8] (६३६-६३९), राजा भीमार्जुनदेव तथा जिष्णुगुप्त के चार[9] (५४३-६४८ ई०), राजा जिष्णु गुप्त के दो[10] (६५९-६५० ई०), राजा भीमार्जुनदेव तथा विष्णुदेव के दो[11] (६५२-६५३ ई०), राजा नरेन्द्रदेव के बारह[12] (६५०-६७७ ई०), राजा शिवदेव द्वितीय के चार[13] (६९७-७१३), तथा राजा जयदेव द्वितीय के ग्यारह[14] (७२५=७४७) कुल ८९ अभिलेख मिलते हैं।

In several spheres of society and culture we find parallel developments in the two countries which in many cases reveal close mutual connection. For a proper understanding of same developments in Indian History and culture we have to look to the material from Nepal, the vital missing links are possibly to be found there. As is well-known evidence for certain cultural activities on the subcontinent may still exist in Nepal where they have been preserved with care and concerned whereas in India itself. They died out or obliterated".

—*Studies in the History & culture of Nepal.* Page 5
Gopal Lallanji & Verma T.P.

1. Gnoli, R., NIGC No. I-XI
2. XII-XV
3. XVI-XVIII
4. XIX-XXI
5. XXII-XXXIV
6. XXXV-XLVII
7. XLXVIII-XLIX
8. L-LIV
9. LV-LLIII
10. LIX-LX
11. LXI-LXII
12. LXIII-LXXI-LXXXIII-LXXV
13. LXXII-LXXVI-LXXVIII
14. LXXIX-LXXXIX

इनमें प्रथम, द्वितीय एवं उनसठवाँ अभिलेख स्तम्भ-लेख हैं, अड़सठवाँ ताम्रपत्राभिलेख हैं। शेष पचासी अभिलेख शिलालेख हैं।

नेपाली अभिलेखों को विषय की दृष्टि से पांच भागों में विभाजित किया जा सकता है—[1]प्रशंसात्मक अभिलेख [2]धार्मिक अभिलेख [3]समारक प्रधान अभिलेख[4] दान सम्वन्धी अभिलेख[5] राजाज्ञा प्रधान अभिलेख। इनकी संख्या क्रमशः ५, ११, १०, ८ तथा ५५ है।

---

1. I, XI, LXVI, LXXXI, LXXV
2. IX, X, XX, XXXVIII, LII, LVI, LX, LIX, LXXV, LXXXI, LXXXVIII
3. III, IV, VII, VIII, XVIII, XLI, XLVI, XLVIII, LIII, LXIII
4. II, V, VI, XVI, XVII, XXVIII, XLV, XLIX
5. XII-XV, XIX, XXI-XXXVII, XXXIX-XLIV, XLVII, ILIV, XLIX, L, LI, LIV, LV, LVII, LVIII, LXI-LXII, LXIV, LXV, LXVII, LXVIII, LXX-LXXV, LXXVII, LXXIX, LXXXII-LXXXIV, LXXXVII, LXXXIX,

नेपाली संस्कृत अभिलेखों में काव्य

ईसा की कई शताब्दी पूर्व से लेकर मध्य युग तक लिखे गए विभिन्न अभिलेखों के इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि भिन्न-२ देशकाल-वातावरण में राजाओं एवं सामन्तों का मुख्य उद्देश्य विविध अभिलेखों के माध्यम से अपनी दिग्विजयों, जीवन की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनैतिक घटनाओं को चिरस्थायी बनाना था न कि काव्य-सौष्ठव प्रदर्शित करना। परन्तु भाषा एवं साहित्य के विशारद राजकवियों द्वारा रचित प्रशस्तियों में काव्यत्व स्वाभाविक रूप से प्राप्त होता है। इस इस तथ्य को डी० बी० डिसकलकर ने भी स्वीकार किया हैं।[1]

इन अभिलेखों में सत्रह अभिलेख पूर्ण हैं, शेष अभिलेख न्यूनाधिक खण्डित हैं। नवासी अभिलेखों में दस अभिलेख पद्यात्मक[2] उनन्चास अभिलेख

---

1. The objeet that prompted the engraving of these inscriptions was generally the recording of some pious donation of Village or the building of a temple or even that of describing the exploits of a king. In all these cases, it is therefore futile to expect any flashes of Literary merit in the composition reeorded in inscriptions. But sometimes when a court-poet sets himself to the task of extolling the vertues and exploits of his patron king and his ancestors the result is sometimes recorded in the excellent specimens of SKT kāvya or artificial poetry. These praśastis very 'often contain not only the same ideas but also words and phrases similar to those found in the standard classical poetry of the Masters of Sanskrit Literature."

   —*Selections from Sanskrit Inscriptions*, By Diskalkar, D.B., Page 9

2 I, III, IV, IX, XI, XXIX, LXIII, LXIX LXXXI, LXXXVI

गद्यात्मक[२] एवं तीस अभिलेख गद्य-पद्यात्मक अथवा मिश्रित[१] हैं। इन अभिलेखों में लगभग पैंसठ प्रकार के अलङ्कार तथा १४३ पद्यों में तेरह प्रकार के छन्दों का समावेश है। केवलमात्र आर्या छन्द ही मात्रिक छन्द है। शेष सभी वार्णिक छन्द हैं।

इन अभिलेखों के अनुशीलन से न केवल गुप्तकालीन भारत-नेपाल के अटूट सांस्कृतिक सम्बन्धों एवं आदान-प्रदान पर प्रकाश पड़ता है अपितु संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट विधाओं की सुरक्षित प्राचीन परम्परा का भी उद्घाटन हुआ है। सन् ४६४ में लिखा गया राजा मानदेव का छंगूनारायण मानदेव प्रशस्ति स्तंभलेख" उन्नीस शार्दूलविक्रीडित-छन्दों में आबद्ध अज्ञातनामा कवि की उत्कृष्ट संस्कृत-काव्य रचना है। छन्दालङ्कार, रस आदि की दृष्टि से रचना अत्यन्त सुष्ठु एवं प्रौढ़ है। भाव, भाषा, एवं कवि-कला का अद्भुत त्रिवेणी सङ्गम एवं सामञ्जस्य परिलक्षित होता है। पति के दिवङ्गत होने पर मानदेव की माता राज्यवती संसार से विरक्त होकर पति की अनुगामिनी बनना चाहती है। किन्तु रानी अपने पुत्र मानदेव के मुख-पङ्कज से निसृत अश्रुजल से सम्पृक्त वाक्-पाश में आबद्ध होकर परवश विहगी के समान स्थिर हो जाती है—

> "किं मे भोगविधानविस्तरकृतैराशामयैर्बन्धनै-
> र्मायास्वप्ननिभे समागमविधौ भर्त्रा विना जीवितुम्।
> यामीत्येवमवस्थिता खलु तदा दीनात्मना सूनुना
> पादौ भक्तिवशान्निपीड्य शिरसा विज्ञापिता यत्नतः॥
> किं भोगैर्म्मम किं हि जीवितसुखैस्त्वद्विप्रयोगे सति
> प्राणान् पूर्व्वमहञ्जहामि परतस्त्वं यास्यसीतो दिवम्।
> इत्येवं मुखपङ्कजान्तरगतैर्न्नेत्राम्बुमिश्रैर्द्दढम्[२]
> वाक्पाशैर्विहगीव पाशवशगा बद्धा ततस्तस्थुषी॥[३]

---

1. II, IV, XIII, XIV, XV, XVII, XIX, XXI, XXIII, XXIV-XXVII, XXX-XXXIII, XXV, XXXIX-XLVI, XLIX, LIII LV, LXV, LXVI, LXVIII, LXX-LXXII, LXXIV-LXXV, LXXIX, LXXXII, LXXIV, LXXXVI-LXXXIX
2. VI, VIII, X, XVI, XV, XXII, XXIX, XXXIV, XXXVI, LXVI, LXVII, LXXIII, LXXIV, LXXVI, LXXVII, LXXVIII, LXXX, LXXXII, LXXXIII, LXXXVII, L-LII LIV, LVI, LVII, LIX, LXI, LXI
3. Gnoli, R., NIGC No. I-9-10 Ślokas

वात्सल्य प्रेम के कारण रानी निजी इहलौकिक एवं पारलौकिक कामनाओं को न्यौछावर करने को विवश हो गई। जिस प्रकार किसी वस्तु को बाँधने के लिए रस्सी को भिगोकर अधिक दृढ़ एवं पक्का कर दिया जाता है, उसी प्रकार पुत्र के अश्रुओं से वाक्पाश भी माता को बाँधने के लिए गीला होकर अधिक सुदृढ़ हो गया है। कवि की हृदयस्पर्शी उपमा कालिदास की उत्कृष्ट उपमाओं की पंक्ति में सुशोभित प्रतीत होती है। एक ही श्लोक में रूपक, उपमा, भावशान्ति, अनुप्रास आदि अलङ्कारों का स्वाभाविक आकर्षण, दिवङ्गत पति के वियोग के कारण संसार को त्यागकर पति की अनुगामिनी बनने की उत्कट तत्परता एवं दूसरी ओर बिलखते हुए पुत्र मानदेव के प्रति माता की ममता एवं कर्त्तव्य का पारस्परिक द्वन्द्व तत्पश्चात् भावशान्ति अत्यन्त हृदयस्पर्शी तथा ध्वन्यात्मक है। इस अभिलेख के उत्कृष्ट काव्य-सौष्ठव एवं प्रौढ़त्व के आधार पर यह सिद्ध होता है कि इस प्रकार की उत्कृष्ट संस्कृत पद्यकाव्य-शैली की परम्परा राजा मानदेव से पूर्व ३८ राजाओं के समय से चली आ रही होगी। इस प्रकार प्रौढ़-प्राञ्जलित भाषा-शैली का विकास कुछ दशाब्दियों में संभव न होकर कई शताब्दियों में होता है। राजा मानदेव के विख्यात राजकवि अनुपरम कृत "द्वैपायन स्तोत्र अभिलेख[1] एवं राजा जयदेव द्वितीय के राजकवि बुद्धकीर्ति द्वारा विरचित "पशुपति राजवंश प्रशस्ति अभिलेख"[2] संस्कृत साहित्य के इतिहास में अपना अनुपम स्थान रखते हैं।

४० अभिलेखों के १४१ पद्यों में श्लोक, शार्दूलविक्रीडित, मालिनी, वंशस्थ, मन्दाक्रान्ता, प्रहर्षिणी, शिखरिणी, आर्या, उपगीति, रुचिरा, मञ्जुभाषिणी, स्रग्धरा, उपजाति तथा वसन्ततिलका—इन चौदह छन्दों का भाव-भाषानुकूल प्रयोग किया गया है। छन्दों के भाव-रस-गुण अलङ्कारानुकूल प्रयुक्त किए जाने के कारण प्रत्येक अभिलेख आद्योपान्त प्रभावपूर्ण, विषणप्रभ, आह्लादक, स्वरलयात्मक, नाद-सौन्दर्यपूर्ण एवं संगीतात्मक हैं।

अभिलेखों की अन्य विशेषता है अभिलेखों के परवर्ती आचार्यों द्वारा प्रणीत नवीन अलंकारों का पाया जाना। स्मरण, परिणाम, उल्लेख, प्रतिवस्तूपमा, विनोक्ति, परिकर, परिकरांकुर, अप्रस्तुतप्रशंसा, अर्थान्तरन्यास, असंगति, अन्योन्य, सम, असम, अधिक, अत्युक्ति, विशेष, कारणमाला, पर्याय, परिसंख्या, विकस्वर, उत्तर आदि नेपाली अभिलेखों के परवर्ती अलंकार हैं जो अभिलेखों में पाए जाते हैं।

1. Gnoli, R., NIGC No. XI
2. Gnoli, R., XIGC No. LXXXI

अभिलेखों से हास्य रस को छोड़कर शृङ्गार रस,[१] करुण[२], वीर,[३] बीभत्स[४] भयानक[५], रौद्र[६], वात्सल्य,[७] अद्भुत,[८], भक्ति[९] तथा शान्त[१०] रस उपलब्ध हैं।

शब्दचित्र—

अभिलेखों में दिग्विजयों, प्राकृतिक सीमा निर्धारण, मार्मिक स्थलों के चित्रण में शब्दचित्रात्मकता प्रशंसनीय है। चित्रालङ्कार में सिद्धहस्त एवं कवित्त के गौरव एवं मर्यादा के मर्मज्ञ होने के कारण ही डी० आर रिग्मी ने महाकवि बुद्धकीर्ति के अतिरिक्त राजा जयदेव द्वितीय को एक महान् कवि कहा है—

"King Jayadeva is called as a great poet full of humility for he himself did not compose the verses giving the genealogy of his ancestors. He composed first five verses (25-29) in honour of the Lord and nothing more".[11]

अलंकृत काव्य शैली—

बाणभट्ट, सुबन्धु आदि महाकवियों ने अलंकृत काव्यशैली के माध्यम से वाग्वैदग्ध्य, कवि-कल्पना एवं प्रौढ़ पाण्डित्य का अपनी रचनाओं में कई स्थलों पर प्रदर्शन किया है। राजा जयदेव द्वितीय के "पशुपति राजवंश प्रशस्ति अभिलेख के निम्नलिखित दो श्लोक अलंकृत काव्यशैली के उत्कृष्ट उदाहरण हैं—

---

1. Gnoli, R. NIGC No. I Ś. No. 1
2. Ibid, No. I Ś. No. 5-14
3. Ibid, No. I Ś. No. 14-15
4. Ibid, No. XXXIV L. No. 30-31
5. Ibid, No. I Ś. No. 18
6. Ibid, No. I Ś. No. 17
7. Ibid No. XXXVI L. No. 21-22
8. Ibid, No. LXXXI Ś. No. 18-27, 29-30
9. Ibid, No. XI, L. 68-72, XX L. 4-11, LXI L. 1-2
10. Ibid, No. I L. No. 5-6, XI, L. 33-34
11. Ancient Nepal Ch. IX –The Restoration)—Regmi, D.R.

अङ्गश्रियापरगतोजितकामरूपः
काञ्चीगुणाढ्य वनिताभिरुपास्यमानः ।
कुर्वन् सुराष्ट्रपरिपालनकार्यचिन्तां
यः सार्व्वभौमचरितम् प्रकटीकरोति ।।[1]

अर्थात् कामदेव के सुन्दर रूप को भी पराजित करने वाले अपने शरीर की शोभा से युक्त था, करधनियों से सुसज्जित गुणवती वनिताओं द्वारा उपास्यमान रहता था । अपने सुराष्ट्र के परिपालन-कार्य की चिन्ता करने वाला था जो सार्वभौमिक चरित्र को प्रगट करता है ।

अथवा

अङ्गदेश को जीतने के कारण, उसकी श्री एवं समृद्धि से परिवृत्त जीते हुए कामरूप एवं काञ्ची प्रदेशों की गुणवान् वनिताओं के द्वारा उपास्यमान होता था । सौराष्ट्रप्रदेश के परिपालन-कार्य में चिन्ता करने वाला था (एक आदर्श राष्ट्र के रूप में साम्राज्य के परिपालन-कार्य में चिन्तन मनन करता था । जो उसके सार्वभौमिक चरित्र को (सार्वभौमिक साम्राज्य) को प्रदर्शित करता है—

अथवा

जीते हुए अंग, कामरूप, काञ्ची, समृद्धशाली सौराष्ट्र रूपी गुणवान वनिताओं के द्वारा पूजित एवं उपास्यमान होता था जो उसके सार्वभौमिक चरित्र को प्रगट करता है ।

"नालीनालीकमेतन्न खलु समुदितो राजतो राजतोऽहं
पद्मापद्मासनाब्ज कथमनुहरतो मानवा मानवा ये ।
पृथ्व्याम् पृथ्व्यान्न मादृग्भवति हृतजगन्मानसे वा ।
भास्वान्भास्वान् विशेषं जनयति न हि मे वा सरो वासरो वा ।।[2]

अर्थात् (रजतकमल कहता है) — 'निश्चय ही मैं कमल हूं' यह मिथ्या नहीं है, किन्तु मैं वह कमल नहीं हूं जो सरोवर में विकसित होता हुआ शोभित हो रहा है अपितु मैं राजा द्वारा समर्पित किया गया शोभायमान रजतकमल हूं । हे मानवो ! लक्ष्मी और ब्रह्मा जी के कमल मेरी तुलना कैसे कर सकते है ? क्योंकि मेरी जैसी नवीनता उनमें नही है; वे तो बहुत पुराने हैं । दूसरी बात यह है कि मैं मानवी (मानवकृत) हूं किन्तु वे अमानवी (दैवी) हैं । इस

1. Gnoli, R., NIGC No. LXXXI, Ś. No. 16
2. Gnoli, R., NIGC No. LXXXI, Ś. No. 23

विस्तीर्ण फैली हुई पृथ्वी पर मेरे जैसा कमल न तो जगत् के किसी मनुष्य के हृदय में है, न ही किसी सरोवर में है। मुझ चमकते हुए दिव्य कमल में सूर्य अथवा दिन अथवा सरोवर ने ही कोई विशेष परिवर्तन या विकार उत्पन्न नहीं किया है अर्थात् सूर्य, दिन एवं सरोवर के बिना भी मैं सदैव देदीप्यमान (विकसित) रहता हूं।

गद्यकाव्य—

गद्य-काव्य की दृष्टि से नेपाली अभिलेखों का संस्कृत-गद्य साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान है। राजा शिवदेव प्रथम के अभिलेखों में अधिकतर उत्कलिकाप्राय गद्यशैली उपलब्ध होती है। जबकि राजा नरेन्द्रदेव तथा राजा जयदेव द्वितीय के अभिलेखों में उत्कलिकाप्राय तथा चूर्णक दोनों गद्य-शैलियों का मिश्रण प्राप्त होता है। सीमा निर्धारण अथवा राजाज्ञा-प्रसारण, भवन-जीर्णोद्धार आदि वर्ण्य-विषय को नेपाली अभिलेखों में असमस्ता गद्यशैली में वर्णित किया जाना मुक्तक गद्य शैली का परिचायक है। राजा जयदेव द्वितीय के 'नक्सल नारायण आजीविका शिलालेख' में आजीविका निर्धारण सम्बन्धी विषय की मुक्तक गद्यशैली में अभिव्यक्ति अत्यन्त प्रशंसनीय है—

'व्यवहारपरिनिष्ठितजातं द्रव्यस्य जपग्रपाञ्चालिकेन दातव्यम्। यस्तु द्रव्यं न प्रयच्छेत् स्वस्थानवास्तव्यस्यान्यस्थानीयस्य च धारणकस्यात्रैव रोधोऽपरोधो भवेत्।[1]

उत्कलिकाप्रायगद्यशैली—

नेपाली अभिलेखों में कम से कम १० अभिलेख ऐसे हैं जिनमें उदात्त चरित्र अथवा दार्शनिक विचारों को दीर्घ समासात्मक कोमलकान्त पदावली में चित्रित किया है। राजा नरेन्द्रदेव के कुमारामात्य प्रियजीवकृत "यैंगाहिटि लागनटोले त्र्यग्रहार शिलालेख'[2] में राजा के उदात्त चरित्र का वर्णन उत्कलिका प्राय शैली में है। जिस प्रकार महाकवि हरिषेण कृत 'इलाहाबाद समुद्रगुप्त प्रशस्ति स्तंभलेख' के आरम्भ में आठ तथा अन्त में एक श्लोक है इनके मध्य में एक ही वाक्य में समाप्त होने वाला एक दीर्घ गद्यांश है। उसी प्रकार राजा भीमार्जुनदेव के 'लागनटोलेकर दण्डमुक्ति शिलालेख[3] के आरम्भ में एक श्लोक है। तत्पश्चात् एक ही दीर्घकाय गद्यांश है जो एक ही वाक्य में

1. Gnoli, R.. NIGC No. LXXXIII, L. No. 30-37
2. Gnoli, R , NIGC No. LXVI, L. No. 1-2
3. Ibid, No. LXI, L. 3-26

समाप्त होता है। इस शिलालेख की गद्यशैली में लय एवं आनुप्रासिक संगीतात्मकता है। बाणभट्ट के गद्य की ही भाँति दीर्घ समासों के बीच-बीच में छोटे-छोटे वाक्यांश प्रयुक्त किए गए हैं जिसके कारण पाठक रुक-रुक कर अर्थ को हृदयङ्गम करने में समर्थ होता है। राजाओं के उदात्त चरित्र का हृदयस्पर्शी वर्णन अल्पसमस्ता चूर्णक गद्यशैली में उपलब्ध होता है।

शौर्य एवं वीरतापूर्ण भावों की अभिव्यक्ति परुष एवं सरस भावों की अभिव्यंजना में लघुसमस्ता कोमलकान्त पदावली का प्रयोग किया है राजा शिवदेव प्रथम के 'खोपासी कराज्ञा शि०' की निम्नलिखित पंक्तियों में राजा के शौर्यपूर्ण चरित्र के वर्णन में विषयानुकूल—भावानुकूल परुषवर्णबहुला ध्वन्यात्मक अल्पसमस्ता चूर्णक गद्यशैली का प्रयोग द्रष्टव्य है—

वो यथानेन स्वगुणमणिमयूखालोकध्वस्ताज्ञानतिमिरेण भगवद्भवपाद-पङ्कजप्रणामानुष्ठान तात्पर्य्योपात्तायतिहितश्रेयसा स्वभुजयुगबलोत्खाताखिल-वैरिवर्गेण श्रीमहासामन्तांशुवर्मणा मां विज्ञप्य मदनुज्ञातेन सता युष्माकं सर्व्वाधिकरणाप्रवेशेन प्रसादः कृतः।[1]

उपर्युक्त बातों से सिद्ध होता है कि नेपाली अभिलेखों का काव्यात्मक महत्व संस्कृत-साहित्य में देशकाल-वातावरण की विषम परिस्थितियों की दृष्टि से हरिषेण, वत्सभाई, बासुल आदि की कृतियों से अधिक प्रतीत होता है।

---

1. Gnoli, R., NIGG No. XXXI L. 5-7

छंगूनारायण स्तम्भ-लेख

यह अभिलेख श्री छंगूनारायण के मन्दिर में स्थित स्तम्भ के तीनों ओर उत्कीर्णित है।

संवत् ३८६ (३८६+७८+सन् ४६४ ई०)

I

१. संवत् ३०० ८० ६ ज्यैष्ठमासे शुक्लपक्षे प्रतिपदि
२. [रो] हिणीनक्षत्रयुक्ते, चन्द्रमसि मुहूर्ते प्रशस्तेऽभिजिति
३. [श्री] वत्साङ्कितदीप्तचारुविपु[ल] प्रोद्वृत्तवक्षस्थलः
४. [श्री] वक्ष :स्तनपद्मबाहु [विमल] सम्यक् प्रवृद्धोत्सवः।
५. [त्रै] लोक्यभ्रमयन्त्रवर्ति ⌣ ⌣ =व्यासङ्गनित्योऽव्ययः
६. [दो] लाद्रौ निवसञ्जयति-अनि [मि] षैरभ्यर्च्यमानो हरिः ।।१।।

---

१. अमरगुरुमपि प्रज्ञयोपहसद्भिरनेकक्रमागतैरसकृदालोचितनीतिशास्त्र-निर्म्मलमनोभिरलुब्धैः स्निग्धैः प्रबुद्धैश्चामात्यैः परिवृतः, समानवयो-विद्यालङ्कारैरनेकमूर्द्धाभिषिक्त-पार्थिवकुलोद्गतैरखिलकलाकलापालो-चन-कठोरमतिभिरतिप्रगल्भैः कालविद्भिः अर्थात् वह (शूद्रक) अनेक मन्त्रियों से, घिरा रहता था, जो अपनी प्रतिभा से बृहस्पति की भी खिल्ली सी उड़ाने वाले, वंश-परम्परा से अपने पदों पर स्थित और निरन्तर नीतिशास्त्र का मनन-चिन्तन करने से निर्मल-हृदय, निर्लोभी, हितचिन्तक तथा जागरूक थे। वह अनेक राजपूतों के साथ आमोद-प्रमोद में लगा रहता था, जो अवस्था, विद्या तथा आभूषणों में उसी के समान थे, विभिन्न श्रेष्ठ राजाओं के वंशों से उत्पन्न थे, अनेक कलाओं के मनन से परिपक्व बुद्धि तथा अत्यन्त प्रखर थे।

—कादम्बरीकथामुखम् पृ० १८ चौ० सं० सी० बा० १९७१

Inscription I.

PLATE III

१. चन्द्रमायुक्त रोहिणीनक्षत्रमय अभिजित नामक शुभ मुहूर्त में ज्येष्ठ-शुक्ल प्रतिपदा, संवत् ३८६ श्रीवत्स नामक शुभ चिह्न उसके चारु, तेजपूर्ण, विशाल एवं उन्नत वक्षस्थल पर अङ्कित है। उसके वक्षस्थल, हृदय एवं कर-कमल निर्मल हैं। विलास (आमोद-प्रमोद) में लक्ष्मी को सम्यक् रूप से अति प्रसन्न करने वाला है। मनोविनोद के लिए जो त्रिभुवन रूपी यन्त्र को गतिमान रखते हैं, जो निर्लिप्त शाश्वत एवं पूर्ण हरि दोलाद्रि (धौलागिरि) नामक स्थान पर निवास करते हुए देवगणों के द्वारा निर्निमेष अर्चित होते हैं, उन हरि की जय हो।

७. = =त्सा ‿ ‿ यप्रतापविभ [वैर्व्वर्भा] यामसंक्षेपकृत्
८. राजाभूद् वृषदेव इत्य [नुपमः स] त्यप्रतिज्ञोदयः।
९. यो रेजे) सवितेव दीप्तकिर[णैः] सम्यग्वृ[तः] स्वैः सुतैः
१०. विद्वद्भिर्ब्बहुगर्व्वितैरच [पलैः] = =विनीतात्मभिः ॥२॥

अपने कार्यों द्वारा वचन का पालन करने वाले अद्वितीय राजा वृषदेव थे जिन्होंने अपने वैभव एवं सम्पत्ति द्वारा दुःखों का निवारण किया। जिस प्रकार सूर्य अपनी दीप्त किरणों के द्वारा संसार में शासन करता है उसी प्रकार राजा वृषदेव अपने व्यवहारकुशल, विद्वान्, स्वाभिमानी, यशस्वी एवं विनीतात्मा पुत्रों की सहायता से शासन करता था।

११. [त] स्याभूत् तन (ए) यः समृद्ध [विष]यः संख्येष्वजेयोऽरिभिः
१२. [भूपः] शङ्करदेव इत्यय ‿ = =तिप्रदः सत्यधीः।
१३. =याविक्रमदानमानवि [भवै]र्ल्लब्ध्वा यशः पुष्कलम्
१४. = = = ‿ ररक्ष गामभि]मतैर्भृ]त्यै[र्म्मृ गे]न्द्रोपमः ॥३॥

३. उनके (वृषदेव) पुत्र राजा शङ्करदेव हुए जो समृद्धशाली राज्य के स्वामी थे, युद्धों में शत्रुओं के द्वारा अजेय थे। वह शान्तिप्रद, एवं सत्यबुद्धि वाला था। अपनी वीरता, दान, सम्मान एवं वैभव के द्वारा विपुल कीर्ति को प्राप्त करके उसने मृगराज के समान अपने अभीष्ट सेवकों (सेना, अनुचरादि) के द्वारा पृथ्वी (राज्य) की रक्षा की।

१५. [तस्या] पि उत्तमधर्म्मकर्म्मय ‿ = = ‿ विद् धार्म्मिकः
१६. [ध]र्म्मा [त्मा] विनयेप्सुरुत्त [मगुणः श्री ध] र्म्मदेवो नृपः।
१७. [ध] र्म्मेणैव कुलक्रमागत ‿ = = = ‿राज्यं महत्
१८. स्[फी]तीकृत्य नयेर्न्नृ र्पाषचरि [तैः सं] भाव्य चेतो नृणाम् ॥४॥

४. उसके भी उत्तम धर्म-कर्म सम्बन्धी श्रेष्ठ शास्त्रों के ज्ञाता धार्मिक, धर्मात्मा, विनयशील एवं उत्तम गुण सम्पन्न राजा श्री धर्मदेव थे। कुलक्रमागत रूप से चले आने वाले विशाल राज्य को धर्म के अनुसार ही प्राप्त कर अपने राजर्षि चरित एवं व्यवहार के द्वारा उसका विस्तार किया तथा लोगों के हृदय में संभावित आदर-सम्मान प्राप्त किया।

१९. [रे] जे स शुभिः सुरानु ⏑ ⏑ = = : सम्पन्नमन्त्रर्द्धिभिः
२०. = भावा ⏑ विशुद्धदेहहृदयश्चन्द्रद्युतिः पार्त्थिवः।
२१. [प] त्नी तस्य विशुद्धवंशविभवा[1] श्री राज्यवत्युत्तमा
२२. [प्रा] णा [नाम] भवत् [प्रिया] कुलगु[णै]र्ल्लक्ष्मीरिव[ा]ग्रचा हरेः ।।५।।

५. मन्त्रों, ऋद्धियों, सिद्धियों से सम्पन्न राजा के यशरूपी सूर्य की किरणें सुरलोक तक प्रकाशित होती थीं। वह धवल चन्द्र किरणों के समान विशुद्ध एवं निर्मल शरीर तथा हृदय वाला राजा था। उसकी पत्नी श्री राज्यवती उत्तम एवं विशुद्ध वंश से उत्पन्न थी। प्राणों से भी अधिक प्रिय थी। कुल गुणों में (कुलीन गुणों में अथवा कुलक्रमागत गुणों में अथवा गुणपुञ्ज में) हरि के आगे चलने वाली लक्ष्मी के समान थी।

२३. = = = ⏑ रतेर्य्यशोऽशुभिरिदं [ो]याभास्य कृत्स्नञ्जगत्
२४. याति स्म त्रिदिवालयं नरपतावुद्यानयात्रामिव
२५. प्रम्लाना ज्वरविह्वला कुलज = = नेकमन्दा तदा
२७. देवाहारविधिक्रियास्वभिरता तद्विप्रयोगात् पुरा ।।६।।

६. अपनी यश रूपी किरणों से सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करने वाली रानी पति के दिवंगत होने पर, मानो जैसे नरपति की उद्यान-यात्रा में जाती थी, वैसे ही वह भी देवलोक को चली जाएगी। पति के दिवंगत होने के कारण अत्यन्त मलिन, विरहरूपी ज्वर से विह्वल, उच्चकुलोत्पन्न रानी अनेक दुखों से सन्तप्त होकर उदास हो गई। अग्निदेव की आहार विधि-क्रिया में अभिरत होती हुई पति के वियोग से पहले ही वह स्वर्ग चली जाएगी अर्थात् स्वर्ग में पति के पहुंचने से पूर्व ही चली जाएगी।

---

१. उपनागरिका वृत्त्यनुप्रास

II

१. देवी राज्यवती तु तस्य नृपतेर्भार्य्याभिधाना सती
२. श्रीरेवानुगता भविष्यति तदा लोकान्तरासङ्गिनी ।[1]
३. यस्यां जात इहानवद्यचरितः श्रीमानदेवो नृपः
४. कान्त्या शारदचन्द्रमा इव जगत् प्रह्लादयन् सर्व्वदा ॥७॥

७. उस राजा की देवी राज्यवती नामक सती भार्या थी । वह लक्ष्मी के समान अनुगामिनी तथा लोकान्तर में पति की सङ्गिनी होगी । उससे उत्पन्न इस संसार में अनिन्दनीय चरित्रवाले श्रीमानदेव राजा थे जो मानो शारदीय चन्द्रमा की कान्ति के समान निर्मल चरित्र के द्वारा सदैव संसार को आह्लादित करते थे ।

५. प्रत्यागत्य सगद्गदाक्षरमिदं दीर्घं विनिश्वस्य च
६. प्रेम्णा पुत्रमुवाच साश्रुवदना यातः पिता ते दिवम् ।
७. हा पुत्रास्तमिते तवाद्य पितरि प्राणैर्वृथा किं मम
८. राज्यम् पुत्रक कारयाहमनुयाम्यद्यैव भर्त्तुर्गतिम् ॥८॥

८. दीर्घ श्वास छोड़ते हुए, गद्गद होकर पुत्र के पास लौटकर पुत्र को प्रेमपूर्वक अश्रुवदना रानी ने यह वचन कहा—

"तेरे पिता स्वर्गवासी हैं । हे पुत्र ! आज तुम्हारे पिता के विना मेरे प्राण व्यर्थ हैं अर्थात् जीवित रहना व्यर्थ है । अब मेरा क्या है ? हे पुत्र ! तुम राज्य करो, मैं आज ही पति के मार्ग का अनुसरण करूँगी ।"

९. किं मे भोगविधानविस्तरकृतैराशामयैर्बन्धनैः
१०. मायास्वप्ननिभे समागमविधौ भर्त्रा विना जीवितुम् ।
११. यामीत्येवमवस्थिता खलु तदा दीनात्मना सूनुना
१२. पादौ भक्तिवशान्निपीड्य शिरसा विज्ञापिता यत्नतः ॥९॥

९. अब आशारूपी बन्धनों के द्वारा आबद्ध इस विस्तृत भोग-विधान से मुझे क्या प्रयोजन है ? (अर्थात् अनन्त आशाओं के बन्धनों से युक्त सांसारिक भोगों से मेरा अब कोई प्रयोजन नहीं है) मायावी स्वप्नों के समान बने हुए सांसारिक समागम (आसक्ति) आदि की विधि में भर्त्ता के बिना मेरे जीवित रहने से क्या ? इसलिए मैं (पति के मार्ग का अनुसरण करती हुई) स्वर्ग जाती हूं, इस प्रकार कहकर स्थित हो गई, तब निश्चय ही दीनात्मा वाले पुत्र ने मातृभक्ति के वश होकर चरणों में शिर पटककर यत्नपूर्वक कहा—

---

१. परिकर अलंकार

१३. किं भोगैर्म्मम किं हि जीवितसुखैस्त्वद्विप्रयोगे सति
१४. प्राणान् पूर्व्वमहञ्जहामि परतस्त्वं यास्यसीतो दिवम् ।
१५. इत्येवम् मुखपङ्कजान्तरगतैर्न्नेत्राम्बुमिश्रैर्दृढं
१६. वाक्पाशैर्व्विहगीव पाशवशगा बद्धा ततस्तस्थुषी[1] ॥१०॥

१०. "तुम से वियुक्त होने पर मुझे सांसारिक भोगों से क्या ? सुखों के द्वारा मुझे जीवित रहने से क्या ? मैं अपने प्राणों का अन्त कर दूँगा । आपके स्वर्ग में जाने से पूर्व ही मैं चला जाऊंगा ।" नेत्र-जल के मिश्रित होने से गीली हो जाने के कारण पुत्र के मुख-पंकज से निस्सृत वाणी रूपी अत्यन्त दृढ़ पाश से मानो रानी विहगी के समान वशीभूत एवं आबद्ध होकर खड़ी की खड़ी रह गई ।

१७. सत्पुत्रेण सहौर्द्ध्वदेहिकविधिं भर्त्तुः प्रकृत्यात्मना
१८. शीलत्यागदमोपवासनियमैरेकान्तशुद्धाशया ।
१९. [वि]प्रेभ्योऽपि च सर्व्वदा प्रददती तत्पुण्यवृद्ध्यै धनं
२०. तस्थौ तद्धृदया सती व्रतविधौ साक्षादिवारुन्धती ॥११॥

११. सुपुत्र के साथ शील, त्याग, दम (इन्द्रियों पर नियन्त्रण) उपवासादि नियमों के द्वारा एकान्त शुद्ध विचार युक्त रानी ने स्वयं राजा की प्राकृतिफ ऊर्ध्व दैहिक विधि (दाह संस्कार क्रिया) को पूर्ण किया । पति की पुण्य-वृद्धि के लिए ब्राह्मणों को सम्पूर्ण धन दान में दे दिया । सतीव्रत-विधान में स्थिर रहकर वह अपने हृदय में उसी (पति) का ध्यान करती थी । मानो वह साक्षात् अरुन्धती थी ।

२१. [2]पुत्रोऽप्यूर्ज्जितसत्त्वविक्रमधृतिः क्षान्तः प्रजावत्सलः
२२. कर्त्ता नैव विकत्थनः स्मितकथः पूर्व्वाभिभाषी सदा ।
२३. तेजस्वी न च गर्व्वितो न च परां लोकज्ञतान्नाश्रितः
२४. दीनानाथसुहृत् प्रियातिथिजनः प्रत्यर्थिनो माननुत् ॥१२॥

---

1. A very large number of 'Praśastis' go to prove that in the fourth and sixth centuries, the Kāvya Literature was in its full bloom and that the kāvyas did not at all differ from those handed down to us."
   —*A Literary study of Bāṇa Bhaṭṭa*, p. 8 Dr. N. Sharma
२. उल्लेखालङ्कार

१२. उसका पुत्र भी उदात्त चरित्र (सात्त्विक व्यवहार वाला), पराक्रमी, धैर्यवान्, क्षमाशील एवं प्रजापालक है। अनात्मश्लाघी (अपनी प्रशंसा स्वयं न करने वाला), मितभाषी (हंसमुख अथवा कम बोलने वाला), दूसरे की अपेक्षा स्वयं दूसरों से पहले ही बोलने वाला अथवा दूरदर्शी है। वह तेजस्वी है किन्तु अहंकारी नहीं है और न ही परलोक का ज्ञाता है (अर्थात् मिथ्या ज्ञान वाला नहीं है) और न ही उन पर आश्रित है अथवा लौकिक ज्ञान वालों के आश्रित नहीं है), मित्रों का प्रिय है, अतिथियों का भक्त है, प्रार्थियों (याचकों) की इच्छाओं (प्रार्थनाओं) को पूर्ण एवं शान्त करने वाला है।

III

१. [1]अस्त्रापास्तविधानकौशलगुणैः प्रज्ञातसत्पौरुषः
२. श्रीमच्चारुभुजः प्रमृष्टकनकश्लक्ष्णावदातच्छविः।
३. पीनांसो विकचासितोत्पलदलप्रस्पर्द्धमानेक्षणः
४. [2]साक्षात् काम इवाङ्गवान् नरपतिः कान्ताविलासोत्सवः ॥१३॥

१३. रण में अस्त्रों को शान्त करने वाले विधान-कौशल गुणों के द्वारा जो ज्ञात सत्पौरुष (सात्त्विक धीरता) से युक्त है ऐसे श्रीमान् सुन्दर भुजाओं वाले शुद्ध करके चमकाए हुए स्वर्ण के समान उत्कृष्ट एवं लावण्ययुक्त छवि से युक्त हैं, पुष्ट कन्धों वाले हैं, अर्धविकसित नीलकमल-दल से स्पर्धा करने वाले नेत्र वाले हैं, जो साक्षात् कामदेव के समान सुन्दर अंगों वाला है, जो स्त्री को विलास में उत्सव के समान आनन्द देने वाला है।

५. यूपैश्चारुभिरुच्छ्रितैर्व्वसुमती पित्रा ममालङ्कृता
६. क्षात्त्रेणाजिमखाश्रयेण विधिना दीक्षाश्रितोऽहं स्थितः।
७. यात्रां प्रत्यरिसंक्षयाय तरसा गच्छामि पूर्व्वां दिशं
८. ये चाज्ञावशवर्त्तिनो मम नृपाः संस्थापयिष्यामि तान् ॥१४॥

१४. यह पृथ्वी यूपों (विजयस्तम्भों) से मेरे पिता के द्वारा अलङ्कृत की गई। निरन्तर यज्ञ के आश्रय से धर्म के द्वारा विधिपूर्वक मैं दीक्षा के आश्रित होकर सिंहासन पर स्थित हुआ हूं। शत्रुओं के विनाश के लिए शीघ्र

---

१. उल्लेखालङ्कार
२. उत्प्रेक्षालङ्कार

ही पूर्व दिशा में यात्रा को जाता हूं। जो जो राजागण मेरी आज्ञा के वशीभूत हैं उनको पुनः स्थापित करूँगा।

९. इत्येवञ्जननीमपेतकलुषां राजा प्रणम्योचिवान्
१०. नाम्बानृण्यमहन्तपोभिरमलैः शक्नोमि यातुं पितुः।
११. किं त्वाप्तेन यथावदस्त्रविधिना तत्पादसंसेवया
१२. यास्यामीति ततोऽभ्ययातिमुदया दत्ताभ्यनुज्ञो नृपः ॥१५॥

१५. इस प्रकार अपनी निष्पाप माता को प्रणाम करते हुए कहा—'हे माँ, मैं तुम्हारे विना पवित्र 'तपों के द्वारा भी पिता की बराबरी नहीं कर सकता। पिता के चरणों की सेवा के द्वारा यथावत् विधि से अस्त्र-विद्या को मैंने प्राप्त किया है, अतः मैं कुछ दिनों के लिए अवश्य प्रस्थान करूँगा। तत्पश्चात् माता ने अतिप्रसन्नता पूर्वक राजा को आज्ञा प्रदान की।

१३. प्रायात् पूर्व्वपथेन तत्र च शठा ये पूर्व्वदेशाश्रयाः
१४. सामन्ताः प्रणिपातबन्धुरशिरःप्रभ्रष्टमौलिस्रजः।
१५. नानाज्ञावशवर्त्तिनो नरपतिः संस्थाप्य तस्मात् पुनः
१६. निर्भीः सिंह इवाकुलोत्कटसटः पश्चाद्भुवञ्जगिमवान् ॥१६॥

१६. पूर्वपथ से वहाँ प्रस्थान किया और पूर्वदेश में आश्रित जो शठ सामन्त (विद्रोही सामन्त) थे उनके नमस्कार (प्रणाम) करने से जिनके शिर के मुकुटों की मालाएं गिर गई थीं, अपनी आज्ञा के वशवर्ती उन राजाओं को पुनः संस्थापित किया। तत्पश्चात् अपनी अयालों से व्याकुल निर्भीक सिंह के समान राजा ने पश्चिमी भुवन (दिशा या देशों) की ओर प्रस्थान किया।

१७. सामन्तस्य च तत्र दुष्टचरितं श्रुत्वा शिरः कम्पयन्
१८. बाहुं हस्तिकरोपमं स शनकैः स्पृष्ट्वाब्रवीद् गर्व्वितम्।
१९. आहूतो यदि नैति विक्रमवशादेष्यत्यसौ मे वशं
२०. किं वाक्यैर्ब्बहुभिर्वृथात्र गदितैः संक्षेपतः कथ्यते ॥१७॥

१७. वहाँ सामन्त के दुष्ट चरित्र को सुनकर अपने शिर को झटककर, हाथी की सूंड के समान अपनी भुजा को स्पर्श करते हुए उस गर्वित राजा ने इस प्रकार कहा—"यदि वह मेरे बुलाने पर नहीं आता है तो निश्चय ही वह मेरे पराक्रम के वशीभूत होकर आयेगा। यहाँ अधिक बात करना व्यर्थ है, मैंने संक्षेप में कह दिया है।

२१. अद्यैव प्रियमातुलोरुविषमक्षोभार्णवस्पर्द्धिनीम्
२२. भीमावर्त्ततरङ्गचञ्चलजलां त्वं गण्डकीमुत्तर ।
२३. सन्नद्धैर्व्वरवाजिकुञ्जरशतैरन्वेमि तीर्त्वा नदीं
२४. त्वत्सेनामिति निश्चयान्नरपतिस्तीर्ण्णप्रतिज्ञस्तदा ॥१८॥

१८. हे प्रिय मातुल ! आज ही इस विशाल, कठिन क्षोभार्णव की स्पर्धा करने वाली भयानक भंवरों एवं महातरंगों से तरङ्गायित चञ्चल जलवाली गण्डक नदी को पार करो । सन्नद्ध (तैयार) अश्वों एवं सैंकड़ों हाथियों के द्वारा नदी को पार करके मैं तुम्हारी सेना के पीछे आता हूं । इस प्रकार राज ने अपनी निश्चित की हुई प्रतिज्ञा का पालन किया ।

२५. जित्वा मल्लपुरीं ततस्तु शनकैरभ्याजगाम स्वकं
२६. देशं प्रीतमनास्तदा खलु...प्रादाद्द्विजेभ्योऽक्षयम् ।
२७. राज्ञी राज्यवती च साधुमतिना प्रोक्तां दृढं सूनु[ना]
२८. भक्त्याम्ब त्वमपि प्रसन्नहृदया दानं प्रयच्छस्व त[त्] ॥१९॥

१९. मल्लपुरी को जीतकर तत्पश्चात् क्षणभर में ही अपने देश में पहुंच गया । तब प्रेमपूर्वक मन से ब्राह्मणों को अक्षय धन दान में दिया और साधुमति पुत्र ने दृढ़तापूर्वक रानी राज्यवती से कहा, "हे माता तुम भी भक्तिपूर्वक प्रसन्न हृदय से दान दो ।

II

भूमिदानाभिलेख

यह अभिलेख छंगूनारायण मन्दिर के स्तम्भ के मूलाधार पर उत्कीर्णत पाया गया है। पूर्ववर्ती अभिलेखों की लिपि की अपेक्षा इसकी लिपि आंशिक रूप से नवीन प्रतीत होती है। यह अभिलेख किसी भूमि-भाग की स्वीकृति के सम्बन्ध में है।

१. — — — — — — — — ष —
२. — — — — — — — भट्टारक—
३. — — — — — — — — मानि ५०४
४. — दो — न मानि २०

III

विष्णुविक्रान्तमूर्ति अभिलेख

सम्वत् ३८९ (+७८=४६७ ई०)

यह अभिलेख भगवान् विष्णु की विक्रान्त मूर्ति के अधोभाग में उत्कीर्णित है जो पशुपति मन्दिर के निकट तिलङ्ग और वाग्मति नदियों के सङ्गम पर स्थित है।

१. मातुः श्रीराज्यवत्या हितकृतमनसः सर्व्वदा पुण्यवृद्ध्यै राजा[1] श्रीमान-
देवः शुभविमलमतिः पात्रदानाम्बुवर्षी।[2]

२. लक्ष्मीवत् कारयित्वा भवनमिह शुभं स्थापयामास सम्यक्
विष्णुं विक्रान्तमूर्ति सुरमुनिमहितं सर्व्वलोकैकनाथम्॥

१ए. संवत् ३०० ८०९

२ब. वैशाखशुक्लदिव २

सदैव पुण्यवृद्धि के लिये याचकों के पात्रों में दानरूपी जल की वर्षा करने वाले अथवा योग्य व्यक्तियों पर दान रूपी जल की वर्षा करने वाले, अपनी माता राज्यवती के प्रति कल्याणकारी मन वाले, शुभ एवं विमल बुद्धिमान् तथा लक्ष्मीवान् राजा श्रीमानदेव ने इस भवन को बनवाकर उसमें सम्पूर्ण देवों एवं मुनियों से श्रेष्ठ एवं सकल भुवन के एकमात्र स्वामी विष्णु की शुभ विक्रान्त मूर्ति को सम्यक् रूप से स्थापित किया। वैशाख शुक्ल द्वितीया सम्वत् ३८९।

---

१. Levi (I) संवत् ३००८०७ मातुः श्री राज्यवत्या ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑
नदेः सर्व्वदा पुण्यवृद्ध्यै राजा श्रीमानदेवश् शुभविमलमतिः (म्भा ⏑
– – (।) पातुदि ताम्बवाभुः

२. – – – दा ⏑ यित्वा नुतृहम् इह घ – स्था ⏑ याम् आस
सम्यक् विष्णुं विक्रान्तमूर्त्ति सुरमुनिमहितं सत्वलोकैकनाथम्॥
वैशाखशुक्ल – – –॥

१. शार्दूलविक्रीडित

२. परिणाम अलङ्कार, अत्युक्ति अलंकार

IV

शिवलिङ्गस्थापना शिलालेख

सम्वत् ३८८ (३८८+७८=४६६ ई०)

लाजनपाट में शिवलिङ्ग के अधोभाग में उत्कीर्णित पाया गया है। उत्कीर्णित भाग लगभग १०३ सै० मी० चौड़ा है। समय संवत् ३८८ (३८८+७८=४६६ ई०) है। अभिलेख वसन्ततिलका छन्द में है।

१. [1]**सौर्य्येण नीतिसहितेन विजित्य सम्यक् च**[2]
= ⏑ = ⏑ ⏑ ⏑ = ⏑ ⏑ = ⏑ = =।

२. **तस्याज्ञया शुभमतेश्शुभवृद्धिलिङ्गम्**
= . य. न भक्तिमहता नरवर्म्मनाम्ना॥
प्रसादस्य – नुरूप – ह प्र — — — — — — — — — —

१. ए. **संवत् ३०० ८० ८**

२. ए. **ज्येष्ठमासे शुक्लदिव १०, ४**

"अपने शौर्य एवं नीति के सहयोग से शत्रुओं को अच्छी प्रकार जीत कर और — — — — — उसकी आज्ञा से शुभ बुद्धि की शुभ वृद्धि के लिये बड़े भक्ति भाव से नरवर्म्मा नामक व्यक्ति ने राजा की कृपा (आज्ञा) के अनुसार शिवलिङ्ग की स्थापना की। संवत् ३८८ ज्येष्ठमास शुक्ल दिव चतुर्दशी।

---

१. साहस और सद्व्यवहार और अनवद्य व्यवहार से वह गुणशील कार्यों में व्यस्त हो गया और सफलतापूर्वक शासन करता रहा। उसकी अनुमति से एक नरवर्म्मा नामक भृत्य ने बड़े भक्तिभाव से एक उपयुक्त सुन्दर मन्दिर का निर्माण किया और इसमें संवत् ३८८ ज्येष्ठ मास शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को भगवान शङ्कर की मूर्ति-स्थापना का उद्घाटन समारोह किया।

—Regmi D. R. *Inscription of ancient Nepal, page 5*
Abhinav Publication New Delhi 1983

२. वसन्ततिलका

V

इन्दलदेवी शिलालेख

सम्वत् ३९९ (+७८=४७७ ०ई)

यह अभिलेख कठमण्डू के विशालनगर में इन्दलदेवी के मन्दिर में एक मूर्ति के अधोभाग में उत्कीर्णित है।

१. **संवत् ३०० ९ ० ९ ज्येष्ठमासे शुक्लदिव २ ॥**

अर्थ—सम्वत् ३९९ ज्येष्ठमास शुक्ल द्वितीया।

पशुपतिरत्नेश्वरस्थापना-दानक्षेत्र-अभिलेख

यह अभिलेख पशुपति-मन्दिर के निकट देवपाटन में पाटातोले (पाटाटोले) के समीप शिवलिङ्ग के अधोभाग में उत्कीर्णित पाया गया है। समय—संवत् ३९९ (३९९+७८=सन् ४७७ ई०) है।

१. महेन्द्रसमवीर्य्यस्य कन्दर्प्पसदृशद्युतेः।
राज्ञः श्रीमानदेवस्य सम्य[क् पा]लयतः प्रजाः॥

२. तत्पादभक्त्या विधिवद् रत्नसंघेन सर्व्वदा।
रत्नेश्वरः प्रयत्नेन स्थापितोऽयं सुरोत्तमः॥

३. भगवते रत्नेश्वराय रत्नसंघेन दत्तं क्षेत्रं यथा
दुंलङ्ग्रामप्रदेशे पञ्चानां शतानां भूमिः ५०० खैपुङ्ग्रामप्रदेशे षण्णां शतानां भूमिः ६०० दुंप्रङ्ग्रामप्रदेशे शतस्य भूमिः १०० ह्मस्प्रिङ्ग्राम-प्रदेशे द्व्यर्द्धस्य शतस्य भूमिः २००५०

४. विलिविक्षप्रदेशेऽर्धतृतीयस्य भूमिः ३०० ५० वाग्वतीपारप्रदेशे शत-द्वयस्य भूमिः २०० वेम्मायामशीत्युत्तरस्य शतस्य भूमिः १०० ८० खैनष्पुप्रदेशे नवत्या भूमिः ९०

५. — — — प्रदेशे — — — — — — — — — — — —
भूमिः १०० -

१अ. संवत् ३०० ९० ९

२अ. आषाढमासे

२अ. शुक्लदिव

राजा इन्द्र के समान पराक्रमी, कामदेव के समान लावण्ययुक्त राजा मानदेव सम्यक् रूप से अपनी प्रजा का पालन करते थे। रत्नसङ्घ ने सदैव उस (राजा) के चरणों की कृपा से विधिपूर्वक एवं प्रयत्नपूर्वक इस रत्नेश्वर नामक सुरोत्तम की स्थापना की। रत्नसङ्घ ने भगवान रत्नेश्वर के लिये क्षेत्र दान दिया जैसे कि दुंलङ्ग्राम प्रदेश में ५०० भूमि, खैपुङ्ग्राम प्रदेश में ६०० भूमि दुंप्रङ्ग्राम प्रदेश में १०० भूमि, ह्मस्प्रिङ्ग्राम प्रदेश में २५० भूमि, बिलिविक्ष प्रदेश में ३५० भूमि, वाग्वतीपार प्रदेश में २०० भूमि, वेम्मा में १८० भूमि, खैनष्पु प्रदेश में ९० भूमि — — — प्रदेश में —
भूमि १०० आषाढ़ मास शुक्ल दिव संवत् ३९९

VII

भगवान इन्द्रशिलालेख

संवत् ४०२ (सन् ४८०)

यह अभिलेख लगभग ६० सै. मी. चौड़ा है। यह शिलालेख भूमि में नीचे गढ़ा हुआ है जिसके कारण यह पूर्ण रूप से नहीं पढ़ा गया है।

संवत् ४०२ (४०२+७८=४८० ई०)

१. [संव]त् ४०२ राज्ञः श्रीमानदेवस्य सम्यक् पालयतो महीम्।
आषाढशुक्लस्य तिथौ पञ्चदश्यां शुभार्थिना ॥
२. वणिजां सार्थवाहेन गुहमित्रेण भक्तितः।
संस्थापितोऽत्र भगवान् इन्द्रो नाम दिवाकरः ॥
क्षेत्रं यथा गुम्पढ्शुंप्रदेशे
३. शतस्य भूमिः पिण्डकमानि च।

बहाल स्थित भगवान् इन्द्र संवत् ४०२ में राजा मानदेव पृथ्वी का ठीक प्रकार से पालन कर रहे हैं। आषाढ़ शुक्ल पञ्चदशी (पूर्णमासी) के दिन अपने वाणिज्य में शुभ की इच्छा से गुहमित्र सार्थवाह ने भक्तिपूर्वक दिवाकर नाम से भगवान् इन्द्र की यहाँ स्थापना की।

गुम्पढ्शुं प्रदेश में जैसा कि क्षेत्र है—१०० भूमिपिण्डकमानि।

VIII

पशुपति जयेश्वरलिङ्गस्थापना-अभिलेख

संवत् ४१३ (सन् ४६१ ई०)

यह अभिलेख पशुपति-मन्दिर के उत्तरी द्वार के सम्मुख स्थित शिवलिङ्ग के अधोभाग में उत्कीर्णित है।

१. ओ३म् संवत् ४०० १०३ श्रीमानदेवनृपते[1]श्चरणप्रसादात्
भक्त्या विशुद्धमतिना जयवर्म्मनाम्ना।
लिङ्गं जयेश्वरमिति प्रथितं नृलोके
२. संस्थापितं सनृपतेर्ज्जगतो हिताय।।
भगवतोऽस्य लिङ्गस्य कारणपूजाय[2]—स— — — —यस्य पुण्या-
प्यायनार्थं दत्तं अक्षय [नीवी]
३. — — — — — — — क्र — — ज्येष्ठशुक्ल — — —[3]

ॐ संवत् ४१३ राजा श्री मानदेव की चरण कृपा से भक्ति पूर्वक शुद्ध मति के द्वारा जयवर्मा ने इस विस्तृत नरलोक (भूलोक) में जयेश्वर नाम से विख्यात लिङ्ग को राजा और जगत् के हित के लिये स्थापित किया।

इस भगवान लिङ्ग की कर्ण-पूजा (कारण पूजा) के लिये और अपनी पुण्यप्राप्ति के लिये अक्षय नीवि को प्रदान किया। — — — — — — — क्र — — ज्येष्ठ शुक्ल — — — —।

---

१. वसन्ततिलका छन्द

२. ह्वूलर पढ़ते हैं—कारणपूजा[यै]— — — — —तायस्व— — —येनात्थं।।

३. ह्वू० I तृतीय पंक्ति को नहीं पढ़ते हैं।

IX

छंगूनारायण पितृमूर्ति स्थापना शिलालेख

संवत् ४२७ (सन् ५०५ ई०)

यह अभिलेख छंगूनारायण-मन्दिर के प्रवेश द्वार के दाहिनी ओर अधा-भाग में उत्कीर्णित है।

१. संवत् ४०० २०७ कार्त्तिकशुक्लदिव १०, ३ दातर्य्यतीव विदुषि प्रथितप्रभावे श्रीमानदेवनृपतौ जगतीं भुनक्ति।

२. तस्यैव शुद्धयशसश्चरणप्रसादात् पित्रोः कृताकृतिरियं निरपेक्ष-नाम्ना ।।
कृत्वा च तां विधिवदत्र यदस्ति पुण्यम्

३. पुण्येन तेन पितृदैवतभागिनो मे।
पित्रोः प्रवासगतयोर्ध्रुवमस्तु योगः
अन्यत्र जन्मनि विशुद्धवतीति कृत्वा ।।

संवत् ४२७ कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी के दिन दाताओं में अत्यन्त विद्वान, प्रसिद्ध प्रभाव वाले श्रीमानदेव महाराज के पृथ्वी का भोग करते हुए उसके ही यश और चरण-कीर्ति-कृपा से पिता की आकृति के समान इस पुण्यमयी मूर्ति को बिना किसी नाम के बनाकर उसे विधिवत् स्थापित किया और उसके पुण्य से मैं पितृभक्ति का भागी हुआ। यह (मूर्ति) दूसरे जन्मों में भी मेरे पितृभक्त जीवन को ऐसा ही विशुद्ध बनायेगी। इस समय पिता के ठीक स्वर्ग-प्रस्थान का योग है।

X

देवपाटन शिवलिङ्ग अभिलेख

यह अभिलेख देवपाटन में पशुपति-मन्दिर के निकट एक घर में शिव-लिङ्ग की चौकोर आधारशिला के ऊपर उत्कीर्णित है। संवत् अभिलेख में अपठनीय है।

१. **संवत् — —४— माघशुक्लपक्षदिव १०३ श्रीमानदेवनृपतेश्चरण-प्रसादात् = = ⏑ = रु ⏑ = लर रत्नसंघः।**

२. **= = ⏑ = ⏑ ⏑ ⏑ नः प्रभुसंघनाम्नः लिङ्गाश्रिताकृति-रियं जगतो हितार्थे प्रभुकेश्वरस्य क्षेत्राभिलेख्यं यथा प्रंप्रिप्रदेशे — — — — — —**

३. **— — —[प्र]देशे [प]ञ्चाश [तो भूमि ५०] पिण्डकम् मानिकाः २०२ मैंशिप्रदेशे चत्वारिंशतो भूमि ४० पिण्डकं मानिकाः २० वोत-वोरुषो प्रदेशे षष्टेर्भूमि [६०] — — —**

४. **— — —प्रदेशे त्रिंशतो भूमि ३० पिण्डकं मानिकाः १०८ सीता-टीजोल्प्रि प्रदेशे चत्वारिंशतो भूमि ४० पिण्डकं मानिका २० प्रयिट्टिर-वाप्रदेशे त्रिंशत्तरस्य—त—**

५. **पिण्डकं मानि ७० २**

संवत् (४.३)४ माघ शुक्ल त्रयोदशी के दिन, श्रीमानदेव राजा के चरणों की कृपा से रत्नसङ्घ ने— — —प्रभुसङ्घ नामक लिङ्ग के आश्रय से यह मूर्ति (कृति) जगत् हितार्थ स्थापित की। जैसे प्रंप्रि प्रदेश में प्रभुकेश्वर के क्षेत्राभिलेख को ५० भूमि, २०२ पिण्डकमानिक, मैंशि प्रदेश में ४० भूमि, २० पिण्डमानिक, वोतवोरुषो प्रदेश में ६० भूमि — — — — — — प्रदेश में ३० भूमि १८ पिण्डक मानिक, सीताटीजोल्प्रि प्रदेश में ४० भूमि २० पिण्डक मानिक, प्रयिट्टिरवा प्रदेश में १३० (भूमि) ७२ पिण्ड मानि।

XI

हरिगाँव-द्वैपायन-स्तोत्राभिलेख

यह अभिलेख हरिगाँव नामक गाँव के पूर्व में लगभग दो सौ मीटर की दूरी पर स्थित है। शिला का लगभग २८ सें० मी० चौड़ा भाग अभिलिखित है। यह अभिलेख शैली की दृष्टि से राजा मानदेव अथवा राजा वसन्तदेव कालीन प्रतीत होता है। महाकवि अनुपरमकृत ये ३४ श्लोक अत्यन्त हृदय-स्पर्शी, दार्शनिक एवं साहित्यिक हैं। श्लोक १-६ तक श्लोक छन्द, ११-२० तक उपजाति, २१वाँ श्लोक रुचिरा, २२-२३, तक श्लोक शिखरिणी, २४-२५ श्लोक प्रहर्षिणी, २६वाँ श्लोक मञ्जुभाषिणी, २७-२८ श्लोक तथा ३२-३४ श्लोक मालिनी, २९-३० श्लोक स्रग्धरा एवं ३१वाँ श्लोक रुचिरा छन्दों में लिखे गये हैं।

१. — — — — — — — — — — —ष यतात्मने।
२. — — — — — — — — — — —धियैष ते नमः ॥१॥
३. — — — — — — — — — — —प्रतिदेहनिमृ-।
४. — — — — — — — — — — — —निकीर्ण्णभानुना ॥२॥
५. — — — — — — — — — — — —सर्व्वमात्मनि।
६. — — — — — — — — — — — —शिनीवक्रान्तर् ॥३॥
७. — — — — — — — — — — — येन तेजसा।
८. — — — — — — — — — — — —वितेव भासते ॥४॥
९. — — — — — — — — — — — —पथेन सौगताः[1]।
१०. — — — — — — — — — — — — — —त्पतिर्भवैः ॥५॥
११. — — — — — — — — — — — — — — — — —या।
१२. — — — — — — — — — — — — — — — —र्यंत ॥६॥
१३. — — — — — — — — — — — — — — —न वारणे।
१४. — — — — — — — — — — — — — — — —दरुग्नम् ॥७॥

---

१. लै० सौगतः

१५. — — — — — — — — — — — — — — —स प्रबुद्धच ।
१६. — — — — — — — — — — — — — — — —जेयुः ॥८॥
१७. मार्तण्ड[1] — — — — — — — — — — — — — — ।
१८. — — रये — — — — — — — — — — — —मित्थ ॥९॥
१९. — — — करणाहतेन[2] नित्यम् — — — — — — — — ।
२०. — —किमिह स्वस्तिवाच्यशेष— — —कथितन्न— — — —
— — — ॥१०॥
२१. ⏑–=परान्नास्तिकतां प्रपन्नैस्त्रयीनिरोधि[3] ⏑– ⏑– = ⏑–=णः ।
२२. ⏑–=व्य= =व्यन नाद्य लोके धर्म्मा–स्यो[4] यदि न भविष्यः ॥११॥
२३. ⏑–=–वेदं प्रतिकीर्ण्णवाक्त्ववादनादिनिष्ठं ⏑–⏑–=⏑–=ष च ।
२४. ⏑–=कथं वेद इहाभविष्यत् त्वं भारतीदि यदि ना [रचि[ष्यः ॥१२॥
२५. [प्र]माणशुद्धचा विदितार्त्थतत्त्वः प्रकम्प्यमानम्[5] ⏑–⏑–=⏑–=
ष्ठैः ।[6]
२६. –[ध]र्म्ममित्थं जयतो हितैषी न प्रातनिष्यद् यति=⏑–= = :
॥१३॥
२७. ⏑=ष्यमात्राश्रयणादभीक्ष्णं कुतार्किककैस्त ⏑–=⏑–⏑–=ण ।
२८. ⏑=व्यचैषीन्न पृथक् प्रमाणं कथं तदस्यातुमिह =⏑–=पः ॥१४॥
२९. ⏑=पि च प्राणवियो हेतुर्न्न प्रत्यवाय ⏑–⏑–=⏑– यैषा ।
३०. ⏑=त्वमेव प्रतिवेत्सि सम्यङ् न वेदितान्यो भुवि कश्चि[दस्ति][7]
॥१५॥
३१. ⏑=स्तुति स्यादनुवादतो वा स्तुत्येषु वाचाम् द्वितय[8]।⏑= = ।
३२. [स्तु]तिर्गुणानां विधिना न सत्वान्न चानुवादस्त्वयि = ⏑– = =
॥१६॥

---

१. लै० निषेध करते हैं ।
२. लै० (क)रण-गेन ॥
३. लै० निरोधिभिर्
४. लै० धर्म्मभिस्तन्यो ॥
५. लै० माणम् ॥
६. लै० ष्ठ ॥
७. लै० कश्चि[द] ⏑ ⏑ ॥
८. लै० द्वित[या] ॥
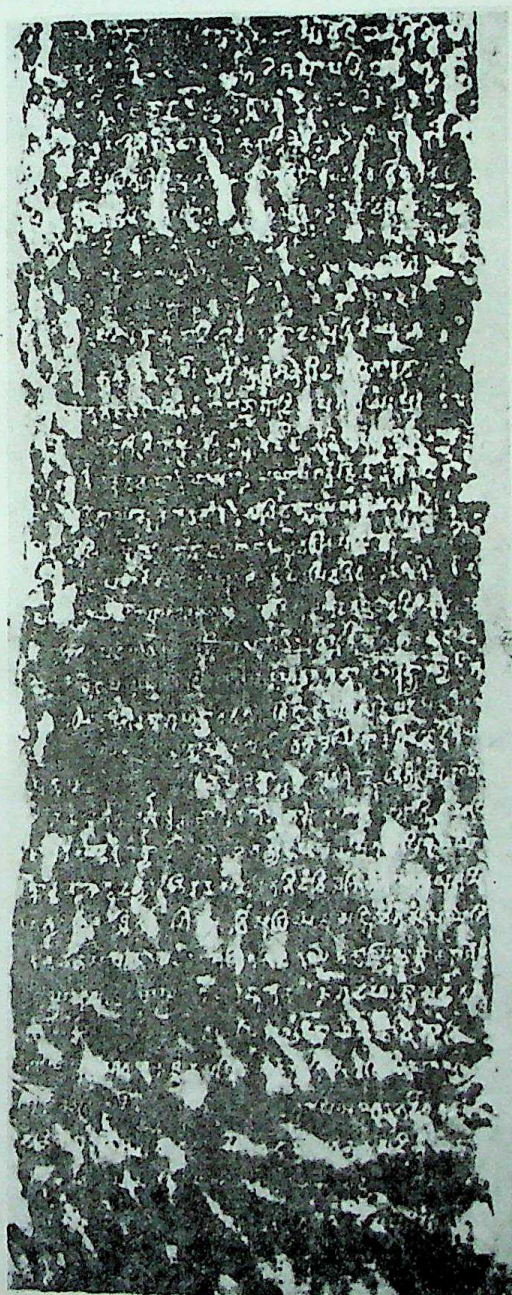
Inscription XI.

३३. ⏑—न धर्म्मं सकलं न्यहिंसीस्त्वन्नैव रामादिरयं न्य — — (।)

३४. ⏑—णीम् वैषयिकीञ्च तृष्णां विधूय शुद्धस्त्वमिति ⏑ — — ॥१७॥

३५. ⏑—⏑कामाद्यविविक्तरूपं यदि व्यवारिष्यत[10] —⏑— — ।

३६. ⏑—स्मृतीनामगतेः श्रुतीनां तद्द्य लोके नियतं व्य—⏑[11] ॥१८॥

३७. [वि]पाट्य मोहानमृतं व्यसृक्षत् स्वयञ्च धर्म्मादि जगत्यतीष्ठत् ।[12]

३८. —⏑त्वयागाज्जगति प्रतिष्ठान्त्वमेव धर्म्मं विविधानतिष्ठि[13] ॥१९।

३९. ⏑— —वत् दुष्प्रतिपादमेतत् स्वर्ग्गादि शब्दोपनिबन्धमा[त्रम्] ।

४०. — — ⏑दस्तीति जनो ग्रहीष्यद् भवानिहैवं यदि न व्यनेक्ष्यत्[14] ॥२०॥

४१. ⏑ — ⏑ ता कुमतिभिरंहसावृतैः कुतर्क्किककैः कथमपि सौगतादिभिः] ।[15]।

४२. ⏑ — [त]वयि प्रथितगिरि प्रभावियम्[16] पयोनिधौ सरिदिव* विन्दति[17] स्थितिम् ।

४३. ⏑— — — — —द् विनियतपादार्थाद्यनुगमात् तव श्रुत्वा काव्यं सपदि मनुषागस्य ⏑ ⏑ — (।)

४४. ⏑— — —र्थ —द ⏑ ⏑ [18]परमार्थानुसरणे दधात्युच्चैर्म्मोहं सपदि गतविद्येष्टनि[19] ⏑— ॥२२॥

४५. ⏑ — — — शास्त्रे मनुयमबृहस्पत्युशनसां विधानं कृत्यानामसुगमपदां[20] लोक ⏑⏑— ।

---

१०. लै० व्यवारिष्यत् के पश्चात् लुप्त वर्णाङ्क नहीं लगाते ।

११. लै० व्यशक्

१२. लै० अतिष्ठ[त्] ॥

१३. लै० विधिनान्वतिष्ठ[:]

१४. लै० [व्यनक्ष्यत्] ॥

१५. लै० सौगतैर् ॥

१६. लै० अनिश्चित हैं

१७. लै० विन्दते

१८. लै० ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ (र्थत्वादहन) ॥

१९. लै० विद्येष्टनि

२०. लै० कृत्यानामश ⏑ ⏑ पदां ॥

४६. ⏑ = = = नेवं प्रतिविषयमाधूय निपुणंफलेनैवाशेषं त्वमिदंमम = = ⏑ ⏑ ⏑ = ।।२३।।

४७. = = = न् नृपचरितानुवादिभावात् पादादेः[२१] प्रतिनियतन्ततश्च काव्यम् (।)

४८. = = = [२२]र नुकथनादपीह शास्त्रं त्वं शक्तेरिदमपि भारताद्य-कार्षी [:] ।।२४।।

४९. = = = भवजलधौ विवर्त्तमानान् रागादिप्रपतधियः प्रगाढ़ मो[हान्] (।)

५०. = =यास्त्विमिति[२३] विधाय मुक्तिमार्गं साचीनाम्[२४] भुवि पुरुषा-ङ्कुरोषि मन्त्रैः ।।२५।।

५१. सु[खिना][२५] विविक्तवचसा त्वया सता कृपया परार्थविनिवेशि-बुद्धिना ।

५२. ज[ग]तो हिताय सुकृते ह भारते भुवि वाङ्मयं सकलमेव दर्शितम् ।।२७।।

५३. विदितविविधधर्म्मो वेदिता वाङ्मयानान्निरवधिकमिथ्याशान्त-रागादिदोषम् ।[२६]

५४. ⏑ ⏑ ⏑ र व परार्थस्तद् भावान् मोहजालन्तिमिरमिव विवस्वान् अंशुभिः प्रक्षिणोति ।।२७।।**

५५. प्रतिविषयनियोगात् पालकत्वाच्च तासान्निपुणतदवबोधात् तद्वि-वेकाददोषा[त्] (।)

५६. जगति तदुपदेशात् त्वं मिथस्तद्विभोगादुपहित[२७] इव मूर्त्तिस्त्र्यात्मनामत्र वाचाम्[२८] ।।२८।।***

---

२१. लै० पाठादेः ।।

२२ लै(ते)र् ।।

२३. लै० यस्तम्

२४. लै० जाचीनाम्

२५. लै० निषेध करते हैं ।

२६. लै० अमित्थ्याशाङ्गरादिदोष(म्)

२७. लै० उपचित ।।

२८. त्र्यात्मना मन्त्रवाचाम् ।।

५७. सौक्ष्म्या[२९] दुर्व्वोधमीशं स्थितमपि सकलं लोकमावृत्य तन्वा वाग्बुद्ध्योरप्यतीता—

५८. कथमपि (करमपि) मुनिभिः स्वागमाद् याततत्वम् (।) विद्यारूपं विशुद्धे[३०] पदमनतिशय—

५९. क्षीणसंसारबन्धं स्यादात्मानन्न जातु त्वमिव कथयिता कश्चिदन्यो द्वितीयः ॥२९॥

६०. प्रत्याधारस्थितत्वात् पृथगपि न पृथक् तत्स्वरूपाविशेषात् नित्यं धर्म्मैरयोगा—

६१. त् पुनरपि न तथा सर्व्वकालाप्रतीतेः (।)[३१] नाशोत्पादाद्ययोगात् स्थितमपि—

६२. जगतस्सर्व्वगं व्यापिभावात् चैतन्यं रूपपक्षस्थितमपि कथये—

६३. त् को नु लोके त्वदन्यः ॥३०॥ निरंहसं दुरितमिदं विवेकिनं तमोमुषं शमि—

६४. तभवं विपश्चितम् । गिराम्पतिं सुधियमसङ्गिचेतसं मयोदि —

६५. तं वचनमुपैतु ते सदा* ॥३१॥ शमितभवभयेन क्षायिणाज्ञानराशेः

६६. स्वयमुपहितधाम्ना वेद्यपारङ्गतेन । जगदपरजसेदं तत् त्व

६७. या सर्व्वमाराद् वियदिव तिमिराणां क्षायकेनावभाति[३२] ॥३२॥

६८. गुणपुरुषविवेकज्ञानसम्भिन्नजन्मा व्यतियुतविषयाणां त्वं

६९. गिरां संविवेकी । जगति घनविरूढव्यापिसम्मोहभेदी च्युतजग—

७०. दनिरोधः खे शशीव चकास्सि ॥३३॥ तदहमिति नुनूषद् भिन्न-संसार-—

७१. बन्धम् वितमसमरजस्कं त्वाङ्गरीयांसमाद्यम् । कथमपि परि—

७२. लघ्वीं[३३] स्वान्निबध्नामि वाचम् तदिह पितरि मे त्वं संपदस्सम्विध-त्स्व ॥३४॥

---

२९. सौक्ष्म्याद्

३०. विशुद्धेः

३१. लै० सर्वकालप्रतीतेः

३२. क्षायकेण

३३. लै० परलघ्वीम्

७३. भगवतो द्वैपायनस्य स्तोत्रङ्कृतमनुपरमेण ।।[1]

(१) — — — — — — — — — — — —संयत आत्मा से

(२) — — — — — — — — — — —बुद्धि के द्वारा यह तेरे लिये नमस्कार हो।

(३) — — — — — — — — — —प्रत्येक जीवित देहधारी को।

(४) — — — — — — — — — — —प्रसारित भानु के द्वारा

(५) — — — — — — — — — — — —सर्वात्मा में

(६) — — — — — — — — — —शारदीया चन्द्रमा के समान

(७) — — — — — — — — — — — — जिससे

(८) — — — — — — — — — — —सूर्य के समान देदीप्यमान होता है ।।४।।

(९) — — — — — — — — — — —मार्ग से सुपथगामी जन।

(१०) — — — — — — — — — — — —ध्वनि और शब्दकोश के पारङ्गत

(११) — — — —आपके द्वारा तीन — — —

(१२) — — — — — — — — — — — — — — — — —जो ।।६।।

(१३) — — — — — — — — — — — — —— न रोकने में।

(१४) — — — — — — — — —विदीर्ण कर दिया ।।७।।

(१५) — — — — — — — —वह जाग्रत हो करके

(क) असंगति अलंकार

1. (क) In the time of Lichhavis, arts and literature had made progress. Sanskrit language was prevalent and most of the inscriptions were written in Sanskrit and used Gupta script. The learned people were respected in the palace and courts The Court-poets like Yama, Uśanas, Bṛhaspati and Anuparama flourished.
—A short History of Nepal, by Netra B. Thapa p. 34.

(ख) The Lichhavis of Napal were considerably influenced by the culture of the Gupta period. This is evident in their inscriptions which closely follow the terminology of Guptas.
Studies—The History and Culture of Nepal. By Lallan ji Gopal & Thakur Prasad Verma, Bharati Prakashan, Varanasi, 1977.

(१६) — — — — — — — —विजयी होना चाहिये ॥८॥

(१७) —सूर्य— — — — — — — — —.

(१८) — —प्रवाह में (उत्कण्ठा में) — — — — — — — —
इस प्रकार ॥९॥

(१९) — — —सदैव सम्मानित साधन से— — — — — — — —
— — — — — ।

(२०) — —ज्ञान के क्षेत्र में जो कुछ कल्याणकारी कथनीय बातें शेष रह गई हैं, वे सब आपके द्वारा बतला दी गई हैं (इसमें कोई संशय नहीं है) ॥१०॥

(२१) — — वेदत्रयी के विरोधी परम नास्तिक जनों का आपने निरोध किया। — — — — —

(२२) — — —यदि आप नहीं होते तो आज संसार में धर्म के आदेशों की स्थापना न होती ॥११॥

(२३) — — — अनादिनिष्ठ वेद के प्रति विस्तृत वाणी वाला होने के कारण अर्थात् अनादिनिष्ठ वेदों को आपने अपनी वाणी से संसार में प्रसारित किया — — ।

(२४) — — यदि आप महाभारतादि न रचते तो यहाँ (पृथ्वी पर) वेदों का अस्तित्व कैसे होता ? ॥१२॥

(२५-२६) शुद्ध प्रमाण के द्वारा सर्वविदित तत्त्वार्थ (आध्यात्मिक ज्ञान) समाज में प्रकम्पित एवं संदिग्ध हो रहा था तब आपने यदि विश्व के हितकारी धर्म को न प्रसारित किया होता तो तत्त्वार्थ (संसार में स्थायी एवं स्थिर न होता) ॥१३॥

(२७) — —कुतार्किक लोग निरन्तर मिथ्याज्ञानोन्मुख होकर सत्य का प्रतिकार कर रहे थे — —

(२८) — —उनको दूर करते हुए — —पृथक् प्रमाण में होने से — — —फिर यहाँ उसका अस्तित्व स्थिर कैसे हो सकता है ? — ॥१४॥

(२९) — —और प्राण वियोग का हेतु भी व्यवधान नहीं है — — — ।

(३०) — —तू ही प्रत्येक वस्तु को सम्यक् रूप से जानने वाला है इस संसार में अन्य कोई भी ज्ञाता नहीं है ॥१५॥

(३१-३२) — लोगों की प्रशंसा प्रायः दो विधियों से होती है अनुवाद के द्वारा अथवा अपनी मौलिक वाणी द्वारा। किन्तु गुणों की स्तुति तुम में न तो अनुवाद की विधि से ही और न वाणी की दृष्टि से देखी जाती है।

(३३) ⏑=रागादि बुराइयों एवं सम्पूर्ण पापों को आपने दूर किया है — —।

(३४) ⏑=विषयों की तृष्णा से दूर होकर आप अत्यन्त पवित्र हैं ॥१७॥

(३५) ⏑ = ⏑ धर्मार्थ कामादि प्रत्येक के सिद्धान्तों को आपने अलग-अलग रूप से व्यवहृत किया।

(३६) ⏑=आपके द्वारा निर्दिष्ट, आज भी उनके सिद्धान्त स्मृतियों एवं श्रुतियों के अनुसार संसार में नियत हैं।

(३७) अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिये ज्ञानामृत का सृजन किया और स्वयं जगत् में धर्मादि को स्थापित किया।

(३८) = ⏑आपने ही विविध याज्ञिक प्रतिष्ठाओं तथा धर्म को संसार में प्रतिष्ठित किया।

(३९) ⏑॥(='स्वर्ग' शब्द शब्दोपनिबन्ध मात्र था अर्थात् अपने शाब्दिक अर्थ तक ही सीमित था उसके दुष्प्रतिपादनीय वास्तविक स्वरूप एवं अर्थ को आपने प्रतिपादित किया।

(४०) = = ⏑ यदि आप यहाँ पर उसके वास्तविक स्वरूप एवं अर्थ की गवेषणा न करते तो लोग 'स्वर्ग' के शब्दार्थ को ही ग्रहण करते।

(४१-४२) — ⏑ = कुमतियों, दुराचारियों, कुतार्किकों एवं किसी भी प्रकार बुद्धानुयायियों के वेद विरुद्ध विचार रूपी कंकड़-पत्थर आपके विस्तृत आध्यात्मिक प्रभाव रूपी पर्वत में उसी प्रकार विलीन हो गये जिस प्रकार सरित् महासागर में विलीन होकर समाधि स्थिति को प्राप्त हो जाती है ॥२१॥

(४३) ⏑ = = = = = =नियमित पदार्थ का अनुगमन करने से आपके काव्य को सुनकर मनुष्य शीघ्र ही अगम्य अर्थ को समझने में समर्थ हो जाता है अर्थात् आपके काव्य में शब्द-विन्यास अत्यन्त सुबोध एवं भावानुकूल है।

(४४) — — — —परमार्थ के अनुसरण (खोज) में मनुष्य शीघ्र ही इष्ट ज्ञान से दूर उच्च मोह को धारण कर लेता है ।।२२।।

(४५) = = = =शास्त्र में मनु, यम, बृहस्पति उशनस् के कृत्यों के विधान को कठिन स्थान एवं लोक को ⏑ ⏑ = ।

(४६) ⏑ = = = इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रिय विषय के प्रति न हटा कर पूर्णरूप से फलयुक्त निपुणता को आप इस मेरे — = = ⏑ ⏑ ⏑ = ।।२३।।

(४७) = = =काव्य में पाद के आदि में प्राचीन राजचरित का वर्णन करने से काव्य की प्राचीनता सिद्ध होती है ।

(४८) = = = जो कुछ भी पहले कहा गया या सुना गया उसके आधार पर आपने अपनी पूर्ण शक्ति से आदिशास्त्र महाभारत को रचा ।।२४।।

(४९) = = = संसार-सागर में वर्तमान रागादि से ग्रस्त प्रगाढ़ मोह वाले व्यक्तियों को

(५०) = = =तुम इस पृथ्वी पर मन्त्रों के द्वारा मुक्ति मार्ग का उपदेश देते हो ।

(५१-५२) आपने सत्पुरुषों की कृपा से परार्थ में लगी हुई बुद्धि तथा शुद्ध एवं वैराग्य युक्त वाणी के द्वारा जगत् के हित के लिये अपनी इस पुण्य भूमि भारत में एवं विश्व में सम्पूर्ण वाङ्मय को प्रदर्शित किया ।

(५३) आपने विविध धर्मों एवं विपुल वाङ्मय को जानकर रागादि दोषों का शमन कर दिया है ।

(५४) जिस प्रकार सूर्य अपनी प्रखर किरणों से अन्धकार को दूर कर देता है उसी प्रकार आपने (ज्ञानरूपी सूर्य द्वारा) मोह-जाल को विदीर्ण कर दिया है ।

(५५) प्रतिविषय के निश्चित होने के कारण, पालक होने के कारण, सावधानीपूर्वक उसका ज्ञान होने के कारण, विवेक के कारण, दोष रहित होने के कारण, संसार में उसके उपदेश के कारण तुम उसके साथ विभागयुक्त मानो सन्निहित त्रयात्मक वाणी की मूर्ति हो ।।

(५६-५९) सूक्ष्म होने के कारण, दुर्बोध होने के कारण, तथा जो अपने शरीर से सम्पूर्ण संसार को आच्छादित किये हुए है, जो वाणी तथा

बुद्धि से भी अगोचर है, अपने ज्ञान से मुनियों द्वारा किसी प्रकार जाना जाता है; विशुद्धि का सर्वोत्तम विद्या रूपी स्थान है, जिसके कारण भव-बन्धन क्षीण हो जाता है, उसका उपदेश देने वाला आपके सिवाय अन्य कोई दूसरा नहीं है।

(६०-६२) — प्रत्येक पदार्थ में स्थित होने के कारण, जो पृथक् होते हुए भी पृथक् नहीं है, अपने स्वरूप के विशेष होने के कारण धर्मादि के सम्बन्ध से रहित है, फिर भी सभी कालों में जिसकी प्रतीति नहीं होती है, उत्पत्ति तथा विनाश से रहित होकर स्थित है, सर्वव्यापक है, चैतन्य है। उसको बतलाने वाला आपके अतिरिक्त संसार में अन्य कौन हो सकता है?

(६३-६५) निष्पाप को, विवेकी को, सतोगुणी को, बुद्धिमान को, वाणी के स्वामी को, आपका वचन सदा प्राप्त हो।

(६६-६७) जिस प्रकार आकाश तिमिर को दूर करता है उसी प्रकार संसार के भय को नष्ट करने वाले अपने तेज से उपहित, ज्ञेय के पारंगत आपके द्वारा यह जगत् सुशोभित हो रहा है।

(६८-७०) आप विवेक एवं ज्ञानयुक्त होकर जन्म लेने वाले त्रिगुणात्मक पुरुष हो, आप सम्मिश्रित विषयों की वाणी के सुज्ञाता हो, संसार में छिपे हुए गहन-व्यापक मोह के भेदन करने वाले आप आकाश में चन्द्रमा के समान सुशोभित हो रहे हो।

(७१-७२(संसार के बन्धन को नष्ट करने वाले तमोगुण तथा रजोगुण से रहित आपके विषय में या आपकी महिमा को किसी प्रकार से मैं अपनी वाणी द्वारा वर्णन कर रहा हूं। आप मेरे पिता के ऊपर कल्याण-वर्षा करना।

(७३) अनुपरम के द्वारा भगवान द्वैपायन का स्तोत्र रचा गया।

XII

आदिनारायणमन्दिर थानकोट ग्राम-मर्यादाभिलेख

यह अभिलेख थानकोट के आदिनारायण मन्दिर में ३० सें० मी० चौड़ी प्रस्तर-शिला पर उत्कीर्णित है। शिला का ऊपरी भाग टूटकर नष्ट हो गया है। इस अभिलेख का लेखन-काल सं ४२८ (सन् ५०६ ई०) है।

१. ओ३म् स्वस्ति [मानगृहात् परमदैवतबप्पभट्टा]
२. रकमहाराजश्रीपा[दानुद्ध्यातो श्रुतनयदया]
३. दानदाक्षिण्यपुण्यप्र[तापविकसितसितकीर्ति][1]—
४. भट्टारकमहाराज (श्रीवसन्तदेवः कुशली]
५ जयपल्लिकाग्रा[मनिवासोपगता]न् ब्राह्मणपुरस्स—
६. रान् ब्रङ्ब्रांशुलमुंतेपुल— — — —प्रधानान् ग्रामकुटुम्बिनः
७. साष्टादशप्रकृतीन् कु]शलंपृ]ष्ट्वा समाज्ञापयति
८ विदितं वोऽस्तु यथा[स्माभि]रायुष्मत्यै प्रियभगिन्यै
९ [ज]यसुन्दर्य्यै स्वसन्तानानुक्रमेण सुस्थितकोट्ट—
१० [म]र्य्यादः अचाटभटप्रवेश्योयं ग्रामोऽतिसृष्टोऽस्य—
११ — — —सीमा शीताटीगुल्मकस्य पश्चात् या नदी ततः पर्व्व—
१२. [त] —यावत् पर्व्वतचूडिका दक्षिणतोऽपि तत एव नद्यां
१३. —त्य पश्चिमेन— — — —पजु यावद्धस्तिमार्गसम्प्राप्तेति
१४. ततोऽपि च हस्तिमार्ग्ग— — —[प]श्चिमतो यावत् पर्व्वतचूडिका
१५. पश्चिमतः पर्व्वताग्रस्य— — —ति प्राग्रापः स्यन्दन्ते पश्चिमोत्तरे
१६. —णापि शिवकदेवकुलस्य दक्षिणतः पानीयमार्ग्गावधि उत्तरेणा—
१७. —पि थेञ्चेग्रामस्य दक्षिणतः यावत् महापथः प्रागुत्तरेणापि नव—
१८ —ग्रामस्य दक्षिणतोमार्ग्ग एवावधिर्य्यावत् पूर्व्वेण नदीं प्रविष्ट—
इति

---

१. वृत्त्यनुप्रासालङ्कार

१९. तदेतस्मिन् ग्रामे ये प्रविष्टाः प्रविविक्षवश्च ब्राह्मणप्रधानाः सा—
२०. ष्टादशप्रकृतयस्तेषामत्र प्रतिवसतान्न केनचिदस्मत्पादोप—
२१. जीविना स्वल्पाप्यावाधा कर्त्तव्या यश्चेमामाज्ञामुल्लङ्घ्या—
२२. न्यथा कुर्य्यात् कार—
२३. येद् वा तस्याहं दृढन्न मर्षयिष्यामि तदेवं विदित्वात्र भवद्भिर्निर्वृत-विश्वस्तैरकुतोभयैः स्वकर्म्मानुस्थायिभिः परस्परेणाश्वासयद्भिश्च समुचि—]
२४. तभागभोगकरपिण्डकदानादिभिरुपकुर्व्वद्भिरनया प्रतिपाल्यमानै—
२५. राज्ञाश्रवणविधेयैः सुखं प्रतिवस्तव्यमिति समाज्ञापना येऽप्यागमि—
२६. नो राजानोऽस्मद्वंश्या भविष्यन्ति तेऽप्येनामस्मद्दत्ताम् भूमिमनु-मोदितुम—
२७. [हं]न्ति यत्कारणं बहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिः सगरादिभिः। यस्य यस्य
२८. यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ।। स्वदत्ताम् परदत्तां वा यो हरेत् वसुन्ध—
२९. राम् । स विष्ठायां कृमिर्भूत्वा पितृभिः सह पच्यत इति दूतको याज्ञिक—
३०. विरोचनगुप्तः सम्वत् ४०० २० ८ मार्गशीर्ष—शुक्लदिव ।।१।।

ओ३म् मानगृह से सबका कल्याण हो। परम देव बप्प भट्टारक महाराज के श्री चरणों का ध्यान करने वाले, श्रुति, नय (नीति), दया, दान, दाक्षिण्य (दक्षता), पुण्य एवं पराक्रम से समृद्ध होने वाली धवल कीर्ति वाले भट्टारक महाराज श्री वसन्त देव कुशलतापूर्वक जयपल्लिका ग्राम में निवास करने वाले ब्राह्मणों के सम्मुख अठारह प्रकृतियों से युक्त ब्रङ् ब्रांगुलमुंतेपुल ग्राम के प्रधानों एवं कुटुम्बियों को कुशलता पूछ कर सूचित करते हैं कि "आप सबको विदित है कि जैसे हमारी आयुष्मती प्रिय बहिन जयसुन्दरी के लिये अपनी सन्तान के अनुक्रम से ठीक दुर्गीय मर्यादाओं से युक्त यह ग्राम अचाटभट (चाट भट को छोड़ कर अन्य सभी के लिये) के प्रवेश योग्य बनाया गया है इसकी सीमा शीताटी नामक जंगल के पश्चात् जो नदी है वहाँ से लेकर जहाँ तक पर्वत की चोटी है, दक्षिण से भी उसी नदी का अनुसरण करके पश्चिम में — — पजु से लेकर जहाँ तक नीचे का मार्ग आता है और उसके पश्चाद् हाथी मार्ग, पश्चिम से जहाँ तक पर्वत शिखर है, पश्चिम से पर्वत के अग्रभाग

Inscription XII

के— — — आगे को जहाँ पानी का झरना बहता है, पश्चिमोत्तर में भी शिवमन्दिर के दक्षिण में जल ही जिसकी मार्गावधि है (जलमार्ग ही जिसकी सीमा है), उत्तर में भी थेञ्चे ग्राम के दक्षिण से लेकर जहाँ तक महामार्ग है, पूर्वोत्तर में भी नवग्राम के दक्षिण मार्ग से लेकर जहाँ तक नदी का प्रवेश होता है, यही सीमा है। तो इस ग्राम में जो ब्राह्मण प्रधान प्रविष्ट हैं और १८ प्रकृतियों सहित निवास कर रहे हैं, उनको हमारा कोई भी चरणोपजीवी (कर्मचारी) किञ्चित् मात्र भी बाधा नहीं पहुंचायेगा। जो हमारी इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा उसे निश्चय ही हम सहन नहीं करेंगे।

तो इस प्रकार जानकर आप सबको विश्वस्त एवं निर्भय होकर, अपने कर्तव्यों को करते हुए, परस्पर आश्वस्त होते हुए, अपने अपने भाग के भोग-कर, पिण्डदान आदि करों को देते हुए एवं उनके द्वारा प्रतिपालित होते हुए, राजा के द्वारा सुनाए गये विधानों (नियमों) के अनुसार सुखपूर्वक रहना चाहिये, इस प्रकार की समाज्ञापना (सूचना अथवा आदेश) है। जो हमारे वंश के आगामी राजागण होंगे वे भी मेरे द्वारा दी गई भूमि (राज्य) का अनुमोदन (स्वीकार) करने के योग्य होंगे। इसका कारण है कि यह वसुधा सगरादि बहुत से राजाओं के द्वारा उपभोग की गई। जिस जिसकी यह भूमि हुई है तब तब उसका फल मिला है। अपनी दी हुई अथवा दूसरे के द्वारा दी हुई भूमि का जो अपहरण करता है, वह विष्ठा में कृमि होकर अपने पितरों के साथ पकाया जाता है। दूतक याज्ञिक विरोचन गुप्त है। संवत् ४२८ मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष का प्रथम दिन।

XIII

जयशीलागनटोलेमर्यादा शिलालेख

लगभग ४२ सें मी. चौड़ा शिलालेख जयशी लागनटोले मन्दिर काठमाण्डू के निकट ह्ल ुगलदेवी के शरणाश्रय के निकट स्थित है। शिला का ऊर्ध्वभाग चक्र एवं दो शङ्खों से सुशोभित है। सव– ४३५ (सन् ५१३ ई०)

१. ओ३म् स्वस्ति मानगृहात् परमदैवत बप्पभ—
२ ट्टारकमहाराज श्रीपादानुध्यातः श्रुतन—
३. य —दयादान –दाक्षिण्य –पुण्यप्रतापविकसि—
४. तसितकीर्तिर्भट्टारकमहाराज श्री वसन्त—
५. देवः[1] कुशली [चतु]र्ष्व[2]धिकरणेषु धर्म्म—
६. स्थ[3]— — — — — — — — — — — — —णिकाम् च कुश—
७. [लम् पृष्ट्वा समाज्ञापयति][5] विदितमस्तु वो मया[6]
८. — — — — — — — — — — — — — —लिङ्गवल[7]
९. — — — — — — — — — — — — — — —कूथेर
१०. — — — — — — — — — — — — —रणाय
११. — — — — — — — — — — — — —[भ]ट्टारक[8]

१. Bh. I. सेनः
२. Bh I. निषेध
३ Bh. I. स्था[न] ॥
४. Bh. I. णेकाश् ॥
५. Bh. I. रिक्त छोड़ देते हैं।
६. मया शब्द के नीचे 'अस्तु वो' लिखा है।
७. Bh. I. लिङ्ग्वल ॥
८. Bh. I. भ निषिद्ध करता है।

१२. — — — — — — — — — — — — — — — व्य तेषाम्
त्र[६]
१३ — — — — — — — — — — — — — —कार्येषु सद्वै[१०]
१४. — — — — — — — — — — — — — —मयापि तेषां
१५. — — — — — — — — — — — — — —मोचित—
१६. — — — — — — — — — — — — — — — — — — —
१७ [अस्मत्पा[[११] दोपजीविभिरय[म्][१२]— — — — — — —
१८. — — —यश्चेमामाज्ञाम् उल्लङ्घ्य
१९. — —तस्याहं[१३]दृढं मर्य्या[द][१४]— — — —
२०. इति समाज्ञापना। संवत् ४३५ आश्व—
२१. युजि शुक्लदिव १ दूतकः सर्वदण्डना—
२२. यक महाप्रतिहार रविगुप्त इति॥
२३. [१५]ब्रह्मु ङि च महीशीले व्यवहरतीति।

ओ३म् मानगृह से सबका कल्याण हो। परमदेवता स्वरूप बप्प भट्टारक महाराज के श्री चरणों का ध्यान करने वाले, श्रुति, नय, दया, दान, कौशल तथा पुण्य के प्रताप से पल्लवित एवं उन्नत धवल कीर्ति वाले भट्टारक महाराज श्री वसन्तदेव कुशलतापूर्वक चारों अधिकरणों (लिंग्वल, कूठेर आदि चार अधिकरणों अथवा विभागों) में धर्म में स्थित और — —णिका को कुशलता पूछ कर सूचित करते हैं कि आप सबको विदित हो कि मेरे द्वारा— — — लिंग्वल— — — कूथेर — — भट्टारक — — उनके — — कार्यों में — — मेरे द्वारा भी उनके — — छोड़ दिये गये — — —इस आज्ञा का जो हमारा कोई भी चरणोपजीवी अवज्ञा करेगा या करायेगा उसकी मर्यादा के लिये मैं कठोर दण्ड दूंगा। यह आदेश है। संवत् ३३५ आश्वयुज शुक्ला प्रथमा। यहाँ दूतक है सर्वदण्डनायक महाप्रतिहार —रविगुप्त। ब्रह्मु ङि तथा महीशील में व्यवहार होता है।

---

९. Bh. I. शप्येत् तेषाम् त्र
१०. Bh. I. दिकार्य्येषु सद्वि॥
११. Bh. I. त्पा॥
१२ अय[म्] Bh. I. के द्वारा निषिद्ध
१३. Bh. I. द्वा तस्याहं उल्लङ्घ्या [न्यथा] कुर्यात् का[रये]द् वा पढ़ा जा सकता था।
१४. Bh. I. द का निषेध करते हैं।
१५. Bh. I. ब्राह्मु ङि

किसीपिडी कर-मुक्ति शिलालेख

यह अभिलेख किसीपिडी नामक ग्राम में लगभग ३८ सें. मी. चौड़ी शिला पर उत्कीर्णित है।

संवत् ४४९ (सन् ५२७ ई०)

१. — — — — — — — — — — — — — — — — —कूथेर—
२. — — — — — — — — — — — — — — — — — — —म्
एतद् भ—[1]
३. — — — — — — — — — — — — — — **यूयम् अद्याग्रेण स—**[2]
४. **मुचितकरं ददन्तः**[3] **सर्व्वंकृत्वेष्वाज्ञा विधेया**
५. — — — — — —**मनसो यथा**[4] **सुखं प्रतिव[सतेति]**[5]
६. **दूतकश्चात्र सर्व्वंदण्डनायकमहाप्रतिहार**[6]
७. **रविगुप्त इति संवत् ४०० ४०९ प्रथमासा [ढ़]—**
८. **शुक्लदशम्याम् ॥**
(१) — — — — — — — — — — — — — — — — —कूथेर
(२) — — — — — — — — — — — — — — — — — —यह
भट्टारक
(३-८)— — — आज पहले ही समुचित कर को देते हुए सब कार्यों में आज्ञा-विधान का आचरण करते हुए — — —मन से इच्छानुसार सुखपूर्वक निवास करें। और यहाँ दूतक है सर्वदण्डनायक महाप्रतिहार रविगुप्त।

संवत् ४४९ प्रथमाषाढ़ शुक्ल दशमी के दिन।

---

१. L १-२ पंक्तियाँ नहीं पढ़ पाये हैं।
२. L. शे...॥
३. ददत्तः के लिये
४. L. लुके ॥
५. L. प्रतिव...॥
६. L प्रतिहार...॥

XV

रविगुप्तकृत चौकीतर पंचापराध निषेधाज्ञा शिलालेख

यह अभिलेख थानकोट जिले के बलम्बू नामक ग्राम के निकट थादो-भुङ्गो के दाएँ ओर चौकीतर नामक स्थान पर लगभग ५० सैं मी. चौड़ी शिला पर उत्कीर्णित है। शिला का ऊर्ध्व भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों से बिभूषित है। सवत् ४५४ (५३२ ई०)

१. ओ३म् स्वस्ति मानगृहात् सम्यक् प्रजापालन — — — — — — — — — — — — — —
२. भट्टारकमहाराज श्री वसन्तदेवः कुशली — — — — — — [ब्राह्मण] —
३. पुरस्सरान् ग्रामकुटुम्बि[नः] कुशलं पृष्ट्वा[समाज्ञा]पयति — — — — —
४. यथा मयै — — ञ्च — . ए . ई — — — — — — — — — — ङ्ग— — — —
५. राधिकरणाभिलेख्यकैश्च पञ्चापराध — — — — — — —सर्व्व-दण्डना —
६. यकमहाप्रतिहार रविगुप्तेन विज्ञापिते[न] —त्रैव सर्व्वदण्ड-नायक—
७. महाप्रतिहार रविगुप्तेन महाराजमहासामन्त श्री क्रमलीलेन च साकं स—
८. मवाप्य तथेति प्रसादः कृतस्तदित्थमप्रति यदि कश्चिदस्मत्पादोपजी-[व्य]—
९. न्यो वेमाम् आज्ञां उत्क्रम्याभिमुख्यं प्रवेशयेद् यो च पञ्चापराधेन स्मरेत् स्मार —
१०. येद्वा तान् अहं दृढं न मर्षयिष्याम्येवं विदितार्था यूयं निर्भृतविश्वस्ताः

११. सुखम् प्रतिवसतेति ततो ग्रामीणैरपि मा भूत् राजकोशस्यापहा-
निरिति

१२. तत्प्रतिमोचनाय स्वे स्वे ग्रामेऽधिकरणयोरुभयोः क्षेत्रं दत्तम्
पश्चि —

१३. मोद्देशे भूमि ७ पिण्डकं शोल्लाधिकरणस्य मा २ कूथेराधिकरणस्य

१४. मा १ दूतकश्चात्र सर्व्वदण्डनायकमहाप्रतिर(प्रतिहार) रविगुप्तः
ब्रह्म ुनि च

१५. प्रतिहार भवगुप्ते व्यवहरतीति ४०० ५० ४ ज्येष्ठशुक्लदिव ७

ओ३म् सबका कल्याण हो। राजमहल मानगृह से प्रजा का अच्छी प्रकार पालन करने वाले भट्टारक महाराज श्री वसन्तदेव ब्राह्मणों एवं ग्रामीण कुटुम्बियों से कुशलता पूछकर आज्ञा प्रसारित करते हैं कि अधिकरणाभिलेखा-धिकारी और पञ्चापराध-निर्णायक सर्वदण्डनायक महाप्रतिहार रविगुप्त, महाराज महासामन्त श्री क्रमलील की सम्मति से हमने यह कृपा की है, अथवा स्वीकृति प्रदान की है कि हमारे किसी भी कृपापात्र को पञ्चापराध की मनोवृत्ति से गाँव में प्रवेश नहीं करना चाहिये। जो इस आज्ञा या अभिलेख का अतिक्रमण करेगा उसको निश्चय ही सहन नहीं करूँगा। इस प्रकार जानते हुए आप प्रजागण निश्चित रूप से विश्वासपूर्वक निवास करें। फिर ग्रामीण जनों को भी राजकोशीय सुविधाओं से मुक्त (वञ्चित) नहीं होना चाहिये) इस अभाव की मुक्ति के लिये अपने अपने ग्राम में दोनों अधिकरणो का क्षेत्र दिया जाता है। पश्चिमी प्रदेश में शोल्लाधिकरण की भूमि ७ पिण्डक मा २ तथा कूथेराधिकरण की मा १। यहाँ दूतक (सन्देशवाहक) है सर्वदण्डनायक महाप्रतिहार रविगुप्त तथा ब्रह्ममुनि। प्रतिहार भवगुप्त ने क्रियान्वित किया। संवत् ४५४ ज्येष्ठ शुक्ल दिवा सप्तमी।

XVI

शङ्करभवन-भूमि दानलेख

यह अभिलेख पशुपति-मन्दिर के चबूतरे में लगभग ८६ सैं. मी. चौड़ी शिला पर उत्कीर्णित है।

संवत् ४६२ (४६२+७८=५४० ई०)।

छन्द—आर्या तथा उपगीति।

१. ओ३म् आभीरी ख्यातगुणा भार्य्या परमाभिमानिनः सूनोः।
पुण्यविवृद्ध्यै भर्तुर्देवतामितः प्रयातस्य॥
पुण्येहनि धननिचयैर्द्विजजनम् अभिपूज्य दानमानाभ्याम्।

२. पुत्रेणानुज्ञाता चकार संस्थापनं शम्भोः॥
दत्त्वा चाक्षयनीवीं वप्रपरिच्छदविभूषादीन्।
अनुपरमेश्वरसंज्ञाञ्च शम्भोर्भुवनमहितस्यास्य॥

३. भगवते देवदेवायास्मै स्वयम् प्रतिष्ठापिता-
यानुपरमेश्वरसंज्ञितायाभ्यङ्गस्नपनाच्चंन-
गन्धधूपबलिनिवेदनादिप्रवर्त्तनार्थं
खण्डफुट्टप्रतिसं-

४. स्कारार्थञ्च पतिदेवपुण्याभीरिभगिन्यापत्तये
त्रिदिवस्थाय पुण्याप्यायनार्थमायुष्मताञ्चापत्या-
नाम् भौमगुप्तादीनाम्भोगारोग्यायुरानन्त्यावाप्तये।

५. टिम्पाग्रामे — — — पुष्करोपेतनदीक्षेत्रखण्डद्वयं दत्तमिति।
संवत् ४०० ६०२ ज्येष्ठमासे तिथौ द्वितीयायाम्।

ओ३म् परमाभिमानिनी के पुत्र की भार्या आभीर जाति की गुण विख्यात तथा अपने पति को ही परमदेवता मानने वाली रानी ने अपने पति की पुण्यवृद्धि के लिये परममाननी पत्नी ने यहाँ से जाते हुए पुण्य दिवस पर धन-कोश के द्वारा दान-मान से ब्राह्मणों का अच्छी प्रकार पूजन करके, अपने

पुत्र की स्वीकृति से अनुपरमेश्वर नामक शंकर भगवान की स्थापना की। अनुपरमेश्वर नामक शंभु-भुवन का दान किया। देवों के देव भगवान अनु-परमेश्वर की दैनिक अर्चना एवं स्नानादि के लिये सुगन्धित, धूप, भेंट (प्रसाद), नैवेद्य तथा उसके जीर्णोद्धार के लिये स्थायी रूप से भूमि एवं आभूषणों का दान किया।

पतिदेव के स्वर्ग में पुण्यप्राप्ति के लिये पुनीत आभीर पत्नी ने आयुष्मान् भौमगुप्त आदि सन्तान के, भोग, आरोग्य और दीर्घायु की प्राप्ति के लिये तिम्पा ग्राम में कमलों से सुशोभित नदी के क्षेत्र में दो खण्ड दिये हैं। संवत् ४६२ ज्येष्ठ मास की द्वितीया तिथि को।

XVII

देवपाटन-नाथेश्वर-शिलालेख

यह अभिलेख देवपाटन में मृगस्थली के मार्ग में स्थित शिवलिङ्ग की आधार-शिला पर लगभग ४४ सें० मी० चौड़ाई में उत्कीर्णित है। प्रयुक्त संस्कृत व्याकरण की दृष्टि से पर्याप्त अशुद्ध है। संवत् ४६९ (सन् ५४५ ई०)

१. **ओ३म् स्वस्ति संवत् ४०० ६०९ वैशाखे शुक्लदिवपौर्णमा-स्यां भट्टारक महाराज—**

२. **श्री रामदेवस्य साग्रं वर्षशतं समाज्ञापयति महाराज—महासामन्त—**

३. **श्री क्रमलीलः कुशली भगवतः नाथेश्वराय मानमत्या दत्तं दोव—**

४. **ग्रामोद्देशे शालगम्वी क्षेत्रपिण्डक मा २०८ तत्र देशे खुड्डस्वामिनः**

५. **दत्तू मा २**

ओ३म् सबका कल्याण हो। संवत् ४६९ वैशाख शुक्ल पूर्णमासी के दिन भट्टारक महाराज श्री क्रमलील कुशलतापूर्वक मानमती के द्वारा भगवान नाथेश्वर के लिये शालगम्बी क्षेत्र में दोव गाँव नामक स्थान पर मा २८ और वहाँ खुड्डू स्वामी के प्रदेश में मा २ प्रदान करने की आज्ञा प्रदान करते हैं।

XVIII

अविलोकितेश्वरनाथ स्थापनाभिलेख

यह अभिलेख कठमण्डु में लगन टोले नामक स्थान पर एक जलप्रवाहिका में स्थित अवलोकितेश्वर की मूर्ति के आधार पीठ पर उत्कीर्णित है। उत्कीर्णत भाग लगभग ७७ सैं० मी० चौड़ा है इसकी तिथि अपठनीय है।

१. ओम् स्वस्ति — [राम] देवस्य साग्रं वर्षशतं समाज्ञा [पयति]

२. सर्व्वसत्वहितसुखात्थाय भगवत आर्य्यालोकितेश्वरनाथप्रतिष्ठापितः देयधर्म्मोऽयं परमोपासकमणिगुप्तस्य

३. भार्यया महेन्द्रमत्या सह यद्द अत्र पुण्यं तद्भतु मातापितृपूर्व्वङ्गमं कृत्वा सर्व्वसत्वानां सर्व्वाकारवरोपेत- [तथागत स]र्व्वज्ञज्ञानावाप्तये।

ओ३म् सबका कल्याण हो। श्रीरामदेव के एक सौ वर्ष से भी अधिक समय तक शासन करने की कामना करते हुए तथा सूचित करते हैं कि सब प्राणियों के कल्याण एवं सुख के लिये देय धर्म परमोपासक मणिगुप्त की भार्या महेन्द्रमती के द्वारा पुण्य पति के दिवंगत माता पिता का संस्कार करके सब प्राणियों की सेवार्थ एवं तथागत सर्वज्ञताप्राप्ति के लिये भगवान आर्य लोकितेश्वरनाथ स्थापित किया गया।

XIX

चौकीतर-अधिकरणप्रवेश निषेधाज्ञा शिलालेख

संवत् ४८२ (सन् ५७० ई०)

लगभग ४६ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख थानकोट जिले के बलम्बू नामक ग्राम के निकट ठाडो ढूंगा के दाहिनी ओर चौकीतर नाकक स्थान पर स्थित है। शिलालेख का ऊर्ध्व भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों से सुसज्जित है।

संवत् ४८२ (४८२+७८=सन् ५६० ई०)

१. ओ३म् स्वस्तिमानगृहात् बप्पपादानुध्यातो भट्टारकम-
२. हाराजश्रीगणदेवः कुशली सीताटिकातले तेग्वल[ग्रा]
३. मे यथाप्रधानब्राह्मणपुरस्सरान् सर्व्वान् एव कु—
४. कुटुम्बिनः कुशलं पृष्ट्वा मानयति पूर्व्वराजभिर्य्यु-
५. ष्माकं कूथेर्शुल्ल्याधिकरणाभ्याम् न प्रवेष्टव्यमित्य—
६. नुग्रहः कृतकोऽधुना मया सर्व्वदण्डनायक—
७. महाप्रतिहारश्री भौमगुप्तानुज्ञापितेन लिंग्वल्
८. माप्चोकाधिकरणाभ्याम् पञ्चापराधद्वारेण च-
९. तुर्भिरप्यधिकरणैर्न्न प्रवेष्टव्यमिति स्थितिपट्ट—
१०. केन प्रसादः कृतस्तद् यूयमेवम् विदित्वा यथै-
११. व पूर्व्वम् आज्ञाश्रवणविधेयास्तथैवावलगनप-
१२. रा भूत्वा निर्वृतविश्वस्ताः सुखम् प्रतिवत्स्यथ ये चा-
१३. स्मद्वंश्या राजानो भवितारास्तैरपि धर्म्मगुरुभि-
१४. र्गुरुकृतप्रसादानुवर्त्तिभिरियमाज्ञाप्रति-
१५. पालनीयेति दूतकश्चात्र राष्ट्रवर्मा ब्रह्मं
१६. प्रसादगुप्तवार्ते व्यवहरतीति संवत्
१७. ४०० ८०२ श्रावणशुक्लप्रतिपदि।

सबका कल्याण हो। राजभवन मानगृह से बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले परम भट्टारक महाराज श्रीगणदेव सीताटिका के नीचे तेग्वल

ग्राम में प्रधान ब्राह्मणों के सम्मुख सभी कुटुम्बियों से कुशलता पूछकर स्वीकार किया कि पूर्व राजाओं के द्वारा आपके गाँव में कुथेर और शुल्याधिकरणों के लोगों का प्रवेश नियमित रूप से निषिद्ध किया गया था। अब मेरी कृपा से सर्वदण्डनायक महाप्रतिहार श्रीभौमगुप्त स्थितिपट्टक के द्वारा सूचित करते हैं कि लिग्वल और मापचोक अधिकरणों के लोगों को पञ्चापराधों एवं चारों अधिकरणों के माध्यम से भी आपके ग्राम में प्रवेश नहीं करना चाहिये। तुम सबने इस प्रकार यथापूर्वक सुनकर आज्ञा का पालन किया तथावत् अब भी संलग्न होकर विश्वासपूर्वक निश्चिन्त होकर सुख से रहें। हमारे वंश के भावी राजागण भी धर्मगुरुओं एवं गुरुओं के कृपापात्रों के द्वारा भी यह आज्ञा पालनीय है। इस विषय को सन्देशवाहक राष्ट्रवर्मा तथा प्रसादगुप्त क्रियान्वित करते हैं। संवत् ४८२ श्रावण शुक्ल प्रतिपदा।

XX

त्यागलटोले शङ्करनारायणस्वामी प्रशस्ति-अभिलेख

संवत् ४८९ (सन् ५६७ ई०)

यह अभिलेख देवपाटन में गंचननि नामक स्थान पर त्यागलटोले नामक गृह के चबूतरे में स्थित हरि-हर (उमा-महेश्वर) की मूर्ति के मूलाधार पर लगभग ६४ सैं० मी० चौड़ाई में उत्कीर्णित है।

१. ओ३म् पत्योर्न्नौ[1] पश्य हे श्रीर्युगलममिथुनं शूलभृच्छाङ्गपाण्योरेकै- कस्यात्र किं तन्न सुकरमनयोस्तौयदेकत्रपृक्तौ। मूर्त्ति[म्] त्य [क्त्वेव]

२. नूनं सखि मदनरिपोरेवमुक्त्वा भवान्या योऽदृष्टो जातु तस्मै सततम् इह ममोऽस्त्वर्द्धंगौरीश्वराय॥

(अर्द्धगौरीश्वराय)

संवत् ४०० ८०९ प्रथमाषाढ–

३. शुक्लाद्वितीयायां भट्टारकमहाराजश्रीगणदेवकालम् अपरिमितं समा- ज्ञापयति परमदैवत श्री भौमगुप्तपादानुध्यातो विदि–

४. त विनयः शश्वत् कुशलकर्मण्युपहितपरमानुग्रहः प्रकृष्टकुलजन्मा दिवं उपगतयोर्म्मातापित्रोरात्मनश्च पुण्योपचितये

५. स्वामिवार्त्तः सकलभुवनसंभवस्थितिप्रलयकारणम् अनादिनिधनं भगवन्तम् इह शङ्करनारायण स्वामिनं प्रतिष्ठापितवान् (।) अपि च (।)

६. [2]योऽसौ सर्व्वत्रिभुवनगुरुः श्रेयसाञ्चाधिवासो यस्मिन् बद्धा नियमित- फलाः सम्पदः पुण्यभाजाम्। नानारूपं भुवनमखिलं

---

१. स्रग्धरा

२. मन्दाक्रान्ता

७. धार्य्यते येन चेदं तस्मिन् भक्तिर्न भवति वृथा शुद्धचित्ताशयानाम् ॥
[3]भिन्ने पुंसां जगति च तथा देवताभक्तिभावे पक्षग्राहभ्रमित-

८. मनसाम् पक्षविच्छित्तिहेतोः ।
इत्यधर्म्याभ्यां समुपरिचितं यन्मुरारीश्वराभ्याम्
एकं रूपं शरदिजधनश्यामगौरं तदव्यात् ॥
[4]पुण्यानि येष्युभयलोकेसुखावहानि कुर्व्वन्ति हि प्रतिदिनं विगता-
भिमानाः ।
कृत्वापि तेऽत्र विधिवद् विषयोपभोगं स्वैः कर्म्मभिः सुकृतिनो दिवं
आवसन्ति ॥
[5]पुंसां पापकृतामधः सुकृतिनामूर्ध्वङ्गतिर्द्धीमतामित्येवं प्रविचिन्त्य
निश्चितमतिः सम्प्रज्ञया प्रज्ञया । द्रष्टाद्रष्ट-

९. विधिप्रयोगनिपुणो वार्त्तः स्वपुण्याप्तये मूर्त्तिङ्केशवशङ्कराद्धंरचिताम-
स्थापयेद् भक्तितः ॥

हे लक्ष्मी, अपने दो अमिथुन (पति-पत्नी के रूप में नहीं) पतियों के जोड़े को देखो। त्रिशूलपाणि भगवान् शङ्कर तथा धनुषपाणि भगवान विष्णु को क्या पृथक्-पृथक् देखना सम्भव है ? नहीं। दोनों को एकत्र देखना ही सम्भव है क्योंकि वे दोनों एक हैं। कामदेव के शत्रु को हे सखि ! आकृति को छोड़कर निश्चयपूर्वक जानो। भवानी के द्वारा इस प्रकार कहे जाते हुए जो भगवान् अर्द्धगौरीश्वर दृष्टि से ओझल हो गये उनके लिये यहाँ मेरा सतत प्रणाम हो। संवत् ४८९ प्रथमाषाढ़ शुक्ल द्वितीया को भट्टारक महाराज श्रीगणदेव अपरिमित काल के लिये आज्ञा देते हैं—परमदेव श्री भौमगुप्त के चरण का ध्यान करने वाले, कर्म में कुशल और कृपा से युक्त, उत्कृष्ट कुल में जन्मे, स्वर्गीय माता पिता और अपने पुण्य के संचय करने के लिये स्वामिवार्त ने सम्पूर्ण भुवन की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के कारण, अनादि-निधन भगवान शङ्करनारायण स्वामी की स्थापना की और जो इस सम्पूर्ण त्रिभुवन के भी गुरु हैं, निःश्रेयस् के अधिष्ठान हैं, जिनमें पुण्यभागियों की सम्पदा और नियमित फल बँधे हुए हैं, जो नाना रूपों में सकल भवन को

---

३. मन्दाक्रान्ता
४. वसन्ततिलका
५. शार्दूलविक्रीडित
६. अस्थापयत्

धारण करता है, जिसका यह रूप है, शुद्धचित्ताशय वालों की भक्ति जिसमें वृथा नहीं जाती। जगत् में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों का भिन्न-भिन्न देवताओं के प्रति भक्तिभाव में पक्ष का छेदन करने वाले कारण रूप हैं, जो दोनों अर्द्ध भागों से युक्त परिचित मुरारी और शङ्कर का एक रूप हैं, जो एक ओर शरदज घन के समान श्याम हैं तो दूसरी ओर गौर हैं, वही हमारी रक्षा करें। अभिमान को छोड़कर जो नित्य ही दोनों लोकों में सुख पहुंचाने वाले पुण्य कार्यों को करते हैं और विधिवत् यहाँ उन विषयों का उपभोग करके सुकृतीजन अपने शुभ कर्मों के द्वारा स्वर्ग में जा बसते हैं।

पापी जनों की अधोगति और पुण्यकर्त्ताओं की ऊर्ध्वगति (मुक्ति) इससे होगी, ऐसा बुद्धिमानों ने विचारकर अपनी विशिष्ट बुद्धि से निश्चित किया। दृष्टादृष्ट के विधि प्रयोग में निपुण स्वामीवार्त ने अपनी पुण्यप्राप्ति के लिये यह शङ्कर और केशव की अर्द्धेकत्र मूर्ति भक्तिपूर्वक स्थापित की।

XXI

सपालीगाँव निषेधाज्ञा-शिलालेख

संवत् ४८९ (५६७ ई०)

यह अभिलेख बुद्धनीलकण्ठ से लगभग एक किलो मीटर दूर सपाली नामक ग्राम में लगभग ३३ सैं० मी० चौड़ी प्रस्तर-शिला पर अभिलिखित है। शिला का ऊर्ध्व भाग चक्र एवं दो शङ्खों से सुशोभित है।

१. [ओ३म्[1] स्वस्ति] मानगृहात् प— — — — — — —[भट्टा][2]
२. रक महाराज[3] [श्री]गणदेवः [कुशली] — —
३. — — —प — — —नव— — — — — — —
४. — — —मनु— — — — — — — — — — —
५. — — —ज्ञापयति विदितमस्तु — — —
६. — — द — न[4] — — — — — — — — — — —
७. —गुप्त विज्ञा[पितेन] — — — — — —
८. [5]— — —र— — — — — — — — — —
९. – – – – – – – – – – – – – – – – – –
१०. – – – – – – – – – – – – – – – – – –
११. – – – – – – – – – – – – – – तस् त्र—
१२. – – – – – – – – – – – – – – – – – –
१३. — — —समि — — — — — — —वति — —
१४. मा— —हनि — — — — — — — — — — — —
१५. – – – – – – – – – – – – – – – – – –
१६. — — — — —करम— — — — — — — —

---

१. L. ओम् शब्द को नहीं पढ़ते हैं।
२. L. 'भट्टा' को नहीं पढ़ते हैं।
३. L. रिक्त छोड़ते हैं।
४. L. मान ॥
५. L. ८-१७ तक रिक्त

१७. — न प्रवि— — — — — — — — — — — —
१८. — द् अपि[6] इ . इ — — — — —[इ] त्येवं विदित्वाद्या—
१९. ग्रेण न केनचिदन्यथा करणीयम् यश्चेद—[7]
२०. म् अन्यथा कुर्य्यात् कारयेद् वा तस्याहमकृत्यका—
२१. रिणो बाढ़म् न मर्षयिष्यामीति भट्टारक—
२२. पादीयोप्यत्रदूतको वृषवर्मा ।। संवत्
३३. ४०० ८० ९ श्रावणशुक्लदिवद्वादश्याम् ।

सबका कल्याण हो । भट्टारक महाराज श्री गणदेव कुशलतापूर्वक— — चरणों का ध्यान करने वाले — — आज्ञा प्रदान करते हैं कि —'आप सबको विदित है— गुप्त के द्वारा — सूचित किया जाता है कि — — — इस प्रकार आज और भविष्य में किसी को भी इसका अतिक्रमण नहीं करना चाहिये । जो कोई भी इसका अतिक्रमण करेगा या करायेगा — — उस अवज्ञाकारी को मैं मरवा डालूंगा । ऐसे भट्टारक पादीय दूतक है वृषवर्मा ।

संवत् ४८९ श्रावण शुक्ला द्वादशी ।

---

६. L. रिक्त छोड़ देते हैं ।
७. L. करणम्...... ।।

च्यासलटोले-शिलालेख

यह अभिलेख पाटन में च्यासलटोले नामक स्थान पर लगभग ४० सैं० मी० चौड़ी प्रस्तर-शिला पर उत्कीर्णित है। शिला का ऊपरी भाग नष्ट प्राय हो गया है।

१. — — — — — — — — — — — — — — —कुर्यात् कार-
येत् वा — — — — — — — —

२. — — — — — — — — — — — — — — — —धर्म्मगुरुभिः
- - - - - - - -

३. — — — — — — — — — — — — — — — — — य —
हस्तिन - - - - - - -

४. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — मत — — — — — —

५. — — — — — — — — — — — — — सम्प्रासाद —
रिषत्तदा तदा — — —

६. — — — — — — — — — — — — — स्वर्ग्गनिरास्थो
नि—सन्मनस्वी — — —

७. — — — — — — — — — — — — — — तावच्चिरनरक-
दुःखभाक्ष्यात्[1] — —

८. — — — — — — — — — — — — — — — — म्महीं-
भुजाम् ह्यपहरेत् चल — —

९. — — — — — — — — — — — —पश्य सोऽज्ञो[2]
जायेत्पश्चाच् निरयेषु स्थि— —

१०. — — — — — — — — — — — — — —न गोमीति संवत्
५००१०५ फाल्गुन शुक्लदिव पं[चम्याम्]

— — —करेगा या करायेगा — — — धर्मगुरुओं के द्वारा हस्तिन् — — महल — — तब तक — — —स्वर्ग से हटकर — — — सद् मनस्वी व्यक्ति — — — — तब तक चिरकाल तक नरक में दुःख भोगता है — — — राजा को ही अपहृत कर लेना चाहिये — — — देखो ... — वह अज्ञानी है। — —कालान्तर में उत्पन्न होकर नरकों में स्थित — — — गोमी ने यह — — — इस प्रकार

संवत् ५१५ फाल्गुन शुक्ल पञ्चमी को।

---

१. अपाणिनीय

२. श्लोक

XXIII

भीमसेन पञ्चापराधी-प्रवेश निषेधाज्ञा शिलालेख

संवत् ५१७ (सन् ५९५ ई०)

लगभग ४४ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख पाटन के मङ्गल वजार के भीमसेन मन्दिर के सामने एक जल प्रवाहिका के ऊपर स्थित हैं जो पुलिया के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

संवत् ५१७ (५१७+७८=५९५)

१. [ओ३म् स्वस्ति मानगृहात्] — — — — — —मा— कल्याणो निरुपमगुण

२. — — — — — — — — — [भ]ट्टारकमहाराजश्रीशिवदेवः कुशली

३. — — — — — — [निवासि] नः प्रधानपुरस्सरान् ग्राम-कुटुम्बिनः कु—

४. [शलमाभाष्य समाज्ञा] पयति विदितम् भवतु भवतां यथाने—

५. [न] — — — — प्रणत — ञ्ज — — — — चरणयुगलेन प्रख्याता

६. [मलविपुलयशसा] श्री सामन्तांशुवर्म्मणा विज्ञापितेन मयैतद्गौरवाद् [युष्म]—

७. [दनुकम्पया च] कूथेर्वृत्त्यधिकृतानां समुचितस्त्रिकर्मात्रसाधना [यै]—

८. [व प्रवेशो]ऽस्मिन्दङ्गो — — — इ लिङ्गव्व — ल्गुल्लिपञ्चापराधादिनिमित्तन्त्वप्र[वे]—

९. [श इति] प्रसादो वः कृतो लशुन [प] लाण्डु — कराभ्यां प्रतिमुक्तश्चिरस्थितये चास्य

१०. [प्र]सादस्य शिलापट्टकशासनमिदम् दत्तं तदेवं वेदिभिरस्म —

११, त्पादोपजीविभिरन्यैर्व्वा न कैश्चिद् अयम् प्रसादोऽन्यथा करणी-योयस्त्वे

१२. तामाज्ञां विलङ्घ्यान्यथा कुर्य्यात् कारयेद् वा तमहम् अतितरान्न मर्षयि—

१३. ष्यामि भाविभिरपि भूपतिभिर्धर्म्मगुरुभिर्ग्गुरुकृतप्रसादानु—

१४. वर्त्तिभिरियमाज्ञा सम्यक् पालनीयेति समाज्ञापना दूतकश्चात्र

१५. रामशीलवार्त्तः संवत् ५०० १०७ वैशाखमासे शुक्लदिवा दशम्याम् ।

मानगृह से सबका कल्याण हो । उपकार तथा गुण में निरुपम भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक निवासियों तथा प्रधानों के समक्ष ग्राम के कुटुम्बियों से कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि आप सबको ज्ञात हो कि आपके अन्य प्रणत सामन्तों से युक्त चरण-युगल से प्रख्यात तथा निर्मल एवं विपुल यश वाले सामन्त श्री अंशुवर्मा मेरे द्वारा गौरवतापूर्वक यह विज्ञापित करते हैं कि कुथेराधिकरण के वेतन भोगी एवं अधिकारीगण ही तीन प्रकार के आर्थिक करों के संचय हेतु इस दृङ्ग नामक ग्राम में प्रवेश कर सकेंगे — — — लिङ्गवल् तथा शुल्लि अधिकरणों के अधिकारीगण पञ्चापराध सम्बन्धी कार्यों के विषय में प्रवेश नहीं करेंगे । लशुन और प्याज को कर मुक्त कर दिया गया है । इस प्रकार कि हमने कृपा की है । इस आदेश के चिरस्थायित्व के लिये लिखित शिलापट्ट प्रदान किया गया है । इस प्रकार विदित हो कि हमारी कृपा पर आजीविका चलाने वालों अथवा अन्य किसी के द्वारा इस आदेश का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये । जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा तो उसको मैं किञ्चितमात्र भी सहन नही करूँगा । भावी राजाओं के द्वारा भी, धर्मगुरुओं के द्वारा, गुरुओं के कृपापात्रों के द्वारा भी इस आज्ञा का सम्यक् रूप से पालन होना चाहिये ।" इस प्रकार की राजाज्ञा है । यहाँ पर सन्देशवाहक है रामशीलवार्त—संवत् ५१७ वैशाख शुक्ल दशमी ।

XXIV

भाद्गाँव पञ्चापराध-निषेधाज्ञा-शिलालेख

संवत् ५१७ (सन् ५९५ ई)

यह अभिलेख भाद्गाँव में गोलमढ़ि नामक स्थान पर लगभग ५० सैं० चौड़ी प्रस्तर-शिला पर अंकित है। इस शिला का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों से सुशोभित है। वैण्डले के अनुसार यह अभिलेख संवत् ३१६-३१८ के मध्य का प्रतीत होता है।

१. स्वस्ति मानगृहात् अपरिमितगुणसमुदयोद्भासितयशा ब-
२. प्पपादानुध्यातो लिच्छविकुलकेतुर्भट्टारकमहाराज श्रीशिवदे —
३. वः कुशली माखो प्रंसतल[1] द्रङ्गनिवासिनः प्रधानपुरस्सरा-
४. न् ग्रामकुटुम्बिनः कुशलपरिप्रश्नपूर्व्वं समाज्ञापयति विदि-
५. तम् भवतु भवतां यथानेन प्रख्यातामलविपुलयशसा स्वप-
६. राक्रमोपशामितासित्रपक्षप्रभावेन श्रीमहासामन्तांशुवर्म-
७. णा विज्ञापितेन मयैतद्गौरवात् युष्मदनुकम्पया च कूथेर्व्[2]-
८. त्यधिकृतानामत्र[3] समुचितास्त्रिकरमात्रसाधनायैव प्रवेशोलेख्य दान-
पञ्चापराधाद्यर्थम् त्वप्रवेश इति प्रसादो वः-
१० कृतस्तदेवं वेदिभिरस्मत्पाद प्रसादोपजीवि-
भिरन्यैर्व्वा-
११. कैश्चिद् अयमन्यथा करणीयोयस्त्वेतामाज्ञां विलङ्घ्यान्यथा कु-
१२. र्य्यात् कारयेद्द वा तमहमतिराम् न — मर्षयिष्यामि येऽपि मद्-
१३. ध्र्वम् भूभुजो भवितारस्तैरपि धर्म्मगुरुभिर्ग्गुरुकृत[4] प्रसा-

---

1. B. reads Mākhoṣṭaṁsatsara.
2. B. has Vipula — — — — sa
3. B. reads—Kūbervvattyadhikṛtānām.
4. B. has Dharmagurubhir mā (— — kṛ) ta .

१४. दानुर्बत्तिभिरियमाज्ञा सम्यक् प्रतिपालनीयेति समाज्ञापना

१५. दूतकश्चात्र भोगवर्म्मं गोमी[५] संवत् ५०००१०७ ज्येष्ठ शुक्लदिवा दशम्याम् ।

मानगृह से सबका कल्याण हो । अपरिमित गुणों के उदय से प्रकाशित होते हुए यशवाले, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले लिच्छवि-कुलकेतु भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक माखोप्रंसतल और दङ्ग निवासी प्रधानों के समक्ष ग्राम-कुटुम्बियों से कुशल-परिप्रश्न पूछने के पश्चात् आदेश प्रदान करते हैं, "जैसा आप लोगों को ज्ञात हो कि प्रसिद्ध निर्मल एवं विपुल यश वाले अपने पराक्रम से शत्रु पक्ष के प्रभाव को शमित करने वाले श्रीमहा-सामन्त अंशुवर्मा के माध्यम से, आप लोगों की अनुकम्पा से मैं गौरवतापूर्वक कूथेराधिकरण के अधिकारियों को यहाँ केवल त्रिकरमात्रों को ही अच्छी प्रकार एकत्रित करने के लिये प्रवेशाधिकार लिखकर दिया है । यहाँ पञ्चा-पराधादि सम्बन्धी विषयों के उपलक्ष्य में प्रवेश निषिद्ध है । इस प्रकार हमारे चरणों के कृपापात्रों के अथवा अन्यों के द्वारा इस आदेश का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये । जो कोई भी इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा तो मैं उसे क्षण भर भी सहन नहीं करूँगा ।

मेरे पश्चात् होने वाले राजागणों के द्वारा भी, धर्मगुरुओं के द्वारा एवं गुरु के कृपानुयायिओं के द्वारा भी इस आज्ञा का अच्छी प्रकार पालन किया जाना चाहिये । ऐसा आदेश है । यहाँ सन्देशवाहक हैं भोगवर्म गोमी । संवत् ५१७ ज्येष्ठ शुक्ल दशमी ।

---

5. B. reads Bhogavarmā swāmī

XXV

भादगाँव स्थित भोगवर्मागोमीकृत राजाज्ञा शिलालेख

संवत् ५१७ (सन् ५१७+७८=५९५)

यह शिलालेख ५० सैं० मी० चौड़ा है जो भादगाँव के तुलाच्छेन टोले नामक स्थान पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र, दो शङ्खों तथा एक फूल की आकृतियों से सुशोभित है।

१. स्वस्ति मानगृहात् अपरिमितगुणसमुदयोद्भासि-
२. तयशा बप्पपादानुध्यातो लिच्छविकुलकेतुर्भ-
३. [ट्टा]रकमहाराज श्रीशिवदेवः कुशली खृपुङ्ग्राम-
४. आसूर्यविध्वद्याग्रान्[1] निवासिनः प्रधानपुरस्सरान् ग्राम-
५. कुटुम्बिनः कुशलपरिप्रश्नपूर्व्वं समाज्ञापयति विदि-
६. तम् भवतु भ[वतां यथाने] न प्रख्यातामलविपुलयशसा
७. स्वपराक्र[मोपशमि]तामित्रपक्षप्रभावेन श्रीमहा—
८. सामन्तांशु[वर्म्मणा] विज्ञापितेन मयैतद्गौरवाद्[युष्म]-
९. दनुकम्प[या च कूथे] र्वृ [र्त्यधिकृताना]म् अत्र समुचितस्त्रि।
१०. रमात्रसाधनायैव प्रवेशो लेख्यदानपञ्चापराधा
११. द्यर्थम् त्वप्रवेश इति प्रसादो वः कृतस्तदेवंवेदिभि-
१२. रस्मत्पादप्रसादोपजीविभिरन्यैर्व्वा न कैश्चिदयम—
१३. न्यथा करणीयो यस्त्वेतामाज्ञाम्
विलङ्घ्यान्यथा कुर्य्यात् कारये—
१४. द् वा तमहम् अतितरान्न मर्षयितास्मि येऽपि मदूर्ध्वम् भू—
१५. भुजो भवितारस्तैरपि धर्म्मगुरुभि[र्गुरुकृ]तप्रसादा—
१६. नुवर्त्तिभिरियम् आज्ञा[ऽ]सम् [यक प] रिपालनीयेति समा—
२७. ज्ञापना [दूतकश्चात्र भो]गवर्म्म,गोमी संवत् ५००
१८. १०७ — — — [शु] क्लदिवा [प]ञ्चम्याम्।

मानगृह से सबका कल्याण हो। अपरिमित गुणों के समुचित विकास से उद्भासित यश वाले, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले लिच्छवि – कुल-केतु भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक खृपुं ग्राम में ब्रह्मा और सूर्यादि जो भी हैं उन सब अग्रणियों तथा कुटुम्बियों के प्रधानों के समक्ष कुशल परिप्रश्न करने के पश्चात् यह आज्ञा प्रदान करते हैं कि—'आपको यह विदित हो कि जैसे इन प्रसिद्ध, निर्मल, विपुल, यशवाले तथा अपने पराक्रम से शत्रु-पक्ष के प्रभाव को शमित करने वाले महासामन्त अंशुवर्मा के द्वारा ज्ञापित मैंने गौरवपूर्वक आपकी इस अनुकम्पा से कुथेर अधिकरण के उप-जीवियों का समुचित त्रिकर (भोग, भाग, कर) संचय हेतु ही प्रवेश लिखकर दिया है। विक्रय, उपहार-दान, पञ्चापराधादि सम्बन्धी कार्यों के लिये यहाँ प्रवेश नहीं। — इस प्रकार की कृपा की गई है। यह जानने वालों हमारे चरण-प्रसादोपजीवियों और अन्य किसी के द्वारा इस आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं होना चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा, या करायेगा मैं पूर्णरूप से उसे सहन नहीं करूँगा। जो भी मेरे पश्चात् होने वाले राजागण हैं, उनके द्वारा, धर्मगुरुओं और उनके कृपानुयायियों के द्वारा इस आज्ञा का पालन अच्छी प्रकार होना चाहिये। इस प्रकार की यह विज्ञप्ति है। यहाँ दूतक हैं भोगवर्मा गोमी। संवत् ५१७ शुक्ल दिवा पञ्चमी।

XXVI

धर्मपुर स्थिअ राजाज्ञा शिलालेख

संवत् ५१८ (सन्   )

यह ४४ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख धर्मपुर नामक ग्राम में स्थित है। शिला का ऊपरी भाग भग्न चक्र एवं दो शङ्खों से अंकित है।

१. [स्वस्ति मानगृहाद्] अमल— — — — — — — — — — — — — — — — — — — —

२. — — — — — — — — — — — — — — — — — — [श्री] शिवदेवः कुशली — — — — —

३. —कु — — — — — — —

४. — — — — — समाज्ञापयति विदितम् [भवतु भवतां यथानेन] — —

५. — — — — — — — क्षितिपति — — — — — — — — — — — — — — — — — —

६. — — लन —

७. श्रीमहासामन्तांशुवर्म्मणा युष्मदनुग्रह — — —

८. कृथेर्वर्त्त्यधिकृतानामिह समुचितस्त्रीकर साधना[यैव प्रवेशो]

९. [ले]ख्यदानपञ्चापराधनिमित्तम् त्वप्रवेश इति प्रसादो वः [कृतस्तद् एवम्]—

१०. वेदिभिरस्मच्चरणोपजीविभिरन्यैर्व्वा न कैश्चिदयम् प्रसादोऽ [न्यथा कर]–

११ णीयो यस्त्वेतामाज्ञामुल्लघ्यान्यथा कुर्य्यात् कारयेद्वा तम् अह–

१२. म् न मर्षयिष्यामि येऽपि मदूर्ध्वम् भूभुजो भवितारस्तैरपि धर्म्म[गु]—

१३. रुभिर्[गु]रुकृतप्रसादानुवर्त्तिभिरियमाज्ञा सम्यक् प्रतिपालनी[या]

१४. दूतकश्चात्र विप्रवर्म्मगोमी संवत् ५००१०८ प्रथमा[षा]—

१५. ढ शुक्लदिवा द्वादश्याम् ॥

मानगृह से सबका कल्याण हो। निर्मल तथा विपुल यश से सुशोभित श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक — — — — — सूचित करते हैं कि जैसे आपको विदित है कि आपके भूपाल — — — श्री महासामन्त अंशुवर्मा द्वारा विज्ञापित मैंने आपके अनुगृह के द्वारा गौरवतापूर्वक कूथेर अधिकरण के अधिकारियों को केवल त्रिकर मात्र इकत्रित करने हेतु ही प्रवेशाधिकार लिखकर दिया है। पञ्चापराधादि सम्बन्धी कार्यों के लिये नहीं। इस प्रकार का आदेश (कृपा) है। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, हमारे चरणोंपजीवियों अथवा अन्य किसी के द्वारा भी इस आज्ञा का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये। जो भी इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा मैं उसको सहन नहीं करूँगा। मेरे पश्चात् होने वाले जो भी राजागण होंगे, उनके द्वारा श्री धर्मगुरुओं के द्वारा, गुरु-प्रसादानुयायियों के द्वारा यह आज्ञा अच्छी प्रकार पालित होनी चाहिये। यहाँ सन्देशवाहक हैं विप्रवर्म्म गोमी। संवत् ५१८ प्रथमाषाढ़ शुक्ल द्वादशी के दिन।

XXVII

बुद्धानीलकण्ठ-शिलालेख

संवत् ५१८ (सन् ५१८+७८=५९६)

४२ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख काठमाण्डू के उत्तर में पाँच मील दूर शिवपुरी पहाड़ी के निकट बुद्धानीलकण्ठ नामक स्थान पर एक दीवार में स्थित है। शिला का ऊपरी भाग पुष्पों की आकृतियों से सुसज्जित है।

१. ओ३म् स्वस्ति मानगृहाच्छ्र तनयविनयशौर्य्यधैर्यंवीर्य्याद्यशेष-
२. सद्‌गुणगणाधारो लिच्छविकुलकेतुर्भट्टारकमहाराजश्री-
३. शिवदेवः कुशली आङ्लाबकसपितानरसिंहोभयपाञ्चाली[1]—
४. निवासिनो यथाप्रधानङ्ग्रामकुटुम्बिनः कुशलमाभाष्य
५. समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां यथानेन पृथुस—
६. मरसम्पातनिर्जयाधिगतशौर्य्यप्रतापोऽपहत[2] सक—
७. लशत्रुपक्षप्रभावेन सम्यक् प्रजापालन—
परिश्रमोपार्ज्जि—
८. ताशुभ्रयशोभिव्याप्तदिङ्मण्डलेन श्रीमहासामन्तांशु[3]वर्म्मं—
९. णा युष्मद्धितविधानाय विज्ञापितेन मयैतद्‌गौरवा [द्‌-
१०. युष्मदनुकम्प] या च कूथेवृ[4]स्यधिकृतानां समुचित-
११. [स्त्रिकरमात्रसाधनायैवप्रवेशो लेख्यदान]
१२. पञ्चापराधाद्यर्थम् त्वप्रवेश इति प्रसादो वः कृत-
१३. स्तद् एवं ेदिभिरस्मच्चरणतलोपजीविभिरन्यैर्वा
१४. न कैश्चिदयम् प्रसादोऽन्यथा करणीयो—
यस्त्वेताम् आज्ञाम् विलङ्घ्या—

---

१. Bh. I. कुशला— — — — पिता नरसिंहोऽभय— — — — ॥
२. Bh. I. प्रतापापहत ॥
३. 'म' वर्ण पंक्ति के नीचे उत्कीर्णित है।
४. Bh. I. न्यधिकृताना समुचित — —

१५ न्यथा कुर्य्यात् कारयेद् वा तमहम् अतितरा-
[न्न] मर्षयिष्या—

१६. मि भाविभिरपि भूपतिभिर्धर्म्मगुरुभिर्गुरुकृतप्रसा—

१७. दानुवर्त्तिभिरियमाज्ञा सम्यक् प्रतिपालनीया, दूतकश्चात्र

१८. विप्रवर्म्मगोमी संवत् ५००१०८ प्रथमाषाढ़शुक्लद्वादश्याम् ।

मानगृह से सबका कल्याण हो । वेदशास्त्रों, नय (नीति अथवा प्रतिभा), विनयशीलता, शौर्य, धैर्य, वीरता आदि सभी सद्गुणों के आधार लिच्छवि-कुल-केतु-भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक आङ्लाबक तथा पिता नरसिंह नामक ग्रामों के निवासी दो पाञ्चालिकों की प्रधानता के नेतृत्व में ग्राम कुटुम्बियों से कुशल परिप्रश्न पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं—"जैसे आपको विदित हो कि भयंकर युद्ध सम्मुख होने पर उसे जीतकर, अपने शौर्य और प्रताप से सम्पूर्ण शत्रुपक्ष के प्रभाव को समाप्त करने वाले अच्छी प्रकार प्रजा का पालन और परिश्रम से प्राप्त शुभ यश द्वारा सम्पूर्ण दिङ्मण्डल को व्याप्त करते हुए श्रीमहासामन्त सुवर्मण के द्वारा आपकी कृपा द्वारा तथा आपके हित-विधान के लिये गौरवता पूर्वक यह विज्ञापित किया जाता है कि कूथेर अधिकरण में रहने वाले कर्मचारियों (अधिकारियों) को केवल त्रिकर-साधना (तीनों कर इकत्रित करने) के लिये ही प्रवेशाधिकार दिया जाता है। तथा लेखन कार्य, दानोपहार एवं पञ्चापराधसम्बन्धी कार्यों के विषय में उनका प्रवेश यहाँ निषिद्ध है। ऐसी कृपा की है। इसे इस प्रकार जानने वालों के द्वारा अथवा अन्य किसी के द्वारा इस नियम का अतिक्रमण न हो। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करके विपरीत आचरण करेगा या करायेगा वह कदाचित् मेरे द्वारा सह्य नहीं होगा।

बाद में होने वाले भूपति, धर्मगुरु, गुरुप्रसादानुयायियों के द्वारा भी यह आज्ञा अच्छी प्रकार से पालनीय है। यहाँ दूतक हैं विप्रवर्मा। संवत् ५१८ प्रथमाषाढ़ शुक्ल द्वादशी।

XXVIII

सतुंगल वनछेदन-निषेध शिलालेख

संवत् ५१९ (सन् ५१९+७८=५९७ ई०)

यह २६ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख सतुंगल ग्राम में स्थित है। इसका ऊपरी भाग एक चक्र एवं दो शङ्खों की आकृतियों से सुशोभित है।

१. [ओ३म् स्वस्ति मानगृहात्परिमित] गुणसमुद[योद्भासितयशा बप्प—
२. [पादानुध्यातो लि]च्छवि कुलकेतुर्भट्टारक महा[राजश्री]
३. [शिवदेवः कुशली] कादुङ्ग्रामनिवासिनः प्रधान पु[रस्स[—
४. [रान् ग्रामकुटुम्बि] नः कुशलमाभाष्य समा ज्ञापय [ति—
५. वि] [दितं भवतु भव] तां यथानेन शरद्घनशशाङ्क मु [खेन]
६. शत्रुसंख्याप्रमित (परिमित) बलपराक्रमेण श्री महासा [म]न्तां—
७. [शु वर्म्म]णा विज्ञापितेन सता मयैतद्गौरवात् [यु]
८. [युष्मदनु] कम्पया च शिलापट्टकशासनेऽभिलिख्य
९. प्र [सादो]ऽयम् वः कृतो युष्मद्ग्रामनिवासिनामितः
१०. तो [र] ण सुपत्राहरणाय सर्व्वत्र वनभूमि—
११. ङ्गच्छतां तदादायागच्छताञ्चाध्वनि — फेरङ्कोट्टनि—
१२. वासिभिरन्यैश्च न कैश्चिद् दात्रकट्टारककुठार—
१३. काष्ठाद्याक्षेपो विधारणा वा कार्य्या यस्त्वेतामाज्ञाम्
१४. अविगणय्यान्यथा कुर्य्यात् कारयेत् वा स नि
१५. [य]तन्नृपाज्ञातिक्रमनियमनमवाप्स्यति
१६. भ [विष्य] द्भिरपि भूपतिभिर्द्धर्म्मगुरुकृत-
१७. [प्रसादा] नुवर्त्तिभिरयन् प्रसादोऽनुपालनीय
१८. [इति स] माज्ञापना दूतकश्चात्र वार्त्तपुत्र गुणचन्द्रः
१९. [संवत्] ५००१०९ प्रथमपौषशुक्लदिवा द्वादश्याम्॥

ओ३म् मानगृह से सबका कल्याण हो। असीमित गुणों के समुदय के द्वारा प्रकाशित यशवाले, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले, लिच्छवि-कुल की कीर्ति-ध्वजा महाराज शिवदेव कुशलतापूर्वक कादुग्राम निवासियों,

प्रधान मुखियाओं तथा ग्राम-कुटुम्बियों से कुशल सम्भाषण करके सूचित करते हैं ।

"आप लोगों को ज्ञात हो कि जैसे इस विज्ञप्ति के द्वारा, शारदीय धनों से सुशोभित चन्द्रमुख वाले, अपने अपरिमित बल-पराक्रम के द्वारा असंख्य शत्रुओं को शमित करने वाले श्रीमहासामन्त अंशुवर्मा के द्वारा, आपकी अनुकम्पा के द्वारा, गौरवतापूर्वक मेरे द्वारा यह आज्ञा शिलापट्ट पर लिखकर यह कृपा आप पर की गई । आपके ग्रामनिवासी यहाँ से तोरणादि के लिये पत्ते लेने के लिये, सर्वत्र वन-भूमि में जाते हुए और पत्ते लाते हुए मार्ग में फोरनकोट निवासियों द्वारा अथवा अन्यों के द्वारा भी यहाँ दात्री, कैंची से वृक्ष आदि पर आघात न करें न करवायें । जो इस आज्ञा को न मानकर विपरीत करेगा या करायेगा वह बन्दी बनाया जाकर राजा की आज्ञा का अतिक्रमण करने के नियम के द्वारा दण्डित होगा ।

आगे होने वाले राजाओं, धर्मगुरुओं, और उनकी कृपा के अनुगामियों के द्वारा भी इस आज्ञा का पालन होना चाहिये । ऐसी यह विज्ञप्ति है । यहाँ सन्देशवाहक हैं वार्तपुत्र गुणचन्द्र । संवत् ५१९ प्रथमाषाढ़ शुक्ल द्वादशी ।

XXIX

टोखा भूमिमर्यादा शिलालेख

संवत् ५१९ (सन् ५१९+७८)=५९७ ई०

३९ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख धर्मपुर गाँव के टोखा नामक स्थान पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों की आकृतियों से सुशोभित है। प्रथम छः पंक्तियाँ खण्डित एवं अस्पष्ट हैं।

७. — — — — — — — —यथे — — — — — — — —
— — — — — — — — — — — — —

८. — — — — — — — — — — — — — — — — —लभ
— — — — — — — — — — — — — — — —

९. — — —सङ्गमस्ततस् त — — — — — — — — —

१०. — — — — — — — — — — — — — — — — सेतु
— ङ्ग — — — — — —

११. — — — — — — — — —परि— — — — — — —
स् ततो मार्ग्गमनुसृत्य — — —

१२. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— —लवृक्षस्तस्य चाधस्ति— — —

१३. — — — — — — — — — — — — — — — — —
[अनु] सृत्य वसे— तस्मात् उत्तर — — —

१४. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— रे उदकपानीयपातस्तस्मादुत्त[र]

१५. — — — — — — — — — — — — — — — — —
पञ्चकश्च ततो दक्षिणानुसारतो — —

१६. — — — — — — — — — — — — — — — — —
तो तस्यैव — रि —म् अनुसृत्यरिनू —

१७. — — — — — — — — — — — — — — — — —
स्य दक्षिणतो ज्ञातिखन्नदीत — —

१८. — — — — — — — — — — — — — — — —
— स्तदेव — —परिक्षिप्त–

१९. — — — — [न कैश्चिदस्मद्पादप्रसादोपजीविभिः] रन्यैर्व्वा सूक्ष्मापि पीड़ा कार्य्या—

२०. [यस्त्वेतामाज्ञां विलङ्घ्यान्यथा कुर्य्याद् कार] येद् वा तमहम् न मर्षयिष्यामि येऽपि

२१. [मदूर्ध्वम् भूभुजो भवितारस्तैरपि धर्म्म] गुरुभिर्ग्गुरुकृतप्रसादानुर्वात्त—

२२. भिरियमाज्ञा सम्यक् प्रतिपालीया] — — — — — — यतो — प — — ह —

२३. — — — — — — — — — — — — — — —एड. त. इ— माज्जित — नैर्द्द — —

२४. — — — — — — — — — — — — — — — — — — सत्तोयावलीयम् खलाय

२५. — — — — — — — — — — — — तदा तस्य फलम्— — — — — —प्यानानि—

२६. — — — — — — — — — — — — — — दा. य. — वन्य . प्रजा — — — दत्तं उपहरन्

२७. — — — — — — — — — — — — — — — न — — — — घेन्न कर्त्तव्यम् भू — — पहरेत्

२८. — ॥ दूतकश्चात्र विप्रवर्म्मगोमी संवत् ५१९

२९. — —शुक्लदिवा दशम्याम् ॥

७. — — यथा

८. — —

९. — — गुणसङ्गम वैसे ही

१०. — — सेतु — —

११. — — मार्ग का अनुसरण करते हुए

१२. — — — —

१३. अनुसरण करके

१४. — — उसके उत्तर में कुआ
१५. — — पाँच — दक्षिण में
१६. उसके — —अनुसरण करते हुए
१७. — — उसके दक्षिण में ज्ञाति वालों के द्वारा खोदी गई नदी के साथ साथ
१८. — — वही — — में
१९. किसी के द्वारा हमारे चरण और कृपा के उपजीवियों के
२०. द्वारा और अन्यों के द्वारा थोड़ी सी भी पीड़ा नहीं दी जानी चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करके विपरीत करे या करायेगा उसको मैं सहन नहीं करूंगा।
२१. मेरे पश्चात् होने वाले जो भी राजागण हैं, उनके द्वारा, धर्मगुरुओं के द्वारा, गुरुओं के कृपानुयायियों के द्वारा
२२. यह आज्ञा सम्यक् रूप से पालनीय है।
२३. — — --

---

९. Levi reads Line from Na. 9 to 29 सङ्गमस् ततस्त
१०. सेतु ...
११. पूर्व्व — स् ततो मार्ग्गग् अनुसृत्य
१२. लवृक्षस् तस्य चाधस् ति
१३. सृत्य ... तस्मादुत्तर
१४. नीयपातस् तस्मादुत्तर
१५. ततो दक्षिणानुसार
१६. म् अनुसृत्य
१७. स्य दक्षिणतो जातिरवृन्नदी
१८. परिक्षेप्ता
१९. न्यैर्व्वा
२०. मर्षयिष्य्
२१. प्रसादानुव
२६. तद्यश्च . . . . म् अपह

२४. यह — — — दुष्ट के लिये

२५. — तब उसका फल दिया गया ।

२६. — — प्रजा को — — — दिया गया — — — अपहृत किया गया ।

२७. — — नहीं — — करना चाहिये — — भूमि का अपहरण नहीं करना चाहिये ।

२८. — — यहाँ सन्देशवाहक हैं विप्रवर्म गोमी । संवत् ५१९

२९. — — शुक्ल दशमी ।

---

२७. अपह

२८. दूतकश्चात्र विप्रवर्म्मगुमी संवत् ५१९

२९. शुक्लदिवा दशम्याम् ।

XXX

धर्मपुर कर-मर्यादा शिलालेख

संवत् ५२० (सन्+७८) ५९८

२५ सें० मी० चौड़ा यह शिलालेख धर्मपुर नामक गाँव में विद्यमान है। शिलालेख का ऊपरी भाग खण्डित है तथा वह टूटकर लुप्त हो गया है। प्रथम ग्यारह पंक्तियाँ नष्ट प्राय हैं।

१२. — — — भ्यश्च मल्लकर — — — — —
१३. — — चितताम्रपनचतुष्टयादूर्ध्वं — — —
१४. **मु इति प्रसादद्वयम् समधिकं दत्तं तद्**
१५. **एवं वेदिभिर्न्न कैश्चिदिदमप्रमाणङ्कार्य्यम्**
१६. **येऽप्यस्मदूर्ध्वंम् भूभुजो भवितारस्तैर**
१७. **पि धर्म्मंगुरुभिर्ग्गुरुकृतप्रसादानु—**
१८. **रोधिभिरेव भाव्यमिति समाज्ञापना**
१९. **दूतकश्चात्र वार्त्त भोगचन्द्रः संवत्**
२०. ५००२० **माघशुक्ल द्वादश्याम्।**

१२. — — — और के द्वारा मल्लकर — — —
१३. — — — चार बातों के अतिरिक्त ताम्रपट्ट पर लिखी गई। — — —
१४. ऐसी जो दो कृपाएँ अधिक दी गई, उसे— —
१५. इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, अन्यों के द्वारा अमान्य न की जाये।
१६. और मेरे पश्चात् जो भी होने वाले राजागण हैं, उनके द्वारा
१७. धर्मगुरुओं के द्वारा, गुरुओं
१८. के कृपापात्रों के द्वारा इसका सम्मान होना चाहिये। यह राजाज्ञा है।
१९. यहाँ पर दूतक हैं वार्त भोगचन्द्र। संवत्
२०. ५२० माघशुक्ल द्वादशी।

XXXI

खोपासी कर-निर्धारण शिलालेख

३४ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख भादगाँव के पूर्व में स्थित है ।

१. स्वस्ति मानगृहात् अपरिमितगुणसम्पत् लिच्छविकुलानन्दकरो
२. [भ]ट्टारक महाराज श्रीशिवदेवः कुशली कुर्पासीग्रामनिवा-
३. सिनः प्रधानपुरस्सरान् कुटुम्बिनः कुशलं अभिधाय समाज्ञा-
४. [प] यति विदितमस्तु वो यथानेन [1]स्वगुणमणिमयूखालोक-
५. [ध्व] स्ताज्ञानतिमिरेण भगवद्भवपादपङ्कजप्रणामानुष्ठा-
६. नतात्पर्य्योपात्तायतिहितश्रेयसा स्वभुजयुगबलोत्खाता-
७. [खि] ल वैरिवर्गेण श्रीमहासामन्तांशुवर्म्मणा मामू विज्ञप्य मदनु
८. [ज्ञा] तेन सता युष्माकम् सर्व्वाधिकरणाप्रवेशेन प्रसादः कृतः ।
९. [स]मुपस्थितविचारणीयकार्य्येषु स्वतलस्वाविनैव यूयं विचा—
१०. रणीयाः सर्व्वकार्य्येषु चैकमेव वो द्वारं द्वारोद्घाटनकैलास—
११. [कूट]यात्रयोश्च भवद्भिः प्रत्येकम् पञ्चाशज्जातिशुक्लमृत्तिका-
देया—
१२. [श्चिर] स्थितये चास्य प्रसादस्य शिलापट्टकेन प्रसादः कृतस्त-
१३. देवम् वेदिभिरस्मत् पादप्रसादोपजीविभिरन्यैर्व्वा नायं प्रसादो-
१४. ऽन्यथा करणीयो यस्त्वेतामाज्ञाम् उत्क्रम्यान्यथा कुर्य्यात् कारयेद् वा
त—
१५. महं मर्य्यादाभङ्गकारिणमतिराम् न मर्षयिष्यामि भाविभिर-
१६. पि भूपतिभिर्द्धर्म्मगुरुकृतप्रसादानुर्वत्तिभिरिय-
१७. म् आज्ञा सम्यगनुपालनीयेति समाज्ञापना ।। दूतकश्चात्र
१८. देशवर्म्मगोमी संवत् ५००२० चैत्रकृष्णपक्षे तिथौ पञ्चम्याम् ।।

मानगृह से सबका कल्याण हो । अपरिमित गुण-सम्पदा से युक्त लिच्छवि कुल को आनन्दित करने वाले भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक कुर्पाशीग्राम निवासियों प्रधान कुटुम्बियों से कुशल पूछकर विज्ञापित करते

---

१. कोमला वृत्यनुप्रास, रूपक अलङ्कार

हैं—"आप लोगों को जैसे ज्ञात हो कि अपने गुण रूपी मणि किरणालोक से समस्त अज्ञान-तिमिर को ध्वस्त करने वाले भगवान् शङ्कर के चरण कमल को प्रणाम करते हुए और उससे प्राप्त अत्यन्त श्रेयस् द्वारा अपनी दोनों भुजाओं से शत्रुवर्ग को निर्मूल करने वाले श्रीमहासामन्त अंशुवर्मा ने मुझे बतलाकर मेरी आज्ञा से आपके अधिकृत प्रदेश में सभी अधिकरणों के प्रवेश का निषेध करके कृपा की है, और उपस्थित विचारणीय कार्यों में अपने भूस्वामियों के द्वारा ही आप लोग विचार करें। सब कार्यों में आपके लिये एक ही द्वार होगा। द्वार के उद्घाटन और कैलाशकूट यात्रा के समय आप प्रत्येक के द्वारा पचास स्वर्ण, चाँदी, मिट्टी आदि की मुद्राएँ दी जानी चाहिएँ। इस आज्ञा की चिरस्थिति के लिये इस आज्ञा को हमने शिलापट्टक के द्वारा प्रकाशित किया है। इसे जानने वाले हमारी चरण-कृपा पर आजीविका चलाने वाले पुरुषों के द्वारा इस आज्ञा का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये। ऐसा जानने वालों के द्वारा, हमारे चरणोपजीवियों के द्वारा अथवा अन्य के द्वारा इस आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं किया जाना चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करे या कराये तो मैं उस मर्यादा भंग करने वाले को निश्चित रूप से सहन नहीं करूँगा। भावी राजागणों के द्वारा भी, धर्मगुरुओं के द्वारा, गुरुओं के कृपापात्रों द्वारा इस आज्ञा का सम्यक् रूप से पालन होना चाहिये। यह राजाज्ञा है। यहाँ सन्देशवाहक हैं देशवर्म्म गोमी संवत् ५२० चैत्र कृष्णपक्ष पञ्चम तिथि ।

XXXII

छापा गाँव शुल्क-निर्धारण शिलालेख

लगभग संवत् ५२१ (सन् ५२१+७८)=५९९ ई०

यह ४८ सैं० मी० शिलालेख वज्रवाराही के निकट छापागाँव में स्थित है। शिलालेख का ऊपरी भाग टूटकर लुप्त हो गया है।

१. स्वस्ति मानगृहादपरिमितयशा [बप्पपादानुध्यातो लिच्छविकुल] केतु-
२. भट्टारकमहाराजश्रीशिवदेवः[कुशली] — — — — — — [नि]—
३. वासिनः प्रधानपुरस्सरान् कुटुम्बिनः कुशलं श्रा [भाष्य समाज्ञाप]
४. यति विदितं भवतु भवतां यथेह — — द — — — — — — — — —
५. मत्स्योपक्रयङ्कृत्वाप्रतिनिवर्त्तमानानामेकस्य पु— — — — — —
६. शुल्कापह्लासेन काष्ठिकामत्स्यभारक एर्कास्मिश्चि त — — — [ताम्रि]—
७. कपणचयञ्च भुक्कुण्डिकामत्स्यभारके दश भुक्कु — — — — — —
८. त्रिपणाः राजग्रीवके दशराजग्रीवमत्स्याः पणत्र[य]— — — — —
९. इमत्स्यभारके — — . ई — — — — त्रिपणा मुक्ता मत्स्यभा- [रके] — —
१०. य — — — — — — — — — — — — — — — — — स्तमशुल्कं तदस्य — — —
११. केतु — — — — — — — — — — — — — — — — — कल्प्य प्राङ्नृपतिभि — —
१२. — — — — — — — — — — — — — — — — — — — व्यापियश — — —
१३. — — — — — — — — — — — — — — — — — —मु: अस्मिन् प्रसादे — —

१४. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— कोवेकै — . य . — —
१५. — — — — — — — — — — — — — — — [चिरकाल]
स्थितये चास्य प्र [सा]
१६. [दस्य] — — — — — — — — — — — — — — —
नमिदम् दत्तं — —
१७. — — — — — — — — — — — — — — — — --
— — —र् भाविभिश्चायं
१८. [प्रसाद] — — — — — — — — — — — — — -
— —[भूप] तिभिर्द्धर्म्मगुरु-
१९. भिर्गुरु[कृत प्रसादानुर्वात्तिभिरियमाज्ञा सम्यक् पालनीये] ति समाज्ञापना
२०. दूतकश्चात्र — — — — — — — — — — — — वैशाख-
शुक्लपञ्चम्याम् ।

कल्याण हो मानगृह से । अपरिमित यशवाले, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले लिच्छविकुल की ध्वजा भट्टारक महाराज श्रीशिवदेव कुशलता-पूर्वक ग्रामनिवासियों और प्रधान कुटुम्बियों के सम्मुख कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि—

४. "आप सबको विदित हो कि जैसे
५. मछली व्यापार करके वापिस लौटने वालों का एक का— — —
६. शुल्क के कम होने पर — — — -— काष्ठिका मछली के भार वाले किसी एक में — — —ताम्र
७. का तीनपण और भुक्कुण्डिका मत्स्य के भार में १० भुक्कु — — — — —
८. राजग्रीवक मत्स्य के भार में तीन पण, १० राजग्रीव का तीन पण— — —
९. — — इ मछली के भार में — — तीन पण, मुक्ता मछली के भार में
१०. य — — — शुल्व है, वह इसका — — —
११. केतु — — — — — कल्पना करके पूर्व राजाओं के द्वारा — — —
१२. व्याप्त यश — — —

१३. — — — —इस कृपा में — — —

१४. — — —कोवेकों के द्वारा

१५. — — —चिरकाल तक स्थिति के लिये और इस

१६. आज्ञा का — — — —यह दिया गया — — —

१७. — — — — और होने वालों के द्वारा यह

१८. आज्ञा — — — — भूपतियों के द्वारा, धर्म

१९. गुरुओं के द्वारा, उनके प्रसादानुवर्तियों के द्वारा यह आज्ञा सम्यक् रूप से पालनीय है ।

२०. यहाँ सन्देशवाहक हैं — — — —
वैशाख शुक्ल पञ्चमी ।

XXXIII

बनेपा मर्यादा शिलालेख

लगभग संवत् ५२३ (५२३+७८=६०१ ई०)

३५ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख बनेपा नामक ग्राम में स्थित है। इसका ऊपरी भाग चक्र तथा दो शङ्खों से सुशोभित है।

१. [स्व]स्ति मानगृहादनवगीत — — — — — — — — — — — — — — —

२. —ताहितप्रतापधन्या — — —]बप्पपादानुध्यातो लिच्छविकुलकेतु-र्भट्टारक]

३. [म]हाराज श्रीशिवदेवः [कु]शली — — — — — — — — — — — —कु—

४. टुम्बिनः कुशलम् आभाष्य [समाज्ञापयति] विदितं भवतु भवतां यथानेन]

५. — — कविद्यामग्रपरिज्ञान — — — — — — — — — — — — — — — —

६. —विशेषवादेन दिगन्तरविसारि — — सामन्त — नश— — — — — —

७. — — शेष — मन्ममण्डलेन म [हाराजा] धिराज श्रीसामन्तांशु-वर्म्मणा] — —

८. — — — —म् प्राधार्य्यं तद — — — — — — — —क्ले-शापहारि — — — — — — — —

९. — — — — शिखरस्वामिना — — — — — — प्रावेश्यको — — — — — — — — — —

१०. — — — ग्रामः कृतोऽस्य चो — — — — —[मा]र्ग — स्तमनुसृत्य — — — — — — — —

११. [देव] कुलम् ततः पूर्वदक्षि[णेन] — — — — — —[नु] सृत्यशु-
शान — ह — — — — —

१२. —पूर्व्वेण तेखुंदुलस्रोतस् तू — — — — — —मार्ग्गं गोटनक्षेत्र—
— — — — — — — — —

१३. —पर्व्वतमूलं दक्षिणेन — — — — — ततः पश्चिमेन — —
— — — — — —

१४. — — —दक्षिणेन . एलन्तीनदी — — — पश्चिम चन्द्रेश्वर

१५. — —ङ्ग्रामस्तत उत्तरेण दक्षिणेश्वरस्ततः पर्व्वतमूलं पूर्व्व — —
— —

१६. —पानीयमार्ग्ग इत्येतत्सीमपरिक्षिप्तस्तस्यात्र चिरका[ल स्थितये]

१७. शिलापट्टकशासनं तेभ्यो दत्तमिति कैश्चिद् मत्पादप्रसा[दोपजीवि]-

१८. [भि] रन्यैर्वा नात्र सूक्ष्मापि पीडा कार्य्या [ये त्वि] मामाज्ञाम् —
— — —

१९. [न्य]था कुर्युः कारयेयुर्व्वा— — — — — — — — — — —
— — — — — —

२०. — — — — — लिच्छवि [व] न्शक्रमाग — — — — — — —
— — — — —[धर्म्मगु]—

२१. [रुभि]र्गुरुकृतप्रसादानुर्वर्तिभिरियमा—[ज्ञा सम्यक् प्रतिपालनी]

२२. [येति समाज्ञापना दूतक] श्चात्र — — — — — गोमी [संवत्]
— —

२३. श्रावणमासे — — — — — — — — — — —

मानगृह से सबका कल्याण हो। अवर्णनीय — — — कल्याणकारी प्रताप से धन्य — — — बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले, लिच्छवि कुल के ध्वजा भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक ग्राम-कुटुम्बियों से कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि आप सबका विदित है कि— — — —विद्या, रोग का ज्ञान — — — विशेष बाद के द्वारा दिशाओं में प्रसरित — — — सामन्त — — — बुद्धिमान सामन्त-मण्डल से युक्त महाराजाधिराज श्री सामन्त अंशुवर्मा — — धारण करके उस क्लेश को हरने वाले — — — —शिखरस्वामी द्वारा — — — द्वार — — — ग्राम इसका किया गया — — —उस मार्ग का अनुसरण करके मन्दिर उसके पश्चात् पूर्व दक्षिण में अनुसरण करते हुए — — —पूर्व में तेखुंदुल स्रोत -- — —मार्ग गोटन क्षेत्र — — — पर्वत की तलहटी के दक्षिण में
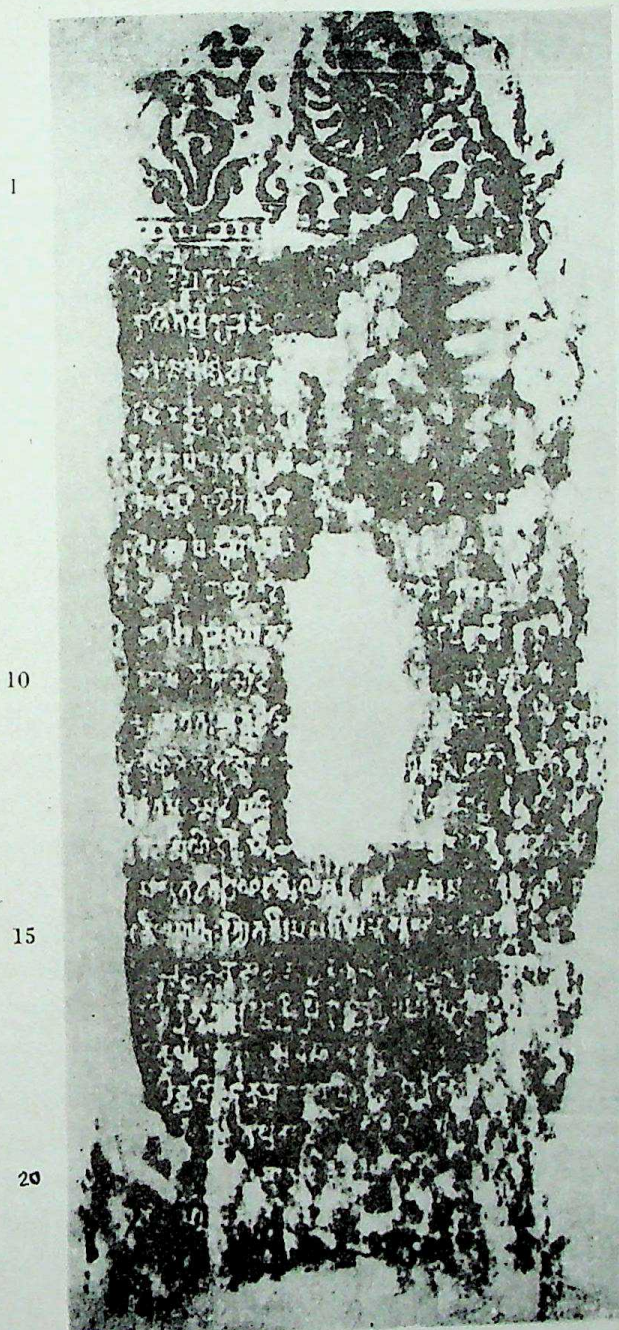
Inscription XXXIII

— — —उसके पश्चात् पश्चिम से — — —दक्षिण में एलन्ती नदी, पश्चिम में चन्द्रेश्वर ग्राम

उसके पश्चात् उत्तर में दक्षिणेश्वर, तत्पश्चात् पर्वत की तलहटी, पूर्व में — — — प्याऊ वाला जलमार्ग, यह इसकी सीमा बनाई गई और इसके चिरस्थायित्व के लिये यहाँ पर उनके लिये शिलालेख प्रदान किया है। किन्हीं के द्वारा भी थोड़ी सी भी पीड़ा नहीं दी जानी चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा (मैं उसे सहन नहीं करूँगा) — — — लिच्छवि वंश के क्रमागत राजागण, धर्मगुरु, गुरुओं के कृपापात्रों के द्वारा इस आज्ञा का पालन होना चाहिये। इस प्रकार की आज्ञा है। यहाँ सन्देशवाहक हैं— — गोमी संवत् — — श्रावण मास में — — —

XXXIV

विक्रय-निषेध कोट्टमर्यादाज्ञा शिलालेख

संवत् लगभग ५२५ (सन् ५२५+७८=६०३)

यह लगभग ४६ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख छंगूनारायण मन्दिर में स्थित राजा मानदेव के स्तम्भ-शिलालेख के सम्मुख ही स्थित है। शिला का ऊपरी भाग सुन्दर पुष्पों की आकृतियों से सुसज्जित है। तिथि अस्पष्ट है।

१. [स्व]स्ति मानगृहात् प्रशस्तानेकगुणगणाधारो लिच्छविकुलकेतु-भ॑ट्टारकमहा—

२. राजश्रीशिवदेवः कुशली गुङ्दिमक ग्रामनिवासिनः प्रधानपुरस्सरान् ग्रामकु—

३. टुम्बिनः कुशलपरिप्रश्नपूर्व्वम् समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां यथाने—

४. [1]न स्वयशोमरीचिविस्तरव्याप्ताशेष-दिङ्मण्डलेन प्रणतसामन्तशिरोमणि—

५. मयूखविच्छुरितचरणारविन्दद्युतिना श्रीसामन्तांशुवर्म्मणा विज्ञा-पितेन

६. मयैतद्बहुमानाद्युष्मदनुकम्पया चानेनैव साकं समवाप्य पूर्व्वं — — भू —

७. त्यक—थशजादाहृतैर्य्यथाज्ञम् अनुतिष्ठद्भिर्य्युष्मत्पूर्व्वकैराराधितैर-स्मद्गुरु—

८. भिः कृतसीमनिर्ण्णयो योऽयं सर्व्वकोट्टमर्य्यादोपपन्नत्वादचाटभट-प्रवेश्यो

९. वसतये कृषिकर्म्मणे च कोट्टोवः प्रतिपादितासीदस्योत्तरपूर्व्वतोऽधस्ताद्द दक्षिण—

१०. राजकुलमुण्ड्रि (पुण्ड्रि) राजकुलयोर्भूमिक्षेत्रैः परिवर्त्य प्रीतमनसा मयापि पूर्व्वलब्धेन सहैकीकृत्य शि—

---

१. अधिकालंकार।

११. लापट्टकशासनमिदम् वो दत्तं अङ्गारञ्च चक्रासरलकाष्ठं — — य
प्रसादश्च यथा

१२. प्राग् — — स्त — श्रो वोपरिखभोङ्गा—
वाग्वत्या — — त्य — — — ङ्ग्राममहानु—

१३. द्य — — — — — रन — : पुरो युष्मद् —सैश्च कैश्चिद् विक्रेया-
श्चिलकञ्च कञ्चिदप्यशेष—

१४. म् अविक्रेयं यथा प्रतिषिद्धदस्तुद्वयमाज्ञानाद्यशंङ्ग— — — —द्धिक
— — — —

१५. कृताङ्गारञ्वलकाक्षेपोऽसौ भवद्भ्यो मुच्येत स्ववनादाहृत्य— — —
— — — — — — — —

१६. चत्वारिंशदधः सरलकाष्ठं विक्रीणतां वोवस्कराधिकृतै — — —
— — — — — — — —

१७. स्मदगोत्रजा ये कोट्टाद्बहिरन्यत्र निवसेयुस्तेषाङ्कार्य्यप्रयोजने स्वकोट्टा-
— — —

१८. — वद्वारङ्कोट्टसीमा च ग्रामस्य पश्चिमतो दक्षिणतश्चेदोलाशिख-
राटवीपर्यं—

१९. न्तस् तत् उदलमलक सेतु शातुनृतीदुल चिलागृहखिलभूमि बुर्दुम्ब्रदुल्
नदीसङ्ग — —

२०. —श उत्तरतो मणिमतीम् पुरोऽनुसृत्य भारविश्रमणस्थानस्य पूर्व्वतो
— इ —ष्ट —

२१. पानीयस्रोतस्ततो रिप्शिङ्को सेतुवट-
सिङ्प्रोंज्ञम्बू प्रोङ्निप्रङ्प्रोङ्प्रोवाम् संक्रमेण त[तः]

२२. पर्व्वतमूलम् ततो नदीपूर्व्वतो विह्लङ्गा श्रोतः पर्व्वतस्योपरि विह्लङ्
मार्ग्गदक्षिणेन

२३. पानीयपातस्ततो मार्ग्गशिलां सेतुसरलवृक्षप्लक्षमूलानि यथाक्रमम्
तद् ए—

२४. तत्सीमपरिक्षिप्तेऽस्मिन् कोट्टेन कैश्चिदस्मत्पादप्रसादोपजीविभिर-
न्यैर्वा न सूक्ष्मा-

२५. पि पीड़ा कार्य्या यस्त्वेतामाज्ञाम् विलङ्घ्यान्यथा कुर्य्यात् कारयेत् वा
तमहम् न मर्षयि—

२६. ष्यामि येऽपि मदूर्ध्वम् भूभुजो भवितारस्तैरपि धर्म्मगुरुभिर्गुरुकृत-
प्रसादा-

२७. नुर्वर्त्तिभिरियमाज्ञा सम्यक् प्रतिपालनीया यत्कारणम् बहुभिर्व्वसुधा[1]
दत्ता राजभिस्

२७. सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ।।
षष्ठि वर्षसहस्राणि

२९. स्वर्ग्गे मोदति भूमिदः ।
आक्षेप्ता चानुमन्ता च तावन्ति नरके वसेत् ।।
[स्वद] त्ताम् [परद]—

३०. त्ताम् वा [यो] [हरेत् वसुन्धराम् ।
स वि] ष्ठायाम् कृमिर्भूत्वा पितृभिः सह पच्यते ।। संवत्

३१. —
— — — — — — —वार्त्त इति ।
— — — — — — — — — — — — — — —

मानगृह से सबका कल्याण हो। प्रशंसनीय अनेक गुणगणों के आधार, लिच्छवि-कुल-केतु भट्टारक महाराज श्री शिवदेव कुशलतापूर्वक गुण्डिका ग्राम निवासियों, प्रधान मुख्यों तथा ग्रामकुटुम्बियों को सर्वप्रथम कुशल परिप्रश्न करके यह सूचना देते हैं कि—"आप सबको विदित हो जैसे कि इनके यश-किरण-विस्तार से व्याप्त सम्पूर्ण दिङ्मण्डल में प्रणत सामन्तों की शिरोमणियों की किरणों से चमत्कृत जिनके चरणारविन्द हैं, उस द्युति से युक्त श्री सामन्त अंशुवर्मा के द्वारा अत्यधिक सम्मानपूर्वक यह विज्ञापित किया जाता है कि इसके साथ साथ पहले भी इस आज्ञा का आदरपूर्वक पालन करने वाले तुम्हारे पूर्ववर्ती सेवकों और आराध्य गुरुओं के द्वारा किये गये सीमा-निर्णय के अनुसार तथा दुर्ग के सभी अपेक्षित आदर्शों से सर्वकोट्टपूर्ण होने के कारण यह सीमा चाट और भट के प्रवेश एवं निवास हेतु नहीं बल्कि कृषिकर्म के लिये ही आप लोगों के द्वारा प्रतिपादित की गई। इस सीमा के उत्तर-पूर्व में नीचे की ओर दक्षिण-राजकुल और पुण्डरी राजकुल दोनों के भूमि-क्षेत्रों के द्वारा विनिमय करके उसे पहले से ही प्राप्त भूमि-क्षेत्र में मैंने अपने प्रेमपूर्वक मन से मिला दिया है। इस प्रकार का शिलापट्ट लिखकर आप लोगों को दिया गया है।

यह आज्ञा जैसे कि जङ्गल से लाई गई लकड़ी के कोयले, चक्रदारु तथा देवदार वृक्ष के सम्बन्ध में है। पूर्व में यह सीमा वाग्मती नदी की श्रोवोपरिख

तथा भोङ्गा खाइयों के साथ-साथ जाती है। पहले दिनों में जैसे तुम्हारे या किन्हीं दूसरों के द्वारा जो चिलकाएँ बेची जाती थीं, अब उस प्रकार एक भी चिलका कदाचित् नहीं बेची जानी चाहिये। ये दोनों वस्तुएँ विक्रय के लिये निषिद्ध हैं। अपने निजी जङ्गल में गिरे हुए वृक्ष से बने हुए कोयले लाने के लिये हमारे द्वारा प्रदत्त दण्ड से मुक्त किये जाते हो। जो चालीस देवदार वृक्षों से कम बेचेगा वह उच्चाधिकारियों (वस्कराधिकृत्य) के द्वारा — — — — — हमारे गोत्रज जो कोट्ट (दुर्ग) के बाहर अन्यत्र निवास करते हैं, उनके कार्य-प्रयोजन में अपना कोट्ट — — — — द्वार तक और कोट्ट की सीमा गाँव के पश्चिम-दक्षिण में दोलाशिखराटवी तक, उसके पश्चात् उदल्मलक सेतु, शातुन्तीदुल, चिलागृह तथा बुदुम्ब्रदुल् नदी के साथ-साथ सम्पूर्ण भूमि — — — उत्तर में मणिमति के सामने से अनुसरण करते हुए भारविश्रमण स्थान के पूर्व से — — — जो जल-स्रोत है, उसके पश्चात् रिप्शिङ्को सेतु, वटसिङ्प्रो, जम्बू प्रङ्गिन तथा प्रङ्प्रोङ् प्रोंवाम् से घूमकर उसके पश्चात् पर्वत की तलहटी तथा नदी के पूर्व से विल्लेखा श्रोत पर्वत के ऊपर विल्लवङ् मार्ग के दक्षिण में जल प्रपात तथा उससे पश्चात् प्रस्तर मार्ग, सेतु, चीड़-वृक्ष तथा अंजीर वृक्षों की जड़ें, इसी क्रम से इस दुर्ग (कोट्ट) की सीमा का निश्चय किया गया है।

किसी के द्वारा भी, हमारे चरणोपजीवियों के द्वारा, अन्यों के द्वारा भी थोड़ी सी पीड़ा नहीं दी जानी चाहिये। जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करे या कराये उसे मैं कदाचित् सहन नहीं करूँगा। मेरे पश्चात् जो भी राजगण होने वाले हैं, उनके द्वारा भी, धर्मगुरुओं के द्वारा, गुरुओं के कृपापात्रों के द्वारा इस आज्ञा का सम्यक् रूप से पालन किया जाना चाहिये। जिसके कारण सगरादि बहुत से राजाओं के द्वारा वसुधा प्रदान की गई थी। जिस-जिस की जब-जब जैसी भूमि दान की गई उस उसका तब-तब वैसा ही फल प्राप्त हुआ। भूमिदान करने वाला साठ हजार वर्षों तक स्वर्ग में आनन्द प्राप्त करता है।

जबकि प्रदत्त भूमि पर आक्षेप करने वाला और अमान्य करने वाला उतने ही वर्ष नरक में वास करता है।

अपनी दी हुई अथवा दूसरों द्वारा दी हुई वसुन्धरा का जो हरण करता हैं वह स्थानभ्रष्ट होकर नरक में कृमि होकर अपने पितरों के साथ पकाया (भूना) जाता है संवत् — — — वार्त ऐसा।

XXXV

हरिगाँव पणाधिकार शिलालेख

सम्वत् ३० (सन् ३०+५८८=६१८ ई०)

लगभग ३६ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख हरिगाँव नामक ग्राम में स्थित है। शिला के बाईं ओर एक चक्र तथा दाहिनी ओर एक शङ्ख की आकृति सुशोभित है।

१. [स्वस्ति कैलाशकूटभवनात् परहितनिरतप्रवृत्तितया कृतयुग—
२. — —कारानुकारी[१] भगवत् पशुपति भट्टारकपादानुध्यातो
३. [ब]प्पपादपरिगृहीतः श्रीमहासामन्तांशुवर्मा कुशली करिष्यमा—
४. णप्रसादांस् तन्मर्यादापणग्रहणाधिकृतांश्च वर्त्तमानान् भवि—
५. ष्यतश्च समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां सर्वत्र राजप्रसा-[२]
६. देषु कृतप्रसादैर्मर्य्यादानिमित्तं यावन्तः पणा देयास्तेषाम्[३]—
७. यथोचितदानेन मा भूत् उभयेषां सा[४]— — — इ — —मया पूर्व्व-
राजानुवृ—
८. त्त्या यथोचितप्रदानाय — — — — — — — — — — —
लिखितो यत्र (योऽत्र)[५]
९. श्री देव्याः पु[६] ३ प १ अरोः पु ३ प १
श्रीकुलदेवस्य — — —[पु] ६ प १ षष्ठी दे—

---

१. L··· परि. आनकारी ॥
२. L·: राजा प्रसा ॥
३. L. येन स्त ... for यावन्तः
४. L. उत्कूय सा ॥
५. L. योऽत्र ॥
६. L. श्रीकुल का निषेध — — —[पु] ३ ॥

१०. व कुलस्य पु ३ प १ श्रीभट्टारकपादानाम् प्रत्येकं पु० २० ५[७] महा-बलाध्यक्ष-

११. स्य पु २०५ प्रसादाधिकृतस्य पु० २०५ अभिषेकः हस्ति[नः] पु ३ प १ अभिषे—

१२. काश्वस्य पु ३ प १ धावकर्गेच्छिढाकस्य[८] (आकस्य) पु ३ प १ भाण्डभा[रक] स्य[९] पु २ प२

१३. चामरधारस्य पु २ प २ ध्वजमनुष्यस्य पु २ प २ दे — — — आनां[१०] पु २

१४. प२ पानीयकर्मान्तिकस्य पु २ प२ पीठाध्यक्षस्य पु १ — — —णां पु २[११]

१५. प २ पुष्पसवाकवाहस्य[१२] पु २ प २ नन्दीशङ्खवादयोः पु — — भट[१३]

१६. नायकस्य पु २ प २ अश्वस्यार्धे पु ७[१४] प २ दक्षिणद्वारस्य पु १ प ४ — — — —

१७. — स्य पु १ प ४ प्रतोल्याः पु १ प ४ पश्चिमद्वारस्य पु १ प ४ आ — स्य पु —[१५]

१८. प ४ मानगृहद्वारस्य पु १ प ४ मध्यमद्वारस्य पु १ प ४ उत्तरद्वारस्य पु १ प ४

१९. सम्मार्जयित्र्याः[१६] पु १ प ४ यदि यत्रायां[१७] (यात्रायाम्) विश्वा-सिकनायकयोः पु २०

---

७. २ . पु प ॥
८. L. धावक गेच्छिम् — आकस्य ॥
९. L. भा [रक] स्य निषेधित
१०. L. नां ॥
११. L. पु २ प२ . इण् . आं पु ॥
१२. L. पुष्पपताकवाहस्य ॥
१३. L. पु. भ. टाना ॥
१४. L. ७ निषेधित
१५. L. .... पु for आ — स्य पु —) ॥
१६. L. सम्मर्जयित्र्याः ॥
१७. यात्रायां ? ॥

२०. तदेवम् वेदिभिरस्मत्पादप्रसादप्रतिबद्धजीवनैरन्यैर्वा न कैश्चिद

२१. अयम् प्रसादोऽन्यथा करणीयो भविष्यद्भिरपि भूपतिभिर्गुरुकृत—

२२. प्रसादानुवर्त्तिभिरेव भाव्यमिति स्वयमाज्ञा संवत् ३० ज्येष्ठशुक्ल षष्ठ्याम् ।

कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो। परहित में संलग्न प्रवृत्ति के कारण सतयुग के अनुसार कर्म करने वाले पशुपति भट्टारक के पद का ध्यान करने वाले, बप्पा के पद-ग्रहण करने वाले श्री सामन्त अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक कृपा करते हुए कानून के अनुसार धन-सम्पत्ति (पण) ग्रहण करने वालों को तथा उनके वर्तमान एवं भविष्य में होने वाले उत्तराधिकारियों को यह सूचना देते हैं "आप सबको ज्ञात हो कि सर्वत्र राजप्रासादों में नियमानुसार जिनको जितने पण देय हैं उनको यथोचित रूप से दिये जाने चाहियें। पणों का कुवितरण न हो, इसलिये मेरे द्वारा लिखित आदेश दिया गया है ताकि पूर्व-राजाओं द्वारा स्थापित परम्परानुसार निर्धारित पण प्रत्येक को यथोचित रूप से प्राप्त हो सके । श्रीदेवी का ३ पु १ प, अग्निदेवता का ३ पु, १ प, श्री कुल देवता का ३ पु, प १ — — — पु ३, प १ षष्ठी कुलदेव का ३ पु, प १ श्री भट्टारक के प्रत्येक चरणोपजीवी (राजकुल के प्रत्येक कर्मचारी) को २५ पु, महाबलाध्यक्ष (मुख्य सेनापति) का २५ पु, उपहाराध्यक्ष का २५ पु, राज्याभिषेक के हाथी का ३ पु, प १, धावक् गेक्छि ढाक का ३ पु, प १, भण्डार नायक का २ पु, २ प चामरधारी का पु २ प २, ध्वजधारक मनुष्य का पु २ प २ — — — — देवालयों का २ पु प २ जलवाहक का २ पु, २ प पीठाध्यक्ष का पु १ — — — पु २ प २, पुष्पमालावाहक का २ पु प १, नन्दी और शङ्ख बजाने वालों का २५ पु, मुख्य पहिलवान का २ पु २ प, अश्वमेधीय यज्ञ के पात्र का ६ पु २ प, दक्षिण द्वार का। १ पु, ४ प, तोलने वाले का पु १ प ४, पश्चिमी द्वार का पु १, प ४ — — — क पु. १, ४ प, मानगृह द्वार का पु १, ४ प, मध्य द्वार का पु १, ४ प, उत्तरी द्वार का पु० १, ४ प, झाडू देने वाली का पु १, ४ प, यात्रा में विश्वसनीय नायकों का पु २०

तो इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, हमारे चरण-प्रसादोपजीवियों के द्वारा, अन्यों के द्वारा, भविष्य में होने वाले राजाओं के भी द्वारा, गुरुओं के कृपापात्रों द्वारा इस आदेश का उल्लङ्घन नहीं किया जाना चाहिये। यह मेरी स्वयं आज्ञा है। संवत् ३० ज्येष्ठ शुक्ल षष्ठी ।

XXXVI

हरिगाँव-गृहक्षेत्र-दान-मर्यादाज्ञाभिलेख

संवत् ३२ (३२+५८८=६२० ई०)

यह शिलालेख हरिगाँव में स्थित है। शिला का ऊपरी भाग चक्र तथा दो शङ्खों की आकृतियों से सुशोभित है।

१. स्वस्ति कैलाशकूटभवनाद् — — — — — — — — — — — — —

२. नो भगवत्पशुपतिभट्टारक [पादानुगृहीतो बप्पपादानुध्या]—

३. तः श्रीमहासामन्तांशुवर्मा कु [शली] — — — — — — — — —

४. गृहिक्षेत्रिकादिकुटुम्बिनो य[थार्हम् प्रतिमा] न्यानु [दर्शयति वि]—

५. दितं भवतु भवताङ्गृहक्षेत्रादिश्रावणिकादानन्न — — (. . दानानि — L)

६. — भिरयम्मर्यादाबन्धः कृत एतेन भवद्भिर्व्यवहर्तव्यं यत्र — —

७. तः पशुपतेः पु ७ प २ दोलाशिखरस्वामिनः पु ७ प २ — —

८. गुंविहारस्य पु ७ प २ श्रीमान विहारस्य पु ७ प २ श्री [राज] (श्रार L.)

९. विहारस्य पु ७ प २ खर्जूरिका[1] विहारस्य पु ७ प २ म[ध्य]—

१०. मविहारस्य[2] पु ७ प २ सामान्यविहाराणां पु ३ प १ रामेश्वर—

११. स्य पु ३ प १ हंसगृहदेवस्य पु ३ प १ मानेश्वरस्य पु ३

१२. प १ साम्बपुरस्य पु ३ प १ वाग्वती पारदेवस्य पु ३ प १ धारा

१३. मानेश्वरस्य पु ३ प १ पर्व्वतेश्वरदेवस्य पु ३ प १ नरसिंह—

१४. देवस्य पु ३ प १ कैलाशेश्वरस्य पु ३ प १ भुम्[3] भुक्किका जलश—

१५. यनस्य पु ३ प १ तदन्यदेवकुलानाम् पु २ प २ श्रीभट्टारक—

१६. पादानाम् पु ७ प २ सपेला पाञ्चाल्याः पु ७ प २ सामान्य-

१७. पाञ्चाल्याः पु ३ प १ राजकुलवस्तुना नियुक्त [म]नुष्यस्य[14]

१८. पु २ प २ गौष्ठिकानां पु २ प २ कृतप्रसादस्य पु १ ब्राह्मणा [नाम्]

१९. पु १ सामान्यमनुष्याणां पु ४ — इ — — — यं व्यवहार — प . —

२०. न चायम्मर्यादाबन्धः कैश्चि — स् — — — — यो यतः

२१. [5]प्रजाहितार्थोद्यतशुद्धचेत [सांऽशुवर्मणा श्री] कलहाभिमानिना ।

२२. कथं प्रजा मे सुखिता भवेदि [ति प्रि] या व्यवस्थेयमकारि धीमता ॥

२३. संवत् ३०२ आषाढ़शुक्लत्रयोदश्याम् ॥

कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो । हमारे भगवान पशुपति भट्टारक के चरणों को ग्रहण करने वाले, बप्पा के पद का ध्यान करने वाले महासामन्त अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक गृह-परिवार एवं खेतों पर रहने वाले कुटुम्बियों के सदस्यों के प्रति यथायोग्य सम्मान प्रदर्शित करते हुए प्रकाशित करते हैं कि आपको विदित हो जैसा कि गृहक्षेत्रादि श्रावणी के दान (कर) को एकत्रित करने वालों के द्वारा यह मर्यादा (कानून) बनाई गई है इसे आप सबको निभाना है । जहाँ — — पशुपति (मन्दिर) का पु ५, २ प, दोलापर्वत के स्वामी का पु ७, प २, गुंविहार का पु ७ प २ श्रीमानविहार का पु ७ प २ श्रीराजविहार का पु ७ प २ खर्जुरिका विहार का पु ७ प २ मध्यम विहार का पु ७ प २ सामान्य विहारों का पु ३ प १ रामेश्वर का पु ३ प १ हंसगृह देव का पु ३ प १ भानेश्वर का पु ३ प १ साम्बपुर का ३ प १, वाग्मतीपारदेव का पु ३ प १, धारामानेश्वर का पु ३ प १, पर्वतेश्वर का पु ३ प १, नरसिंहदेव का पु ३ प १, कैलाशेश्वर का पु ३ प १, भुंभुक्किका के — जल-शयन का पु ३, प १, और अन्य कुलदेवों का पु २ प २, राजा के चरण-सेवकों का पु ७ प २, सपेला पाञ्चाली का पु ७ प २, सामान्य पाञ्चाली का पु ३ प १, राजकुल की वस्तुओं के लिये नियुक्त मनुष्य का पु २ प २, ब्राह्मणों का पु १, सामान्य पुरुषों का पु ४ का व्यवहार करना चाहिये । इस मर्यादा-बन्धन को किसी के द्वारा भी नहीं तोड़ा जाना चाहिये ।

"किस प्रकार मेरी प्रिय प्रजा सुखी हो सकती है ?" इसके लिये यह व्यवस्था प्रजा के हित में सदैव उद्यत रहने वाले, शुद्ध चित्त वाले, कलहाभिमानी (समृद्धि में श्री से स्पर्द्धा करने वाले अथवा शत्रु के साथ संघर्ष करने में गर्व अनुभव करने वाले) उस बुद्धिमान अंशुवर्मा ने की । संवत् ३२ आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी ।

XXXVII

करमुक्तिसांज्ञाशिलालेख

संवत् ३२ (३२+५८८=६१०)

३८ सें० मी० चौड़ा शिलालेख भादगाँव के निकट सांज्ञा नामक स्थान पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग दो चक्रों से सुसज्जित है।

१. = =[1] लङ्कारारौद्रेश्वर[2] ⏑ ⏑ पवनव्यस्त = = ⏑ = =
२. [3]प्रत्याश्रम् = ⏑ = = ⏑ ⏑ रुचिरशिरोमौलभा = ⏑ = = [।]
३. उच्चैर्मुक्ता[4]ट्टहासा ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ दसृङ्नागचर्मोत्तरी
४. पायात्तद्रूपमेषा[5] हिमगिरितनया = तिते[6] (तिता) = ⏑ = = [॥]
५. स्वस्ति* क्षितितलतिलकभूतात्कुतूहलिजनतानिमेष—
६ नयनावलोक्यमानात् कैलासकूटभवनात् प्रजाहित—
७. समाधानतत्परो भगवत्पशुपतिभट्टारकपादा-
८. नुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्रीमहासामन्तांशुवर्मा
९. कुशली शङ्गाग्रामनिवासिनः कुटुम्बिनः प्रधानपु—
१०. रस्सरान् कुशलमाभाष्य समाज्ञापयति विदितं भव-
११. तु भवतामस्माभिः [7]ढहमं [वस्तु] द्वादश तैलघाटाः कूहमं[8] (कूहवम्)

---

* वृत्यनुप्रासालङ्कार

१. छन्द—स्रग्धरा

२. L. लङ्कार — देश्वर

३. L. प्रत्य

४. मुक्ताङ्करा

५. L. तद्रूपमे

६. L. तिता

७. अस्माभिः के पश्चात् वर्ण सन्दिग्ध है।

८. कूहवं

१२. चयस्तु[1] (वस्तु) च पञ्च भवतां पीडाकरमित्यवगम्य युष्मत्पी—
१३. डापनोदार्थमद्याग्रेण प्रतिमुक्तास्तदेवमवसाय
१४. नातः परेणैनद् वस्तुतैलङ्कस्य, चिह्नेयं भविष्यद्भिरपि
१५. भूपतिभिः पूर्व्वराजकृतप्रसादानुवर्त्तिभिरेव भवि-
१६. तव्यमिति . स्वमाज्ञादूतकश्चात्र सर्वदण्डनायको
१७. राजपुत्रविक्रमसेनः संवत् ३०२
भाद्रपदशुक्लदिवा १
१८. — — शाला सुकरणीयम् . — इह[2] — अधिकरणविभाजि —।
१९. तानि[3] ।

जिसके भाल पर इन्दु सुशोभित है, तप्त पवन के समान फुङ्कारते हुए नाग जिसके फैले हुए जटाजूट के अलङ्कार हैं, जो भीगे हुए गज-चर्म से सुशोभित, मुक्त रूप से उच्च अट्टहास करते हुए, पर्वत राज हिमालय की पुत्री द्वारा कौतूहल पूर्वक निर्निमेष देखे जाते हुए भगवान रौद्रेश्वर सबका कल्याण करें।

पृथ्वी रूपी सुन्दरी के भाल पर जो तिलक के समान है, जो जनता के द्वारा कुतूहल पूर्वक निर्निमेष देखा जाता है ऐसे कैलासकूट भवन से प्रजा-हित-समाधान में तत्पर भगवत् पशुपति भट्टारक के पाद से अनुगृहीत, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले महासामन्त श्री अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक शंगा-ग्राम निवासी, कुटुम्बियों, प्रधान मुख्यों से कुशल-परिप्रश्न पूछकर यह सूचना प्रकाशित करते हैं कि "आप सबको यह विदित हो कि ढह्मुं वस्तु बारह तेल के कनस्तर, कूहूमुं आदि पाँच वस्तुएँ आपके द्वारा दिये जाने से आपके लिये पीडाकारक हैं। इस प्रकार जानकर, आपकी पीड़ा को हटाने के लिये आज से आगे इन वस्तुओं से आपको मुक्त कर दिया गया है। उसको समाप्त करने के लिये आज के पश्चात् कोई भी व्यक्ति किसी को तेल आदि वस्तु नहीं देगा।

भावी होने वाले राजाओं के द्वारा भी पूर्वराजाओं के कृपापात्रों की तरह इस आज्ञा का पालन होना चाहिये। यह मेरी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ सन्देशवाहक है सर्वदण्डनायक पुत्र विक्रमसेन संवत् ३२ भाद्रपद शुक्ल प्रथमा।

---

१. L. वस्तु
२. L. १८वीं पंक्ति कोगण्डक च करणीयं ॥
३. इह चङ्गाधिकरणविगितानि ॥

XXXVIII

सुंधारापाटनजीर्णोद्धाराज्ञाशिलालेख

संवत् ३४ (३४+५८८=६२२ ई०)

लगभग ३७ सें. मी. चौड़ा यह शिलालेख सुंधारापाटन नामक स्थान पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों की आकृतियों से सुसज्जित है।

१. स्वस्ति कैलासकूटभवनाद् भगवत् पशुपति [भट्टारकपादा[1]]—
२. नुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्री [महासामन्तां]शु वर्मा]-
३. कुशली[2] वर्त्तमानभविष्यतो मा[3] — — — — — — — — —
— —[कु]—
४. शलमाभाष्य[4] समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां [यथास्माभि][5]
५. र्माटिन् देवकुलं [नृपकुलं) 'अर्धं[6]—विनिपतितेष्टकापंक्तिषिवर-प्रविष्ट—
६. नकुलकुलाकुलितमूषिकासार्थदूरविघटितनिरव[7]—
७. शेषद्वारकवाटवातायनादिजीर्णदारुसङ्घातं यत्नतः
८. प्रतिसंस्कार्यं तस्य दी[र्घं] तरपश्चात् कालसौस्थित्यनिमित्तम्
९. तदक्षयनीविप्रतिबद्धमेवम्[8] मातिङ्ग्रामस्य दक्षिणतो राज—

---

१. B. [भट्टारकपाद] निषिद्ध
२. B. कुशली निषिद्ध
३. B. मा निषिद्ध
४. B. 'कुशलमाभाष्य' निषिद्ध
५. B. निषेध
६. B. read — — नृपकुलम् अथ ॥
७. B. मूषिक — — पुर विघटित निख ॥
८. B. निमित्त[म]क्षय ॥

१०. भोग्यताम् आपन्नम् विंशतिकया चतुःषष्टिमानिकापिण्डकां क्षे—
११. त्रम्[६] दक्षिणपश्चिमतश्च षण्मानिकापिण्डकम् माटिङ्ग्रामपा—
१२. ञ्चालिकेभ्यः प्रतिपादितमेवम् वेदिभिर्न्न कैश्चिदस्मत्पाद—
१३. प्रतिबद्धजीवनैरन्यैर्वायम् चर्माधिकारोऽन्यथा करणीयो[१०]
१४. यस्त्वेतामाज्ञामुल्लङ्घ्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा तम् वयं न म—
१५. र्षयिष्यामो[११] भविष्यद्भिरपि[१२] भूपतिभिर्धर्मगुरुभिर्धर्माधि—
१६. कारप्रतिपालनादृतैर्भवितव्यम् संवत् ३०४ प्रथमपौष
१७. शुक्लद्वितीयायाम् दूतकोऽत्र महाबलाध्यक्ष विन्दुस्वामी ।।

कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो। पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले श्रीमहासामन्त अंशुवर्मा माटिन ग्राम के निवासियों को वर्तमान एवं भविष्य की कुशलता पूछकर यह आज्ञा प्रकाशित करते हैं कि "आपको ज्ञात हो जैसे कि हमने माटिन देवकुल (माटिन मन्दिर) की गिरी हुई ईंटों की दरारों में प्रविष्ट नेवलों और आकुलित चूहों के समुदाय के द्वारा नष्ट किये गये एवं उनसे अवशिष्ट द्वारों के कपाट, वातायनों के पट्ट, चौखट आदि का यत्नपूर्वक जीर्णोद्धार किया है।" बहुतकाल पश्चात् तक इसकी स्थिति के लिये उसका अक्षय (अक्षत) (भूमिदान सीमा) नीवि बन्धन इस प्रकार है—

माटिन ग्राम के दक्षिण में राजशासनाधिकृत हरी भरी भूमि २० मास जो ६४ मानिक पिण्डक अन्न उत्पन्न करने वाली है, दक्षिण-पश्चिम में दूसरा क्षेत्र छः मानिक पिण्डक, जो कुल मिलाकर १२० मास है। ये क्षेत्र माटिन ग्राम के पाञ्चालिकों को अर्पित करा दिया गया है। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, किसी अन्य के द्वारा, हमारे चरणोपजीवियों या अन्य के द्वारा इस धर्माधिकार (धर्मादेश) का उल्लङ्घन नहीं होना चाहिये। जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा, मैं उसे कदापि सहन नहीं करूँगा। यह धर्माधिकार भावी राजाओं के द्वारा, धर्मगुरुओं के द्वारा, आदरपूर्वक पालित होना चाहिये।

संवत् ३४ प्रथम पौष शुक्ल द्वितीया। यहाँ दूतक है महाबलाध्यक्ष बिन्दुस्वामी।

---

८. B. विंशतिकय — —षष्टिमानिकपिण्डकां क्षे — — — — — — — — — —
९. त्रम्
१०. B. करणीयः
११. B. मा[र्ष]यिष्यामो ।।
१२. भविष्यद्भिर्

XXXIX

बंगमती गाँव शूकरादिप्रवेश-निषेधाज्ञा शिलालेख

संवत् ३४ (२४+५८८=६२२ ई०)

यह शिलालेख न्येखु तथा बागमती नामक नदियों के बीच काठमण्डू के दक्षिण में चार मील दूरी पर बंगमती नामक ग्राम के निकट स्थित है। अभिलेख का ऊपरी भाग दो हिरणों के मध्य अंकित चक्र की आकृति से सुसज्जित है। यह चिह्न बौद्ध धर्म का प्रतीक है।

१. स्वस्ति कैलासकूटभवनाद् भगवत् पशुपति भट्टारक पादा-
२. नुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्रीमहासामन्तांशुवर्मा कुशली
३. बुगायूमी ग्रा[म] निवासोपगता[न्] कुटुम्बिनो यथाप्रधानं कुश-
४. लम् आभाष्य [समा] ज्ञापयति विदितं भवतु भवता ङ्कुक्कुटसू-
५. कराणा — — —नाम् मत्स्यानाञ्चावधानेन परितुष्टैरस्माभि-
६. र्भं — धिकरणाप्रवेशेन वः प्रसादः[1] [कृ] तो युष्माभिरप्ये—
७. — — — — — — — — — — — यदा च पुनर्धर्मसङ्क-
राणि
८. — — — — — — — — — — [त] दा राजकुलं स्वयं
प्रविचार
९. — — — — — — — — — — — — — — —
— — — —प्रसादोऽस्मत्र
१०. — — — — — — — — — — — — — — — —
— — —विलङ्घ्यान्यथा
११. — — — — — — — — — — — नो नियतम् पुष्कला
मर्यादाब
१२. — — — — — — — — — — — —भिः पूर्वराज—
कृतप्रसादा

१३. — — — — — — — — — — — — — — दूतकश्च महासर्वा

१४. — — — यकविक्र [मसेनः] संवत् ३०४ ज्येष्ठशुक्लदशम्याम् ।

कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो। भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा से अनुगृहीत, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले, महासामन्त श्री अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक पास आये हुए बुगायूमी ग्राम निवासी कुटुम्बियों से यथा प्रधान कुशलता पूछकर यह विज्ञप्ति प्रकाशित करते हैं कि, "आप सबको ज्ञात हो कि हमें आप से प्रसन्नता है कि आपने कुक्कुट, सूअर, मृगशावक एवं मछलियों का सावधानी पूर्वक पालन-पोषण किया है।

इस तुम्हारे क्षेत्र में भट्टाधिकरण (सेनाविभाग) के अधिकारियों को प्रवेश-निषेध का आदेश दिया है। यह जानते हुए आपके द्वारा भी यह आदेश पालनीय है। धर्म सङ्कर के सम्बन्ध में यदि कोई अपने वर्ण से सम्बन्धित व्यवसायिक कार्य को परिवर्तित करना चाहता है तो शाही सदन ही न्याय करेगा। यह जानकर जो हमारा चरण-प्रसादोपजीवी इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा उसको निश्चित रूप से मर्यादानुसार बहुत दण्ड दिया जायेगा। पूर्ववर्ती राजाओं के द्वारा मर्यादित इस आज्ञा का पालन होना चाहिये। यहाँ दूतक है महासर्वदण्डनायक विक्रमसेन। संवत् ३४ ज्येष्ठ शुक्ल दशमी।

XL

जयशीदेवलक्षेत्रमर्यादा शिलालेख

संवत् ५३५ (५३५+७८=६१३ ई०)

३८ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख ज्यबहाल, काठमाण्डू के पूर्व में जैशी देवल नामक स्थान के पूर्व में स्थित एक घर के सामने विद्यमान है। शिला का ऊपरी भाग खण्डित होकर लुप्त प्राय हो चुका है।

१. — — — — — — — — देव— — — — — — — — — — — —

२. — — — — — — — — — — — एण[1] पुण्यो — — — — — — — — —

३. — — — — — — — — — — — यं वः[2] प्रसादीकृ [तः] — — — —

४. — — — — — — — नुज्ञः फृथूल् क्षेत्रं पूर्व[3] — — — — — — —

५. — — — मङ्गलस्य क्षेत्रम् ततो भरतश्रा[4] (श्च) — — — — — —

६. — — — — तुलक्षेत्रं ततस्तेग्वल् प्रा — — — — — — — —

७. — — — — आदित्यगुप्तस्य क्षेत्रं पूर्वद — — — — — — —

८. — — — द्दाक्षेत्रं ततस्तेग्वल् नारायणे[5] — — — — — — —

---

१. Bh. omits एण

२. Bh. reads रायावः

३. Bh reads ज्ञः प्रथूक् क्षेत्रम् पूर्व

४. Bh. reads भरतश्च

५. Bh. reads यग

९. . स् तेग्वल प्रदीपगौष्ठिकानां तस्या भूमेर्दक्षिण — — — — — — — — — — — — — — — — —

१०. . — . दक्षिणराजकुलस्य दक्षिणपश्चिमेन — — — —

११. — पञ्चालिकानाम् पश्चिमेन पर्वत — — — — — — — — —

१२. — — पश्चिमोत्तरेण पर्वतभूमिर्दक्षिण[६]

१३. — — — परिक्षिप्तेयम् भूमिरित्यवगम्य न कैश्चिदस्मद—

१४. पादोपजीविभिरयम् प्रसादोऽन्यथा करणीयो य [स्त्वे]

१५. ता] माज्ञाम् अनादृत्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा तामहम् उत्पथ-[गा—

१६. मिनम् नियतमनुशासितास्मि भविष्यद्भिरपि भूप[तिभि[७]र्गु]—

१७. रुकृतप्रसादानुवर्त्तिभिरेव भवितव्यं इति दूतक [श्चा[८]]—

१८. त्र राजपुत्र विक्रमसेनः सम्बत् ५०० ३०५ श्रा[वण]—

१९. शुक्लदिवा सप्तम्याम् ॥

— — देव — —पुण्य — — — जिसके प्रति कृपा की है — — — फृथूल् (पृथल् D. R. Regmi) क्षेत्र के पूर्व — — —मङ्गल का क्षेत्र तत्पश्चात् भरतश्रा और तुलक्षेत्र तत्पश्चात् तेग्वल् — — —आदित्य गुप्त के क्षेत्र के पूर्व-दक्षिण में — — — ट्टा क्षेत्र तत्पश्चात् तेग्वल् नारायण में — — — तेग्वल् प्रदीप-गोष्ठिकाओं की, उसकी भूमि के दक्षिण — — — —दक्षिण राजकुल का, दक्षिण-पश्चिम से — — — — — — पाञ्चालिकों का पश्चिम से पर्वत — — — — — — — — पश्चिमोत्तर से पर्वत-भूमि के दक्षिण — — — — — —यह भूमि-परिक्षिप्त (परती भूमि) है इस प्रकार जानकर, हमारे किसी भी चरणोपजीवी के द्वारा इस आज्ञा की अवज्ञा नहीं होनी चाहिये। जो इस आज्ञा का अनादर करेगा या करायेगा मैं उस कुमार्गगामी को निश्चय ही नियमानुसार शासित करूँगा। इस आज्ञा का पालन आगे होने वाले राजाओं एवं गुरुओं के कृपा पात्रों द्वारा होना चाहिये। यहाँ पर दूतक हैं राजपुत्र विक्रमसेन। संवत् ५३५ श्रावण शुक्ल दिवा सप्तमी।

---

६. Bh. omits (r) (भूमिदक्षिण)

७. Bh. भूपति [भि] — — कृत।

८ Bh. दूत [को]ऽत्र।

Inscription XL.

XLI

गणेशमन्दिर सूरभोगेश्वर दक्षिणेश्वर स्थापना शिलालेख

संवत् ३९ (३९+५८८=६२७ ई०)

३४ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख पशुपति मन्दिर से थोड़ी दूर एक लघुकाय गणेशमन्दिर के निकट स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक बैल की आकृति से सुसज्जित है।

१. **ओ३म् स्वस्ति कैलाशकूटभवनाद् अनिशिनिशि चानेकशा—**
२. **स्त्रार्थविमर्शावसादितासद्दर्शनतयाधर्माधिका[1]—**

---

१. (क) Amśu verma had attained a high military figure and literary glory —— As a literary figure Chinese Pilgrim opines that he had written a book on etymology. The great grammarian Chandra Varman, a scholar of Nalanda University was patronised by him. He tried to banish illiteracy and Sanskrit language flourished during his time."

A Short History of Nepal, p. 27

(ख) He was also a man of high literary talents. In one inscription he is addressed as 'अनेकशास्त्रार्थविमर्शावसादितासद्दर्शनतया'—He seems to have composed a book on etymology, the work which is now lost but which has been referred to in high terms of appreciation by the Chanese pilgrim. Amśuvarman had a concourse of scholars around him including that great grammarian Chandra Varman who had made a name in the Nalanda University as a talented scholar."

—*Ancient India*—Regmi D. R, p. 144

३. रस्थितिकारणम् एवोत्सवं अनतिशयं मन्यमा-
४. नो भगवत् पशुपति [भट्टार]क पादानुगृहीतो बप्प-
५. पादानुध्यातः अयंशुवर्मा कुशली पश्चिमाधिक-
६. [रण] वृत्तिभुजो वर्त्तमानान् भविष्यतश्च यथार्ह-
७. ङ्कुशलमाभाष्य समाज्ञापयति विदितं भव-
८. तु भवतां पशुपतौ भगवाञ्छूरभोगेश्वरोऽस्मद्भ[गि]-
९. न्या श्री भोगवर्मा जनन्या भोगदेव्या स्वभर्त्तूरा-
१०. जपुत्र [सू] रसेनस्य पुण्योपचयाय प्रतिष्ठापितो
११. यश्च तद्दुहित्रास्मद्भागिनेय्या भाग्यदेव्या प्रतिष्ठा-
१२. पितो लडितमहेश्वरो यश्चैतत्पूर्वजैः द्वतिष्ठापि—
१३. तो दक्षिणेश्वरस्तेषाम् अधः शालापाञ्चालिकेभ्यः प्रतिपा-
१४. लनायातिसृष्टानामस्माभिः पश्चिमाधिकरणस्याप्र-
१५. वेशेन प्रसादः कृतो यदा च पाञ्चालिकानां यत् किञ्चन-
१६. कार्यमेतद्गतं उत्पत्स्यते यथाकालं वा नियमितं व
१७. स्तु परिहापयिष्यन्ति तदा स्वयं एव राजभिरन्तरा-
१८. सनेन विचारः करणीयो यस्त्वेताम् आज्ञामतिक्रम्यान्यथा
१९. प्रवर्तिष्यते तं वयं न मर्षयिष्यामो भाविभिरपि भूप-
२०. तिभिर्धर्मगुरुतया पूर्वराजकृतप्रसादानुवर्तिभि-
२१. रेव भवितव्यमिति स्वयमाज्ञा दूतकश्चात्र युवरा-
२२. जोदयदेवः संवत् ३०९ बैशाखशुक्ल दिवा दशम्याम् ।

ओ३म् कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो । रातदिन अनेक शास्त्रार्थों का विमर्श करने से प्राप्त सत् दर्शन (उचित मार्गदर्शन) से धर्माधिकार-स्थिति बनाकर और इतने पर भी उसे बहुत थोड़ा मानने वाला भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले श्री अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक वर्त्तमान तथा भविष्य में पश्चिमाधिकरण से वृत्ति-भोग करने वाले कर्मचारियों से कुशलता पूछकर विज्ञापित करते हैं कि—"आप सबको विदित हो जैसे कि हमारी बहिन और भोगवर्मा की माता भोगदेवी ने अपने पति राजपुत्र सूरसेन की पुण्यप्राप्ति के लिये पशुपति-लिङ्ग के रूप में भगवान सूरभोगेश्वर की स्थापना की है उसकी पुत्री और हमारी भान्जी भाग्यदेवी ने लडितमहेश्वर की और उनके पूर्वजों ने दक्षिणेश्वर की स्थापना की है । उनके रक्षण के लिये हमने 'अधशाला पाञ्चालिकों

Inscription XLI.

को नियुक्त किया है। उनके अधिकार-क्षेत्र में पश्चिमाधिकरण के अधिकारियों के प्रवेश को हमने निषिद्ध करके कृपा की है।

तीनों लिङ्गों (सूरभोगेश्वर, लडितमहेश्वर, दक्षिणेश्वर) के सम्बन्ध में यदि पाञ्चालिकों का कोई कार्य हो तो समयानुसार वैसा ही वस्तुनियम बना लिया जायेगा। पाञ्चालिकों के द्वारा अपने कर्त्तव्यों की उपेक्षा करने पर राजा स्वयं अपनी अन्तरात्मा अथवा (अन्तरासन) अन्तरङ्ग समिति के द्वारा विचार करेगा। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा। उसे हम सहन नहीं करेंगे। भावी राजाओं, धर्मगुरुओं और राजाओं के कृपापात्रों द्वारा भी इसे माना जाना चाहिये। यह मेरी स्वयं अपनी आज्ञा है। यहाँ सन्देशवाहक (दूतक) है युवराज दयादेव। संवत् ३९ बैशाख शुक्ल दशवीं।

XLII

भन्साहिटि प्रवेश निषेधाज्ञा शिलालेख

संवत् ३९ (सन् ३९+५८८=६२७ ई०)

लगभग ४६ सैं. मी. चौड़ा शिलालेख काठमण्डू में भन्साहिटि नामक जलप्रवाहिका के निकट स्थित है। इसका ऊपरी भाग बैल की आकृति से सुसज्जित है।

१. ओ३म् स्वस्ति कैलासकूटभवनात् अनन्यनरपति सुकरानाति[स]-
२. रपुण्याधिकारस्थितिनिबन्धनोन्नीयमानमनस्समाधानो[भ]-
३. गवत्पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः
४. श्रीमहासामन्तांशुवर्मा कुशली जोञ्जोन्दिङ्ग्रामनिवासिनः प्रधा-
५. नपुरस्सरान् कुटुम्बिनः कुशलमाभाष्य समाज्ञापयति विदि-
६ तं भवतु भवतां नीलीशालाप्रणालीकर्मपरितोषितैरस्माभिः
७. लिग्वलषण्ढाश्विकवाहिकागन्त्रीबलीवर्दानामप्रवेशेन वः प्र [सा]—
८. दः कृतस्तदेवम् अधिगतार्थैर्न कैश्चिदेष प्रसादोऽन्यथा कर-
९. णीयो यस्त्वेतामाज्ञाम् विलङ्घ्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा तं वयं न
१०. मर्षयिष्यामो भविष्यद्भिरपि[भूपतिभि पू]—
र्व्वराजकृतप्र—
११. सादानुर्वर्त्तिभि[रेव भवितव्यम् चिरस्थितये चास्य प्र] सादस्य
१२. शिलापट्टकशासने [न प्रसादः कृत इति स्वयमाज्ञा दू] तकश्चात्र
१३. युवराजो दयादेवः [संवत्] — — — — — — — अष्टा-
स्याम्।

ओ३म् सबका कल्याण हो कैलाशकूटभवन से। राजाओं की अत्यन्त अस्थिर पुण्याधिकार को स्थिर बनाकर उन्नत मन से समाधान करने वाला, भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा-पात्र, बप्पा के चरणों का ध्यान

करने वाला श्री महासामन्त अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक जोञ्जोन्दिन ग्राम निवासियों, प्रधानमुख्य कुटुम्बियों से कुशल पूछकर यह सूचित करते हैं कि "आप सबको विदित हो कि हम नीलीशाला नहर (प्रणाली) के सम्बन्ध में आपके द्वारा किये गये कार्य से सन्तुष्ट हैं। हमने लिंग्वल अधिकरण के बोझा ढोने वाले अश्वों, भटकते हुए सांडों, घोड़ा एवं बैलगाडियों के प्रवेश को निषिद्ध घोषित करके कृपा की है। शाही कर्मचारियों के द्वारा इस आज्ञा का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये। जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा उसको हम सहन नहीं करेंगे। भावी राजाओं, वंशानुक्रमागत राजकीय कृपापात्रों के द्वारा भी इसका पालन होना चाहिये।

इस आदेश की चिरस्थिति के लिये शासन ने शिलापट्टक पर लिखवाकर कृपा की है। यह हमारी स्वयं आज्ञा है। और यहाँ दूतक है युवराज दयादेव। संवत् — — अष्टमी।

XLIII

मृत्युञ्जयशालाप्रणालीशिलालेख

संवत् ३२ (३२+५८८)=६२० ई०

४२ सैं. मी. चौड़ा यह शिलालेख वोतुथोले, काठमाण्डू में गुंगुच नामक खुले चबूतरे पर स्थित मृत्युञ्जय देवता की मूर्ति के पृष्ठ भाग पर उत्कीर्णित है।

१. [ओ३म् स्वस्तिश्कैलासकूटभवनात्] — — — — — — — — — — — — —
२. — — [दि]ङ् मण्ड[लो] भगवत्पशुपति भट्टारक पादा[नुध्यातो]
३. [बप्प पा] दपरिगृहीतः श्री महासामन्तांशुवर्मा कु[शली] — — — —
४. —[पा]ञ्चालिकान्यथाप्रधानङ्कुशलभाभाष्य समाज्ञापयति
५. — — शालाप्रणालीकर्म (प)रितोषितैरस्माभिः — — — —
६. — — — ल — म् — ब्रंशामल्लपोतसूकरकरान् — — — — —,
७. — — — — — — चाक — — डम् मुक्त्वा पञ्चापराधेनास्य — — —
८. — — — — — — — — ण्डनि — — ण्डानि तथैव कर्तु. इ — — —
९. — — — — — — — — क — — — म् बहिर् अनति-वाह्यवि — — — —
१०. [वः] कृ [तंस्तदे] वं वेदिभि[रस्म] त्पादप्रतिवद्धजीवनैर[न्यैर्वा न]
११. [कैश्चि]द् अ[यम् प्र] सादोऽन्यथा [करणीयो] यस्त्वेताम् आज्ञा-मुल्लङ्घ्या[न्यथा]
१२. [कु]र्यात् कारये [द् वा] — — — — — — — — नियतम् पुष्कला मा-

१३. — — — — — —भविष्य [द्भिरपि भूप] तिभिर्गुरुकृत प्रासानुब—
१४ [त्तिभिरे] व [भ] वितव्यं इति स्वयमाज्ञा दूतकश्चात्र यु[वराज] — —
१५. — — — — — — — — — — — — — आषाढ़शुक्लदिवा पञ्चम्याम् ।

कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। दिङ्मण्डल में व्याप्त भगवत् पशुपति भट्टारक के चरणों का ध्यान करने वाले, बप्प की चरण-कृपा प्राप्त श्रीमहासामन्त अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक सूचिन करते हैं कि नीलीशाला प्रणाली (नहर) के सम्बन्ध में आपके द्वारा किये गये कार्य से हम सन्तुष्ट हैं। हम मछली, पहिलवान, पशुशावक, सूअर आदि पर लगाए हुए करों से आपको मुक्त करके — — — पञ्चापराध के द्वारा — मिट्टी के पात्र पूर्ववत् ही वेचे जायेंगे — — —वैसा ही करने और वहुत अधिक बाहर भी — — —हमने कृपा की है। तो इस प्रकार जानने वालों के द्वारा हमारे चरणोपजीवियों अथवा अन्य किन्हीं के द्वारा इस आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं होना चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा, निश्चय ही उसे मेरे द्वारा पर्याप्त दण्ड दिया जायेगा। भावी राजाओं के द्वारा भी, गुरुओं के कृपापात्रों के द्वारा इस आज्ञा का पालन होना चाहिये। यह मेरी अपनी आज्ञा है। यहाँ दूतक है — युवराज (उदयदेव) — — — आषाढ़ शुक्ल पञ्चमी।

XLIV

लच्छीटोले ग्रामसीमा शिलालेख

सन् लगभग ६२० ई०

यह ४३ सें. मी. चौड़ा शिलालेख लच्छी टोले कीसिपिंडी नामक स्थान पर स्थित है । शिला के ऊपरी भाग पर एक बैल की आकृति है ।

१. [स्व] स्ति — — — — — — — — — — द — — — — — — — — — — — — — — — — — —

२. इयानुग्राह्याभिरा[धन] — — —भगवत्पशुपतिभट्टारकपादा-नुगृही]—

३. तो बप्पपादानुध्यातः [श्रयं] शुवर्मा कुशली मिग — — —प्रति-बद्धचिचित — —[1]

४. —[2] निवासिनः कुटुम्बि[नो यथा] प्रधाङ् (*n*) कुशलमाभाष्य समाज्ञापयति

५. विदि[तम् भवतु भ]वताम् या— —युष्मद्ग्रामसीमा — — — द — —

६. अस्माभिर्युष्मद्ग्रामेऽत्र प्र[साद] — — — म — — — — — — तदेवम् वेदिभिर [स्म]—

७. त्पादोपजीविभिरन्यैर्वा न कैश्चिदयम् प्रासादोऽ[न्यथा] कर[णी]यो [य] स्त्वेतामा—

८. ज्ञामुल्लङ्घ्[यान्यथाकु]र्यात् कारयेत् वा मर्षयितव्यो भविष्यद्भिरपि भूप—

९. तिभिः पूर्व[रा]जकृतप्रसादानुर्वात्तभिरेव भाव्यञ्चि[र] स्थि [तये] चास्य [प्र]—

१०. सादस्य शि[लापट्टकशासनमिदं दत्त मि[ति स्व]यं आ [ज्ञा दू]—

११. तकश्चा [त्र युवरा]ज श्री — — — — — — — — — — — — — — —

कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। ग्राह्य एवं आराध्य — — — भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा-पात्र, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले श्री अंशुवर्मा कुशलतापूर्वक चिचितग्राम निवासियों, कुटुम्बियों से यथायोग्य कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि "आप सबको विदित हो कि—जहाँ तक आपके गाँव की सीमा है — — — आपके इस ग्राम में हमारे द्वारा कृपा की गई है। — — — —इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, हमारे चरणोपजीवियों के द्वारा अथवा किन्हीं अन्यों के द्वारा इस आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं होना चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा वह मार दिया जायेगा। भावी भूपतियों के द्वारा, परम्परागत राजकीय कृपापात्रों के द्वारा भी इसका पालन होना चाहिये। इस राजाज्ञा की चिरस्थिति के लिये यह शिलापट्टक शासन प्रदान किया गया है। यहाँ दूतक है युवराज — — —

XLV

मंगल बाजार पाटन शिलालेख

यह १६० सें. मी. चौड़ा शिलालेख एक चबूतरे पर उत्कीर्णित है। दो हिरणों के मध्य बैठे हुए तथा दो व्यक्तियों द्वारा अर्चित भगवान बुद्ध का चित्र भी अङ्कित है। यह अभिलेख लिपि एवं भाषा-शैली की दृष्टि से श्री अंशुवर्मा कालीन प्रतीत होता है।

१. स्वोत्रऽङ्गाय — ऊ —

१a. अ — आनादिनिधनान् —

२. योः पूजार्थं आश्वयुजाक — — — — — — — — — — — — — — — —

२a. —तुष — —रप दप दम्पनिमित्त

३. — डिचिचदि — दे —

३a. —

भिध — — रक्षेत्रवसा

४. —

४a. —ति — — भोज —

५. — ना —

५a. — क्षितस्य

XLVI

बंकाली पुण्यवृद्धि शिलालेख

सन् लगभग ६२१

यह शिलालेख बंकाली के जंगलों में एक प्राकृतिक झरने के निकट स्थित है। अभिलिखित भाग लगभग ५८ सें० मी० चौड़ा है।

१. = = = ⏑ = ⏑ = ⏑ ⏑ ⏑ = **प्रासादपिण्डम्[१] स्थलं सद्भिस्त्यामृतवर्मणा ⏑ ⏑ प = = = शिलापट्टकः।**

२. **[भर्त्तुः पुण्य] विवृद्धये भवगतिक्लेशक्षयायात्मनः भार्य्या श्रीकलहाभिमानिनृपतेर्लब्ध्वा प्रसादोदय[म्] ॥**

श्री कलहाभिमानी राजा अंशुवर्मा के प्रफुल्लित प्रसाद (कृपा, प्रसन्नता, आज्ञा)को ग्रहण करके भार्या ने अपने पति की पुण्यवृद्धि के लिये, सांसारिक मुक्ति के लिये तथा संतान के क्लेशों के विनाश के लिये प्रासादपिण्ड नामक स्थान पर पहुंचकर अमृतवर्मा के द्वारा शिलापट्टक लिखवाया।

---

१. शार्दूलवि०

XLVII

बहिलिटोले पाटन शिलालेख

लगभग ३० सैं० मी० चौड़ा शिलालेख बहिली टोले पाटन में एक प्राचीन नहर के ऊपर दीवार में उत्कीर्णित है। लिपि एवं भाषा शैली की दृष्टि से यह अभिलेख श्री अंशुवर्माकालीन प्रतीत होता है।

१. मुङ्गदिशाकाम्बरभ — न — — — — — —
२. एताम् स्थितिम् यो विगणय्याति — — — — — —
३. सङ्गिकं इव विलीनचं — — — — — — — — —

मुङ्गदिशाकाम्बरभ — न — — —
इस स्थिति को जो मानता है — — सङ्ग के सदस्य के समान विलीन — — —

XLVIII

पानीपुखारी-प्रणाली-निर्माण-शिलालेख

संवत् ४५ (४५+५८८=६३३)

यह शिलालेख पानीपुखारी टैंक के निकट, काठमाण्डू से आने वाली सड़क के ऊपर एक प्रस्तर-ढक्कन के रूप में स्थित है।

१. **संवत् ४०५ (?) ज्येष्ठशुक्ल — — —**
२. **श्र्यंशुवर्म्म प्रसादेन[1] पितुः पुण्यविवृद्धये (।)**
३. **कारिता सत्प्रणालीयम् वार्त्तेन विभुवर्म्मणा (।।)**

संवत् ४५ ज्येष्ठ शुक्ल — — —श्री अंशुवर्मा की कृपा-प्राप्त वार्त विभुवर्मा ने पिता की पुण्यवृद्धि के लिये जल-नहर का निर्माण कराया।

---

१. श्लोक

XLIX

ठीमी शिलालेख

यह शिलालेख कठमाण्डू और भादगाँव के मध्य ठीमी नामक ग्राम में स्थित है । भाषा शैली एवं लिपि की दृष्टि से यह शिलालेख अंशुवर्मा कालीन प्रतीत होता है ।

१. यना — —
२. म् अशेषनै — —
३. गुरोर्वासुदेवस्य
४. र्थे भूयादित्यस्मा[भि]
५. णानुस्मरणभि—
६. द्धिः सर्वैरनुसमम्[1] . ई
७. स्तावदाकृष्टव्योऽयम्
८. वासौ न सम्पन्नातिक
९. — — धान्यमानि
१०. द्धिरपि
११. प [स्व] यमाज्ञा
दू [तकश्चा]त्र देवप – –

हम सब गुरु वासुदेव की कृपा से धन-सम्पत्ति में पूर्ण रूप से समृद्ध हुए हैं । तब तक इस वासुदेव के वास-स्थान पर किसानों के द्वारा भी कृषि नहीं की जानी चाहिये । यह हमारी स्वयं की आज्ञा है । यहाँ संदेशवाहक हैं देवप — — — ।

---

१. L. gives स च रङ्गसमंस (मे) ॥

L

छिन्नमस्तिका-तिलम संस्कार-शिलालेख

संवत् ४८ (४८+५८८=६३६ ई०)

लगभग ४५ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख छिन्नमस्तिका देवी के निकट पाटन के तौभा महल्ल नामक स्थान पर स्थित है।

१. ओ३म् स्वस्ति —

भट्टारकमहाराज—

२ [1]श्री ध्रुवदेव पुरस्सरः ⏑ = ⏑ = = ⏑ ⏑ = ⏑ = = प्रजाहितैषी निरवद्य वृत्तः (।)

३. पुण्यान्वयादागतराज्यसम्पत् समस्तपौराश्रितशासनोयम् (।।) स कैलासकूट भ—

४. वनात् भगवत्पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्रीजिष्णुगुप्तः

५. [कु]शली थम्बूगाङ्गुलमूलवाटिकाग्रामेषु निवासम् उपगतान् कुटुम्बिनः कुशलं

६. आभाष्य समाज्ञापयति विदितमस्तु भवतां भट्टारकमहाराजाधिराज श्र्यंशु—

७. वर्मपादैर्युष्मदीयग्रामाणामुपकाराय योऽसौ तिलमक आनीतोऽभूत् प्र—

८. तिसंस्काराभावाद् विनष्टमुद्वीक्ष्य सामन्तचन्द्रवर्मं विज्ञप्तैरस्माभि-स्तस्यै —

---

१. उपजाति

९. व प्रसादीकृतस्तेन चास्मदनुज्ञातेन युष्मद् ग्रामाणामेवोपकाराय प्र—
१०. ति संस्कृतोऽस्य चोपकारस्य पारम्पर्याविच्छेदेन चिरतरकालोद्वहना—
११. य युष्माकं दाटिकापि प्रसादीकृतास्तदेताभ्यो यथाकालं पिण्ड–
१२. कमुपसंहृत्य भवद्भिरेव तिलमकप्रतिसंस्कारः करणीय एतद्ग्राम
१३. त्रयव्यतिरेकेण चान्यग्रामनिवासिनान्न केषाञ्चिन्नेतुम् लभ्यतेऽस्य च
१४. प्रसादस्य चिरस्थितये शिलापट्टकशासनम् इदम् दत्तमेवम् वेदिभिर्न
१५ कैश्चिदयम् प्रसादोऽन्यथा करणीयो यस्त्वेतामाज्ञामतिक्रम्यान्यथा तिलम—
१६. [का]न्नयेत् तस्यावश्यम् दण्डः पातयितव्योभविष्यद्भिरपि भूपतिभिः पूर्वरा
१७. जकृतप्रसादानुवर्तिभिरेव भवितव्यमिति अपि चात्र वाटिकाना-मुद्देशः]
१८. [थ]म्बूग्रामस्य दक्षिणोद्देशे पूर्वेणारामम् विम् म २ तिलमकस्य पश्चिमप्रदेशे मा
१९. —[दे] वकुलं पूर्वेण मा ४ मूलवाटिकाग्रामस्योत्तरतः अशिङ्कोप्रदेशे मा ८
२०. — — —प्रदेशे मा १ माङ्शुल् ग्रामं पश्चिमेन कडम्प्रिङ् मा कङ्कुलम् प्रदेशे
२१. मा ४ स्वयमाज्ञा संवत् ४०८ कार्तिक शुक्ल २ दूतको युवराज श्री विष्णुगुप्तः ।

ओ३म् सबका कल्याण हो। ... ... भट्टारक महाराज श्री ध्रुवदेव सबके सम्मुख स्पष्ट रूप से प्रजाहितैषी एवं निर्मल चरित्र वाले हैं। सर्वगुणसम्पन्न परिवार से परम्परागत रूप से प्राप्त राज्य श्री का उपभोग करने वाले हैं, समस्त प्रजा उसके प्रशासन की प्रशंसा करने वाली है।

कैलासकूट भवन से भगवत् पशुपति भट्टारक की चरणकृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले श्री जिष्णुगुप्त कुशलतापूर्वक, थम्बू, गाङ्शुल् तथा मूलवाटिका ग्रामों में जाकर बसने वाले परिवारों से कुशलतापूर्वक आज्ञा देते है कि "आप सबको विदित हो जैसे कि भट्टारक महाराजाधिराज श्री अंशुवर्मा के चरणों की कृपा के द्वारा, सामन्त चन्द्रवर्मा के द्वारा अवगत कराया जाता है कि जीर्णोद्धार के अभाव के कारण जो नहर नष्ट हो गई थी उसे देखकर आपके ग्रामों की भलाई के लिये उसका जीर्णोद्धार

किया गया है। इस उपकार का दीर्घकाल तक उपयोग के लिये हमारे द्वारा आपको वाटिका भी प्रदान की जाती है।

अब जहाँ यथा समय खेतों के लिये धनराशि एकत्रित करोगे वहाँ जल-नहर का जीर्णोद्धार भी किया जाना चाहिये।

उपर्युक्त वर्णित किये गये तीन गाँवों को छोड़कर अन्य दूसरे गाँवों के निवासी नहर के जल को कहीं भी प्रयुक्त नहीं करेंगे। इस आज्ञा की चिर स्थिति के लिये यह शिलापट्टक शासन (शिलालेख) प्रदान किया गया है। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, किन्हीं अन्यों के द्वारा इस आज्ञा की अन्यथा नहीं की जानी चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करके नहर के जल को अन्यत्र अपवर्तित करता है तो उसे निश्चित रूप से दण्ड दिया जायेगा। भावी राजाओं के द्वारा तथा परम्परागत राजकीय कृपापात्रों के द्वारा भी इस आज्ञा का पालन होना चाहिये। और यहाँ बगीचे का निम्नलिखित क्षेत्र प्रदान किया जाता है—थम्बूग्राम के दक्षिणी किनारे से आरम्भ होकर, पूर्व में बगीचे का क्षेत्र मास २, नहर के पश्चिमी प्रदेश में मा — — — — मन्दिर के पूर्व में मा ४, मूलवाटिका नामक ग्राम के उत्तर में अशिङ्को प्रदेश में मा ८ — — — प्रदेश में मा। गाङ्शुल् ग्राम के पश्चिम में कडम्प्रिङ् प्रदेश में मा ४, कङ्कुलम् प्रदेश में मा ४। यह हमारी स्वयं आज्ञा है। संवत् ४८ कार्तिक शुक्ल द्वितीया। यहाँ दूतक हैं युवराज श्री विष्णुगुप्त।

LI

माल्टार शिलालेख

संवत् ४९ (४९+५८८=६३७)

यह ४५ सैं० मी० शिलालेख थानकोट जिले के बलम्बू नामक ग्राम के पश्चिम में तीन मील की दूरी पर माल्टार नामक स्थान पर स्थित है। शिला के ऊपरी भाग में चित्रित आकृतियाँ प्रायः मिट चुकी हैं।

१. **स्वस्ति मानगृहा — — — — — — — — — — — — — —**
- - - - - - - - - लिच्छविकु —

२. **ल] केतुर्भट्टारकमहाराज श्री ध्रुवदेव - - - - - - - - - -**
— —यासन्निवेशवि—-

३. **— — — — यितसु — सदनुवि - - - - - -[कैलास-**
कूट भ] - वनाद् विशुद्धपुण्य

४. **⏑– तच्चित्तसन्ततिः पराकृतापाय ⏑– = ⏑– = ⏑– =।**
⏑– = ⏑– धर्मस्थितिपूतशासन[:]

५. **समस्त = = ⏑= = ⏑– = ⏑– = ॥**
[भगवत् पशुपतिभट्टार]क पादानुगृहीतो ब-

६. **प्पापादानुध्या[तः श्रीजिष्णुगुप्तः कुशली] — — — —**
वृत्तिभुजः तदधिकृताश्चय

७. **— — — शल — — — — — — — — — — — — — —**
— — — — —

भवतां माग्वलग्रामकुटु-

८. **— — — — — — — — — — — — — — — — —**
— — — — — — —

पभुज्यमानम् अस्माभिः

९. **— — — — — — — — — — — — — — — — —**
— — — — — — — प — राय पातिताम् प्रणालीम्

१०. **— — — — — — तः ख — — — —क्षि — — — —**

— — — प्रवेशेन माग् — वल् ग्रामपाञ्चा — — —

३१. — — — — — प्रसाद — — — — —विदित— — — —
— — वा न कैश्चिदस्मत्प्रसा-

१२. [द] — — — — — — — यो — — — — — — — — —
— स्म [दाज्ञाम्] विलङ्घ्यान्यथा त्वमापादयेत् तद्

१३. — — — — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — —भवितारस्तैरपि पूर्व-

१४. —गुरु — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — नुमोदनानुपालनीया

१५. म अवश्य — — — — — — — — — — — — — —
— — — — — — न — य ।।
संवत् ४०९

१६. [मा]घकृष्ण दशम्याम् दूतक — — — — — — युवराज विष्णु
गुप्तः इति ।

मानगृह से सबका कल्याण हो । लिच्छविकुल की पताका भट्टारक महाराज श्री ध्रुवदेव — — — — — के — निकट रहने वाला — — में — — — सच्चाई पूर्वक — कैलाशकूट भवन से विशुद्ध पुण्य — — — चित्तवाली सन्तान, दूसरे के अनुपकार को भुलाकर — — धर्म की स्थिति एवं रक्षा के लिये पवित्र शासन वाला समस्त (प्रजा के द्वारा प्रशंसनीय) भगवत् पशुपति भट्टारक के पद से अनुगृहीत, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले श्री जिष्णुगुप्त कुशलतापूर्वक वृत्तिभोगियों एवं अधिकारियों को (कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि) आपके माग्वल ग्राम के निवासियों और वृत्तिभोगियों के (परोपकार) के लिये जल-नहर (प्रणालीम्) को गिराया गया है । — — — के प्रवेश का निषेध किया गया है । माग्वल् ग्राम के पाञ्चालिकों — — कृपा । जानने वालों के द्वारा अथवा अन्यों के द्वारा हमारी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं किया जाना चाहिये । जो हमारी आज्ञा का उल्लङ्घन करके प्रचारित करेगा तो (उसको दण्ड दिया जायेगा) भावी राजाओं एवं (परम्परागत राजकीय कृपापात्रों द्वारा) इस आज्ञा का अनुमोदन एवं पालन अवश्य होना चाहिये । संवत् ४९ माघ कृष्ण दशमी । यहाँ दूतक हैं युवराज विष्णुगुप्त ।

Inscription LI.

मीननारायणमन्दिरपुण्यव्यवस्थाभिलेख

सन् लगभग ६३८

४५ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख कठमण्डू के भैरव ढोका नामक विष्णु मन्दिर के निकट स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों से सुसज्जित है।

१. ओ३म् देवा = = ⏓ = = ⏓ ⏓ ⏓ ⏓ ⏓ ⏓ =
वञ्चितो = ⏓ त्मापौरस्त्यम् य ⏓ =
२. = ⏓ भिमुख ⏓ ⏓ = = ⏓ = = ⏓ रादिम् (।)
एतच्चान्यत्रिह्लस् त्वयि परवश=
३. = ⏓ : नीयो ⏓ = = = = = = = ⏓ लैर् वः
स्वकरमपहरन्त्य [ब्धि] जा सेश्वरा श्रीः (;।)
४. स्वस्ति मानगृ[हा] — — — — — दितचित्तसन्तति लिच्छवि
कुलकेतुर्भट्टारक–
५. राज श्री ध्रुवदेव पुरस्सरः (पुरस्सरे) सकलजननिरूपद्रवोपायसंवि-
धानार्पित [मा]
६. नसः कैलासकूट भवनाद् भगवत्पशुपति भट्टारकपादानुगृहीतो
बप्प––
७. पादानुध्यातः श्रीजिष्णुगुप्तः कुशली दक्षिणकोलीग्रामे गीटापाञ्चा-
लिका—
८. — — — — गान् कुशलेनाभाष्य समनुदर्शयति विदितं भवतु
भवतां — —
९. = = = ⏓ स = ⏓ = ⏓ ⏓ विधिज्ञानाद् उपासायति
रूपेणानुपमो गुणी
१०. ⏓ ⏓ ⏓ = = = ⏓ = = ⏓ = ।
इत्येवं प्रथितोऽपि यःप्रियहितं प्रत्याद=

११. ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ बलवतः शत्रून् बभंज्ञ स्वयम् (।।) इत्थम् — —

१२. — — — ष्ठे — — — — — — — — — — स्मदनुमोदितेन तदात्वायति — —

१३. — — — व्याप्रियमाणो — — — —नुग्रहप्रवृत्तचेतसा महा-सा[मन्त]

१४. — — — — देवेन यथायन्तिलमको भवतामन्येषाञ्चोपका-रायाक — —

१५. — — — पिण्डकदशभागम् प्रत्याकलय्य भवद्भिरेवोपसंहर्त्तव्यः — —

१६. — — — लेश्वरस्वामिनः पूजा पाञ्चाली — भोजनञ्च दिवस-नियमेन — —

१७. — य तिलमकप्रतिसंस्कारश्च कालानतिक्रमेणैव कार्य इत्येषो-

१८. ऽस्य पुण्याधिकारो व्यवस्था चास्मत् — प्रसादोपजीविभिरन्यैर्वा न कैश्चिद[प्य]

१९. न्यथा करणीया यः कश्चिदेताम् आज्ञाम् अतिलङ्घ्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा

२०. — — — — — क्रमकृतोऽवश्यमेव दण्डोविधातव्यो येऽप्यस्म—

२१. — — — — संभविष्यन्ति तैरप्यात्मीयैव — — — धिकारे-ऽस्मत्कृतव्र

२२. — — — — — स्य रक्षायामनुपालने च — — — — हितै-र्भवि[तव्यम्]

२३. — — — स्य देव — — — — — — — — — —

२४. — — त्र इति — —

ओ३म् देव — — वञ्चित — — प्रजागण — — — सृष्टि का आदि स्वरूप है। अन्य तीन लोक तेरे में आश्रित हैं। अपने कर से सागर की पुत्री लक्ष्मी (श्री) अपने स्वामी के साथ रक्षा करें।

मानगृह से सबका कल्याण हो (पुण्य, शुद्ध) एवं प्रमुदित चित्तवाली सन्तान, लिच्छवि कुल की पताका भट्टारक महाराज श्री ध्रुवदेव के सम्मुख

सम्पूर्ण प्रजा को संकटों एवं उपद्रवों से रहित करने के उपायों एवं समाधानों में अपने मन को समर्पित करके रखने वाले, कैलासकूट भवन से भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरण का ध्यान करने वाले श्री जिष्णुगुप्त कुशलतापूर्वक — — दक्षिण कोली नामक ग्राम में गीटा पाञ्चालिका नामक स्थान पर गये हुए निवासियों को कुशलता पूछकर निर्देश देते हैं कि जैसे आप सबको विदित है कि—अपने प्रशासनिक विधि ज्ञान से सफलता प्राप्त करने वाला है, रूप में अनुपम एवं सर्वगुण सम्पन्न है, ऐसा प्रसिद्ध एवं राज्य विस्तार का स्वामी होते हुए भी जो प्रजा को प्रिय लगने वाले कल्याण को करने वाला है। बलवान शत्रुओं को अपनी इच्छा शक्ति से भङ्ग करने वाला है जैसा कि हमारे द्वारा अनुमोदित तथा हमारी कृपा से प्रवृत्त चित्त वाले महासामन्त श्री जीवदेव आपके और अन्यों के कल्याण के लिये इस नहर को लाये थे — — — — पिण्डक के दश भाग गिनकर आपको एकत्रित करने चाहिये।

उस धन से प्रतिदिन नियमपूर्वक — — — लेश्वर स्वामी की पूजा की जानी चाहिये और पाञ्चालिकों को भोजन दिया जाना चाहिये। साथ ही पूर्णावधि समाप्त होने से पहले ही नहर का जीर्णोद्धार भी किया जाना चाहिये। इस प्रकार यह इसकी पुण्याधिकार व्यवस्था है। इस प्रकार हमारी आज्ञा का हमारे चरणोपजीवियों द्वारा, अन्यों के द्वारा, अथवा किन्हीं के द्वारा भी अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये। जो भी इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा उसे अवश्य ही दण्ड दिया जायेगा। जो भी अपने होंगे उनके द्वारा भी हमारे अधिकार पूर्ण आज्ञा की रक्षा एवं अनुपालन होना चाहिये।

LIII

आदेश्वर-नाथेश्वरप्रतिष्ठानाज्ञा-शिलालेख

सन् लगभग ६३८ ई०

लगभग ५० सें० मी० चौड़ा शिलालेख काठमाण्डू के निकट भगवान आदेश्वर के मन्दिर में स्थित हैं। शिलालेख का ऊपरी भाग बैल की आकृति से विभूषित है।

१. स्वस्ति मानगृहात् अनेकदिगन्तरप्रथित—पृथुपराक्रमो लिच्छविकुशलालङ्कारभूतो भट्टार–

२. कमहाराज श्री ध्रुवदेवस्ततपुरस्सरः कैलासकूटभवनादसुलभनृपतिगुणावभासि—

३. तसकलमहीमण्डलो भगवत्पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः

४. श्रीजिष्णुगुप्तः कुशली छोगुम्यूबीसामातलञ्जू—ग्रामेषु निवासमु उपगतान्न् कुटुम्बिनः प्रधानपु-

५. रस्सरान्न् कुशलेना [भा]ष्य समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां राजापुत्रनन्दवर्मणा

६. स्वपितूराजपुत्रजिष्णुवर्मणो मातुर्वत्सदेव्या भ्रातृणाञ्च श्री भीमवर्म प्रभृतीनां स्व—

७. र्लोकसुखोपभोगपरम्पराविच्छेदहेतोर्भगवतो नाथेश्वरस्य प्रतिष्ठानं यद्द तद्द अस्यै

८. व प्रतिपादनाय विज्ञप्तैरसा — —सलञ्जुग्रामेषु— — — — — दक्षिणपश्चिमोत्तरा—

९. णामति सृ[ष्टे] न — — य — स — खश . — को —

१०. द्रङ् कृत्वा प्रति [पा]दित — — — — — — — भि — — —
— — — — — — — — परिपालनीय —

११. — — — त्र पा — — त्र — — — — — — — — — — —
— — — — — — — — — — — — — — — — — —

१२. प्रत — प्रतिप — — — — — — — — — — — — —
ञ्व — — क्षपयैरति — — — —

१३. — विपाक — — — — — — — — — — — — — — —
— — — त् तदनुष् — — र्ह — ति — — यमोऽस्य

१४. — — — — — — — — — — — — — — — — — —
— — [दूतक]श्चात्र युवराज श्रीविष्णुगुप्त इति ।

मानगृह से सबका कल्याण हो। अनेक दिशाओं में व्याप्त व्यापक पराक्रम वाले लिच्छविकुल के भूषण भट्टारक महाराज श्री ध्रुवदेव के सम्मुख कैलाशकूट भवन से सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल पर सभी राजसुलभ गुणों से उद्भासित, भगवान पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरण का ध्यान करने वाले श्री विष्णुगुप्त कुशलतापूर्वक छोगुम्यूबीसा, मातलञ्जू ग्रामों में निवास के लिये गये हुए कुटुम्बियों एवं प्रधानों के सम्मुख कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि—"आप सबको विदित हो कि राजपुत्र नन्दवर्मा ने अपने पिता राजपुत्र जिष्णुवर्मा तथा माता वत्सदेवी, भाइयों के, और श्री भीमवर्मा के स्वर्गलोकीय सुखोपभोग परम्परा की अक्षुण्णता के लिये भगवान् नाथेश्वर की स्थापना की। इसके प्रतिपादन (संचालन) के लिये विज्ञप्ति को प्रमाणित किया है—तलञ्जुग्राम में — — — उत्तरपश्चिम की ओर पहाड़ियों का झरना, — — — इस क्षेत्र के अन्तर्गत हमने एक कोट्ट (दुर्ग) निर्मित किया है, उसकी देखभाल आपके द्वारा की जानी चाहिये — — — यहाँ दूतक हैं युवराज श्रीजिष्णुगुप्त।

LIV

कारणपूजादि व्यवस्थाज्ञा शिलालेख

सन् लगभग ६३९ ई०

लगभग ४३ सें० मी० चौड़ा शिलालेख केवलपुर गाँव के निकट पश्चिम की ओर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग बैल की आकृति से सुशोभित है।

१. ओ३म् स्वस्ति मानगृहात् सकलसत्त्वानुग्रहाहितमनोनिरभिमान-
२. रमणीय चरित लिच्छवि कुलकेतुर्भट्टारकमहाराजश्रीध्रुव-
३. देवपुरस्सरः प्रजाहितोद्युक्तविशुद्धमानसः प्रभावशौर्यप्र-
४. णतारिमण्डलः (।)
गुणैरुपेतोऽनुपमैरिहात्मवान् पृ० . = ⌣ = =
५. मृ अपि चन्द्रमा इव ॥
सोऽयम् इत्थंभूतः कैलासकूटभवनात् भगव—
६. त् पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्रीजिष्णु-
७. गुप्तः कुशली नुप्पुन्नद्रङ्गनिवासिनः प्रधानपुरस्सरान् कुटुम्बिनः
८. कुशलाग्रेसरम् समाज्ञापयति विदितम् अस्तु वो भट्टारक महाराज
९. श्री वसुराज श्रीमहीदेव श्रीमानदेव श्रीगणदेवास्मत्पितामह श्री
१०. भूमगुप्त इत्येतैः पूर्वराजभिरस्मद्गुरुभिः परानुग्रह प्र-
११. वृत्तितया शिलापट्टकशा [सनद्वि] तयेन वो यः प्रसादविशे[षै]
१२. रनुग्रहः कृतोभूद्वा — — — — — निदद्वादशभागवस्तुतोया-
१३. नि प्रसादीकृतानि कै[श्चि] — — — — — या राजभोग्यतां आपादितान्य-
१४. स्माभिर्भवत्साहाय्या-
दिकर्मपरितुष्टैः शतद्वयन्नुप्पुन्ने भगव—
१५. न्नारायणस्वामिनो भवद्भिरेव कारणपूजादिप्रवर्तनार्थम् प्रतिपा—
१६. दितम् दशशतानि भवतां एव पूर्वराजकृतव्यवस्थाया प्रतिमुच्य
१७. दङ्खुट्टार्धादिकरणीयप्रतिमोचनार्थम् लिङ्ग्वलशोल्लादीनाम् अप्रवे-
१८. शाय पूर्वराजशासनेषु ये प्रसादास्तेषाम् सर्वेषामेव [युष्म-
१९. दतिसृष्टाणामनुमतिशासनमिदं अस्माभिरपि प्रसादी [कृत-

PLATE LIII

२०. मेवम् वेदिभिर्भवद्भिरस्मत्प्रसादप्रतिबद्धजीवनैरन्यैर्वा [न कैश्चि]—
२१ दियम् आज्ञान्यथा करणीया यस्त्वेतामाज्ञामुत्क्र[म्या]न्यथा करि]-
२२. ष्यते कारयिष्यते वा तस्योत्पथ [गामिनः] — — — — — — — — — —
२३. — — पा . वि — — — ये — — — — — — — — — — — — — — — — — —

ओ३म् मानगृह से सबका कल्याण हो। समस्त प्राणियों के प्रति अनुकम्पा एवं कल्याण से परिपूर्ण मन वाले, निरभिमान तथा रमणीय चरित्र वाले, लिच्छविकुल के ध्वज, भट्टारक महाराज, श्री ध्रुवदेव के सम्मुख जो प्रजा के हित में विशुद्ध मन से लगे हुए हैं, जिसके शौर्य-प्रभाव से समस्त अरि-मण्डल नतमस्तक हो जाता है, अनुपम गुणों को प्राप्त करने के कारण पृथ्वीमण्डल पर मानो चन्द्रमा के समान हैं।

वही यह इस प्रकार होकर कैलासकूट भवन से भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले जिष्णुगुप्त कुशलतापूर्वक नुप्पुन्नद्रङ्ग निवासियों, प्रधानों एवं कुटुम्बियों के सम्मुख कुशलता पूछने के पश्चात् यह आज्ञा प्रदान करते हैं कि आप सबको ज्ञात हो कि भट्टारक महाराज श्री वसुदेव, श्रीमहीदेव, श्रीमानदेव, श्रीगणदेव, और हमारे पितामह श्री भूमगुप्त इन सभी पूर्वराजाओं, हमारे गुरुजनों ने दूसरों के लिये कल्याणकारी प्रवृत्ति के द्वारा आज्ञा को शिलापट्ट पर लिखवाया। इस प्रकार आप लोगों पर हमने विशेष कृपा एवं अनुग्रह किया है।

हमने आपको १२ वस्तुएँ देकर अनुग्रह किया है। किन्हीं कारणों से राजकीय परिवार अधीनस्थ हो गया था किन्तु आपके सहायतापूर्ण कार्यों से हम प्रसन्न होकर आपके द्वारा प्रतिपादित नारायणस्वामी की दैनिक कारणपूजा के लिये नुप्पुन्न के द्रङ्ग में २०० प्रदान करते हैं। पूर्वराजाओं द्वारा निर्मित व्यवस्था के अनुसार ही दङ्खुट्टार्घ आदि १०००, देय करों से मुक्त करने के लिये लिङ्गवल् और शोल्ला अधिकरणों के प्रवेश को पूर्वराजशासनों द्वारा निषिद्ध करके जो कृपाएँ की गई थीं उन सबकी ही पुनः स्थापना की स्वीकृति हमारे द्वारा दी जाकर कृपा की जाती है। इस प्रकार आप लोगों के द्वारा हमारे प्रसादोपजीवियों के द्वारा, अन्यों के द्वारा इस आज्ञा का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा उस विपथगामी को अवश्य दण्ड दिया जायेगा।

LV

करमुक्ति इन्द्रमटो अभिलेख

संवत् ५५ (५५ + ५८८ = ६४३ ई०)

लगभग ४३ सें० मी० चौड़ा यह शिलालेख बलम्बू ग्राम के उत्तर में महालक्ष्मी पीठशरण-स्थल के खण्डहरों के निकट इन्द्रमती नदी के दाहिने तट पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग खण्डित है।

१. [ओ३म् स्वस्ति मानगृहा] — — — — — — — नो नयनाभिरामो

२. [लिच्छवि] कुलकेतुर्भट्टारकमहाराज श्रीभीमार्जुन–

३ [देवस्त] त्पुरस्सरः कैलासकूटभवनाद् अभिमत पु–

४. [ण्य] — — — — य — लक्ष्मीपरिष्वङ्गो भगवत् पशुप—

५. तिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्रीजि–

६. ष्णुगुप्तः कुशली जीनुङ्वृत्तिभुजो दिग्वारवृत्तिभुजश्च य—

७ थार्हम् (यथार्थम्) प्रतिमान्यानुदर्शयति विदितं भवतु भवता—

८. मस्माभिर्जोल्प्रिङ्ग्रामे स्वादुशुचिशीतलसलिलास्रा[1]

९. वजनिकीम् पातयित्वा प्रणालीमस्या एवानुपालनहेतोः जीनु[ङ्]

१०. — मास — — — — ङ् कारयित्वा स — ण्डुदेवकुलद्विग्वारवस्तु स—

११. हि [त] जोल्प्रिङ्ग्रामपाञ्चालिकानां तैलकरम् प्रतिमुच्य प्रसादीकृतम्

१२. तास्याश्च जीनुङ् वृत्तेः सीमापश्चिमेन ह्वाशुम्मार्गखातकः उत्तरे

१३. ण तं ० ओस्थणम् दक्षिणखातकः। पूर्वेण नितिदुल् दक्षिणेन कंशु—

१४. शानखातकः। ततः स — — — — — — — — कैत्येतत्सीमपरिक्षि

१५. प्तायाम् भूमावस्मत् —
प्रसादोपजीविभिरन्यै] र्वा न कैश्चिदत्यल्पापि पी[डा]

---

१. वृत्त्यनुप्रासालङ्कार

१६. करणीया येत्वेताम् आ[ज्ञामुल्ल]ङ्घ्यान्यथा कुर्युः कारयेयु-
१७. र्वा तानत्यर्थंमेव वयन्न मर्ष[यिष्यामो भवि] ष्यद्भिरपि भूपतिभिः
१८. पूर्वंभूपतिधर्माधिकारानुपालनादृतैर्भवितव्यं चिरकालस्थित-
१९. ये चास्य धर्माधिकारस्य शिलापट्टकशासनमिदम् दत्तमिति स्वयमाज्ञा
२०. दूतकश्चात्र युवराज श्रीविष्णुगुप्तः संवत् ५०५ आश्वयुजशुक्ल-
पञ्चम्याम् ।

ओ३म् मानगृह से सबका कल्याण हो। नयनाभिराम लिच्छविकुल की पताका भट्टारक महाराज श्री भीमार्जुन देव के सम्मुख कैलासकूट भवन से इच्छित पुण्य युक्त लक्ष्मी से आलिङ्गन करते हुए भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले श्री जिष्णुगुप्त कुशलतापूर्वक जीनुङ् तथा दिग्वार ग्रामों के वृत्ति भोगियों के प्रति यथायोग्य सम्मान प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि आप सबको विदित हो कि हमने जोल्प्रिन् ग्राम में स्वादिष्ट, पवित्र, शीतल जल को प्रवाहित करने वाली नाली को बनवाया है जिसके पोषण के लिये जीनुङ् ग्राम में देवदार के बगीचे का निर्माण किया है — — करके खण्डुदेवकुल तथा दिग्वार वस्तु के साथ जोल्प्रिङ् ग्राम के पाञ्चालिकों को तैल कर से मुक्त करके कृपा की है।

उसका और जुनुङ् ग्राम की आजीविका की सीमा है—

पश्चिम से ह्लाचुम्मार्ग की खन्दक, उत्तर से ओस्थणम् दक्षिण की खन्दक। पूर्व से निविदुल् दक्षिण से, कंशुशान खन्दक। उसके पश्चात् — — — — उस सीमा में आई हुई भूमि में — — — — हमारे प्रसादोपजीवियों द्वारा अन्य दूसरों के भी द्वारा थोड़ी सी भी पीड़ा नही दी जानी चाहिये। जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेंगे या करायेंगे, उनको हम सहन नहीं करेंगे। भावी राजाओं के द्वारा तथा उत्तराधिकारी राजाओं द्वारा इस धर्माधिकार (धर्मादेश) का पालन आदर के साथ किया जाना चाहिये और इस धर्माधिकार की चिरस्थिति के लिये, यह शिलापट्टक शासन दिया गया है, यह स्वयं हमारी आज्ञा है। दूतक हैं यहाँ युवराज श्री विष्णुगुप्त। संवत् ५५ आश्विन् शुक्ल पञ्चमी।

LVI

थानकोट पुष्करिणीदानाज्ञाकरनिर्धारण शिलालेख

संवत् ५६ (सन् ५६+५८८=६४७)

लगभग ४३ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख थानकोट नामक ग्राम में स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों की आकृतियों से सुशोभित है।

१. ओ३म् तर्ज[1] = कर्णकण्ठ ⏑ – प ⏑ – ⏑ – हसुखोन्मीलिता = ⏑ – = =[2]

२. श्री निःस्वङ्गोपगूढस्तनकलशयुगस्याग = = ⏑ – = = (।)[3]

३. = = = =स्थित[4]= ⏑ – ⏑ – जलधिजलक्षालिताङ्गस्य शौ=[5]

४. = = त्पर्य[6] ⏑ – = = स्थगितसुखगतिश्रेयसाम् जृंभितं वः ।।

५. स्वस्ति मानगृहात् सिंहासनाध्यासिकुलकेतुभट्टारक श्रीभीमा[र्जु]

६. नदेवस्[7] (श्रीमनदेवस्) तत्पुरस्सरः कैलासकूटभवनात् सोमान्वय-भूषणो

७. भगवत् पशुपति भट्टारक पादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्री

---

१. स्रग्धरा छन्द

२. L. आज्ञानाकर्णकण्ठ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ सुखे, ई. इ = – ⏑ – = ।।

३. L. युगसागरो – ⏑ – – ।

४. L. omits स्थित

५ L. ङ्गस्य गोप ।।

६. L. omits त्पर्य

७. L. श्रीमानदेवस् ।।

८ जिष्णुगुप्तदेवः कुशली — ञ्चेग्राम[८] निवासिनः कुटु—

९ म्बिनो यथाप्रधानं[९] कुशलमाभाष्य समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां

१०. = = ज्येष्ठप्रपितामह[१०] मानगुप्तगोमिकारित पुष्करिणीम् उ —

११. द्दिश्य[११] ग्रामस्योत्तरेण पार्वतभूमिश्चोम्पिर नामधेयनैल्यकर[म्][१२]

१२. प्रतिनुच्य दत्ता तस्याश्च काशान्तरेण शासनान्तर्भावमभूत त—

१३. [द वे]त्य[१३] प्रपितामह कृतज्ञतयास्माभिरिदम् शिलापट्टकशास

१४. [नम्] दूरतरकालस्थितये दत्तं सीमा चास्य उत्तरपूर्वेण पुर्व—

१५. ण[१४] (L. उत्तरपूर्वम् अपूर्वमु) शिखरोपर्यधोगोमिखातकं अनुसृत्य पश्चापानीय

१६. पातः[१५] (पञ्चापानीयमतः) पूर्वदक्षिणेन येब्रंखरो दक्षिणेन थम्मि-दुल्[१६] ततोऽनुसृत्य

१७. दक्षिणेनैव सुरिसिंवत्ती[१७] दक्षिणेन नदीदक्षिणपश्चिमेन श[१८]

२८. लङ्का पश्चिमेन खातकस्ततोऽनुसृत्य पहञ्चा ततो लुम्बञ्चो[१९] उत्तरे—

१९. ण तत्पर्वत[२०] (तु पर्वत) शिखमूर्धनि खातकस्ततो यावत् स एवोत्तर[२१] (सववोत्तर) पूर्व—

---

८. L. काचण्णास्त

९. L. यथा — न ॥

१०. L. अद्य स्वप्रपितामह

११. L. पुष्किरिणीम्

१२. L. चाखरम् नाम याचेलक

१३. L. कालान्तरे तद् उड्मस्त्यत्त . त्य ॥

१४. L. उत्तरपूर्वम् आपूर्वम्

१५. पञ्चपानीयम् अतः ॥

१६. धरिदमदुल

१७. वास्तारिसिंवत्ती

१८. L. ई

१९. L. लम्पञ्चो

२०. तु पर्वत

२१. सववोत्तर

२०. खातक इति[२२] अन्यश्चास्मभिः प्रयोजनान्तराधितैर्भवताम्[२३] ग्राम-
२१. निवासिनाम् कुटुम्बिनाम् प्रसादविशेषो दत्तो दक्षिणकोलिग्रा[मे][२४]
२२. गोयुद्धे गोहले गोहले यद्द्येमासीत् तस्यार्द्धम् प्रतिमुक्तम् सिं-[२५]
२३. करे च येन कार्षापणन्देयम् तेनाष्टौ पणा देया येनाष्टौ
२४. पणा देयम् तेन पणचतुष्टयम् मल्लकरे च पणचतुष्ट-
२५. यम् देयमिति यस्त्वेताकाज्ञामुल्लङ्घ्या[२६] समत्प्रसादोपजी-
२६. व्यन्यो वा कश्चिदन्यथा कुर्यात् कारयेद् वा तं वयन्न म-
२७. र्षयिष्यामो भविष्यद्भिरपि भूपतिभिः पूर्वराज [कृ]
२८. ताज्ञतया[२७] धर्मापेक्षया चेदम् शासनम् प्रतिपालनी-
२९. यम् दूतकश्चात्र युवराज श्री विस्णुगुप्तः
३०. संवत् ५०९ — — — — शुक्ल दिवा द्वि [तीयायाम्][२८] ।।

ओ३म् तर्जनी उँगली से सुखपूर्वक नेत्रोन्मीलित होकर कर्ण एवं कण्ठ को स्पर्श करते हुए, युगल स्तन कलशों वाली लक्ष्मी का आलिङ्गन करने वाले, स्थिति, प्रलय के कर्त्ता — — — जलधि के जल से धुले हुए सरलता से अंगों को गुप्त करने वाले -- — — सुखों की गति को वश में करने वाले विष्णु भगवान् आप सब पर कल्याण का निश्वासन करें।

मानगृह से सबका कल्याण हो। सिंहासनारूढ़ कुलकेतु भट्टारक श्री भीमार्जुनदेव, श्रीमानदेव उनके सम्मुख कैलासकूट भवन से सोम के वंशजा-भूषण भगवत्पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, श्री बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले जिष्णुगुप्त देव कुशलतापूर्वक — — -- — थैञ्चो ग्राम निवासियो, कुटुम्बियों, प्रधान मुख्यों से कुशल पूछकर यह सूचना देते हैं कि आप सबको विदित हो कि—ज्येष्ठ प्रपितामह मानगुप्त गोमी द्वारा बनाई गई इस पुष्करिणी (तलैया) को लक्ष्य करके ग्राम के उत्तर से चौम्पिर नामक

---

२२. L. ईति
२३. L. भवता
२४. L. ग्राम
२५. L. सिंह
२६. उल्लङ्घ्य
२७. कृतज्ञतया पूर्वराजाज्ञातया
१८. संवत् ५०० ?

पर्वतीय भूमि को (पुष्करिणी के लिये) स्वीकृत कर प्रदान की तथा ग्रामीणों को ऐल्यकर (चेलकर या वस्त्रकर) से मुक्त कर दिया गया है। इसलिये हमने यह शिलापट्टक शासन चिरकाल तक स्थिर रहने के लिये प्रदान किया, और उसकी स्थिति कालान्तर में भी मेरे शासन के पश्चात् विद्यमान रहे। इसकी सीमा होगी :- उत्तर-पूर्व तथा पूर्व और पर्वत-शिखर के ऊपर नीचे गोमि नामक खाई के साथ साथ पश्चिम में पीने के जल-प्रपात तक, पूर्व-दक्षिण की तरफ येब्रम्खारो, दक्षिण से थमिदुल, इसके पश्चात् उसके साथ साथ दक्षिण से ही सुरिं सिवत्ती दक्षिण की ओर एक नदी, दक्षिण-पश्चिम से शिङ्खला, पश्चिम से खाई तत्पश्चात् उसके साथ साथ पहांञ्चो तत्पश्चात् लुम्बन्चोक, उत्तर से वह पर्वत-शिखर के ऊपर की खाई, तत्पश्चात् वही, उसके पश्चात् उत्तर-पूर्व में खाई, ऐसा अन्य और हमारे भी अन्य प्रयोजन से, आप ग्रामनिवासी कुटुम्बियों की कृपा विशेष से प्रदान किया गया।

दक्षिण कोलिग्राम में, गोयुद्ध में तथा गोहल (कृषि भूमि) में जो कुछ कर के रूप में देय था उसका आधा छोड़ दिया गया है। सिंकर के रूप में जो कार्षापण देता था उसे आठ पण देने होंगे, जो आठ पण देता था उसे चार पण देने होंगे, जो हमारा चरणोपजीवी अथवा अन्य इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा, उसे हम सहन नहीं करेंगे। भावी राजागण, परम्परागत राजकीय कृपापात्र, धर्माधिकारी के द्वारा इस आज्ञा के पालन किये जाने की अपेक्षा की जाती है। यहाँ दूतक हैं युवराज श्रीविष्णुगुप्त संवत् ५९ शुक्ल दिव द्वितीया।

LVII

मालीगाँव माप्चोकाधिकार शिलालेख

संवत् ५९ (सन् ५९+५८८=६४७ ई०)

लगभग ३९ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख मालीगाँव, काठमाण्डू नामक स्थान पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र एवं दो शङ्खों की आकृतियों से विभूषित है।

१. [ओ३म् स्वस्ति] कैलासकूट भ[वना] — — — — — — — — — — — — — — — — —

२. — — — — — — वय —

९. — — मा — — — कारेण — — — — — — — — — — — — — — — — — —

१०. — — —व केवलम् इ — — भिः — — हित — — — — — — — — — — — — —

१. — णे व्यवस्थेयमुपदा — त—रिप . य — — — ष्ठे प्रश्नवि — पति — पि —

१२. हष्टेभ्यो योषितां अपरः पतिः इत्य — — मादि — : कारणैर-परै — — —

३३. रणान्तरैर्विवाहात् पतनकालं संग्रहं येनापरम् पतिमुपयाता नि—

१४. रपत्या योषितो ज्ञाति — — व . इ . इया — — — यदि परि भ्रश्यान्यत् पत्यन्तरम्

१५. उपाददत एवं द्वितीयं संग्रह [मुप] याता नि [:पु] त्रवत्यो भविष्यन्ति तासु मा—

१६. प्चोकाधिकारो यं यथाव्यवस्थम् प्रवर्तयितव्यस्तास्वप्यतीतासु यूनी-सारूप्य

१७. कनू तन्नाम्ना परिभाषिताञ्च धनं तं माप्चोकवृत्तिभुजा ग्राह्यम् ततोऽपि पुरुषप-

१८. रितोषम् अभावयित्वा
बहुशोऽपि व्यपेत ⏑ लज्जाप्रखलस्वभावाश्चारित्रधर्मा ⏑ ⏑
१९. ⏑ युवत्यः (।)
सन्तोषहीनाः प्रथमे विरक्ता रागानुषक्ताः पुरुषं भजन्ते (॥)
२०. तापि यदि पुत्रवत्यो भविष्यन्ति नैव मापचोकाधिकारभागधेया
२१. यस्त्वेतामतीतानेकनरपतिकृतव्यवस्थानुगामिनीमस्मदव्यवस्थाम्
२२. अन्यथा कुर्यात् तम् वयमत्यर्थंन्न मर्षयिष्यामो भाविभिरपि भूपति-
भिरिदमस्म-
२३ त्कृतम् देशपीडापरिहारनिष्ठम् शासनम् आत्मीयम् इव पूर्वगुरुतया
२४. सम्यगनुपालनीयमिति समाज्ञापना संवत् ५०९ फाल्गुन शुक्ल
२५. सप्तम्याम् दूतकोऽत्र श्री युवराज श्रीधरगुप्तः ॥

कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। प्रथम पति के मृत होने पर या घर को छोड़कर चले जाने पर, पथ भ्रष्ट हो जाने पर अथवा बहुत वर्षों तक अदृश हो जाने से यदि पत्नी इन कारणों से अथवा अन्य दूसरे कारणों से अपना दूसरा पति वरण कर लेती है तो इस मामले में यदि वह दूसरे पति की रखैल बनकर, पथभ्रष्ट होकर निःसन्तान है तो इस स्थिति में माप्चोक विभाग उनकी सम्पत्ति को अपने अधिकार क्षेत्र में ग्रहण कर लेगा। यह सब कुछ जानते हुए भी यदि वे मठवासिनी (विरक्ता) के रूप में मृत्यु को प्राप्त होती है तो इस स्थिति में उनके नाम पर घोषित सम्पूर्ण धन-सम्पत्ति माप्चोक विभाग के अधिकार-क्षेत्र में आ जायेगी। तत्पश्चात् भी जो स्त्रियाँ बहुत से पुरुषों द्वारा सन्तुष्ट नहीं हैं, जो निर्लज्ज स्वभाव वाली हैं, चरित्र हीन एवं विधर्मा हैं, जो युवतियाँ प्रथम पुरुष से विरक्त होकर अपने प्रेमी पुरुष के साथ सहवास कर रति उपभोग करती हैं ऐसी स्त्रियाँ भी यदि सन्तान युक्त हैं तो माप्चोक विभाग उनकी सम्पत्ति के सम्बन्ध में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगा।

जो इस नियम के अतिरिक्त अन्य दूसरे राजाओं द्वारा बनाई गई व्यवस्था का अनुगामी हमारी व्यवस्था के विपरीत करता है या कराता है तो मैं उसे सहन नहीं करूँगा। होने वाले राजागण भी हमारे द्वारा विहित देश की पीड़ा विनाशक आज्ञा का अपने ही द्वारा बनाई गई आज्ञा के समान समझकर अथवा पूर्वज के द्वारा बनाई गई आज्ञा समझकर, इसी सम्मान से इसका सम्यक् पालन करेंगे। इस प्रकार की सूचना है। संवत् ५९ फाल्गुन शुक्ल सप्तमी। दूत यहाँ हैं श्री युवराज श्रीधर गुप्त।

---

१. उपजाति

LVIII

येंगाहिठि करमुक्ति शिलालेख

३६ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख लागनटोले, काठमाण्डू के निकट येंगाहिठि नामक स्थान पर एक जल-प्रवाहिका में स्थित है । शिला का ऊपरी भाग एक एक चक्र तथा दो शङ्खों से सुसज्जित है । संवत् की तिथि लुप्त हो चुकी है ।

१. ओ३म् स्वस्ति मानगृहाद् अभिनवोदितदिवसकरकराधिकतर[1]
२. दीप्तयशोंशुमाली लिच्छविकुलतिलको भट्टारकमहाराज
३. श्रीभीमार्जुनदेवस्तत्सहितश्च नरपतिगुणसम्पद्भूषितो[2]
४. भूरि = जागत ⏑ ⏑ शशिशुभ्राङ्कीर्ति उच्चैर्दधानः (।) मुदित ज ⏑ =
५. [न] नर्मान्य = = ⏑ राय, प्रमथितरिपुपक्षो देशसौख्यैक—
६. चित्तो ॥ भगवत्पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो वप्पपादनु—
७. ध्यातः श्रीजिष्णुगुप्तः कुशली दक्षिण कोलीग्राम निवासिनो
८. ब्राह्मणप्रधानपुरस्सरान् सर्वपाञ्चालीकुटुम्बिनः कुशलमभि—
९. धाय समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां यो युष्माकं म——
१०. ल्लकरः पूर्व — — — — — — श्चतुर्भिस् ताम्रिकपणैः प्रतिमु—
११. क्तोऽभूदस्माभि — — — — — — —[प] णाः प्रतिनुक्ता मल्ल-पोतकानाम् अ—
१२. पि मर्यादा — — — — — — लङ्कृत्य यं निष्क्रमणं तदपि प्रति-मुक्तं
१३. भट्टाधिक [रण] — — — — — — वस्तु — च यूयं नानुस्मर—

---

१. मालिनी छन्द
२. वृत्त्यनुप्रासालङ्कार

१४. णीया इत्य — — — — — — — प्रसादीकृतं शक्तवाटक्र-
रणीय—

१५. स्तु [चतु] भि [स्ताम्रिक] पणैः प्रतिमुक्तोत्पन्न नदीदेवकुलप्रासाद-

१६ स्य — त्य — — — — — इ — पुरुष — कृ — —
जातीय — —

१७. कालधर — — —यज्यते स — — ड्रिर — — — — —
कृता— — —

१८. धनीय — — — — सादाशि — — — य . इ — प — —
— — — —

१९. वः प्र[सादः] कृ [त] — — — — — — — — — — —
— — — — —[द]

२०. क्षिण ोली — — — — — — — — — — — — — —
— — — — — — —

२१. ष्यते — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — —

२२. त्रिभि — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — —

२३. नीय — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — —

२४. ति — इ — — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — — —

ओ३म् मानगृह से सबका कल्याण हो। नवोदित सूर्य की किरणों से भी अधिक दीप्त यशवाले, सूर्य के समान लिच्छवि-कुल के तिलक भट्टारक महाराज श्री भीमार्जुन देव तथा उनके साथ नृपगुण-सम्पदा से विभूषित, शारदीय शुभ्र शशि के समान निर्मल कीर्ति पताका को उच्च रूप से धारण करने वाले, देश के सुख में एकचित्त होने वाले तथा शत्रु पक्ष को प्रमथित अर्थात् मर्दित करने वाले, भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले श्री जिष्णु गुप्त कुशलता पूर्वक दक्षिण कोलि ग्राम निवासी, सब पाञ्चाली कुटुम्बियों एवं ब्राह्मण प्रधान के सम्मुख कुशलता पूछकर सूचित करते हैं कि जैसे आप सबको विदित हो कि पूर्व-राजाओं के द्वारा चार ताम्र पण की दर से जो तुमसे मल्ल कर लिया जाता

था हम उस कर से आपको मुक्त करते हैं। अब हमने मल्ल-पोतक (बकरी का बच्चा) पर लिये जाने वाले कर से भी आप लोगों को मुक्त कर दिया है। भट्टाधिकरण विभाग के प्रवेश को हमने निषिद्ध कर दिया है। — — अन्य वस्तुओं के कर के सम्बन्ध में अधिकारियों द्वारा तुम्हें स्मरण नहीं किया जाना चाहिये। कर-समाहरण के समय भी आपको नहीं बुलाया जायेगा। नदी के किनारे मन्दिर के भवन शक्तवाटक के निर्माण-कार्य के सम्बन्ध में आप से लिये जाने वाले चार पण को भी माफ किया जाता है। — — — पुरुष — — कालधर जाति — - दक्षिण — — कोलि नामक ग्राम — — —

LIX

चण्डेश्वर जीर्णोद्धार भूमिदानाज्ञा
स्तम्भ-लेख

सन् लगभग ६५० ई०

१. सम्यग् ज्ञानादियुक्तः सक—
२. [ल[गुरणगणं क्षोभयित्वा प्र—
३. [धा] नम् ब्रह्मादिस्थावरान्त—
४. ञ्जगदिदम् अखिलं यो सृज—
५. द्व विश्वरूपम् (।)
आजीव्यम् सर्व
६. पुंसां गिरितरुगहनं यः करो
७. त्येकरूपम् पायात् सोऽद्य प्रस—
८. न्नः स्मरतनुवहन[2] श्छत्र च—
९. न्द्रेश्वरो वः (।।)
स्वस्ति श्री जिष्णुगुप्त—
१०. स्य प्रवर्धमानविजयराज्ये आ—
११. चार्य भगवत् प्रनर्द्दनप्राणकौ—
११. शिकेन भगवतः छत्रचन्द्रेश्वरस्य
१२. शिकेन भगवतः छत्रचन्द्रेश्वरस्य[3]
१३. —कू ग्रामे[4] प्रणालिकायाश्च ल-

१क. स्रग्धरा,
ख. व्यःजस्तुति
२ Bh. I. दहनक्
३. Bh. I. भगवतश्छत्र
४. Bh. I. कूग्रामे

१४. [ण्ड] स्फुटितसमाधानार्थम्[५] उद्दि—

१५. [श्य] मुण्डश्रृङ्खलिक पाशुपताचा—

१६. र्यपर्षदि वाराह स्वाम्युमसोमा

१७. क्रसोमखडुकानाञ्च[६] अशी—

१८. [ति] — पिण्डकमानिकानां भू[७] प्रतिपादि—

१९. तः [ता] सांप्रदेशा लिख्यन्ते पिखू

२०. ग्रामे म १० साफना[८] दूलके मा २०

२१. पागुमके मा ५ पोग्रामे मा २ खू

२२. लपिङ्ग्रामे[९] वा ६ भूयो मा १०५ विं—

२३. शतिकयैते[१०] अथान्याश्चतुर्विंशतिकया

२४. — — यच्चके — — — अत्र विंशतिमानिका

२५. — — मासवद — —शेषा[११] (शेपः)
श्रृङ्खलिकपा

२६. — —मा — — — वाराहस्वामी प्रभृतिभिः

२७. — — — —योक्तव्या पालनयोज्यं देश

२८. — — — — — कि — न स्तंभलिखित[१२]

(अन्तिम दो पंक्तियाँ अस्पष्ट हैं)

सम्यक् ज्ञानादि से युक्त, सकल गुण-समुदाय को क्षोभित करने वाला (त्रिगुणात्मक होकर भी त्रिगुणों में विकार उत्पन्न करने वाला) प्रधान प्रकृति ब्रह्म एवं आदि से अन्त तक जड़ चेतनमय इस सम्पूर्ण जगत् को विश्वरूप (विविध रूपों) में बनाने वाला, जो एक रूप होता हुआ भी मनुष्यों की आजीविका के लिये पर्वत, वृक्ष और घने जंगलादि सृजित करता है, वह

---

५. Bh. I. धर्म

६. Bh. I. — — — — —सोमखड्डुकान्

७. Bh. I. भू ⌒ [?)

८. Bh. I. सामाप्रो

९. Bh. I. प्रेङ्

१०. Bh. I. वि — — —कयैते

११. Bh. I. — — — — — शेषाः

१२. Bh. I. पंक्ति २७-२८ निषेध

Inscription LIX.
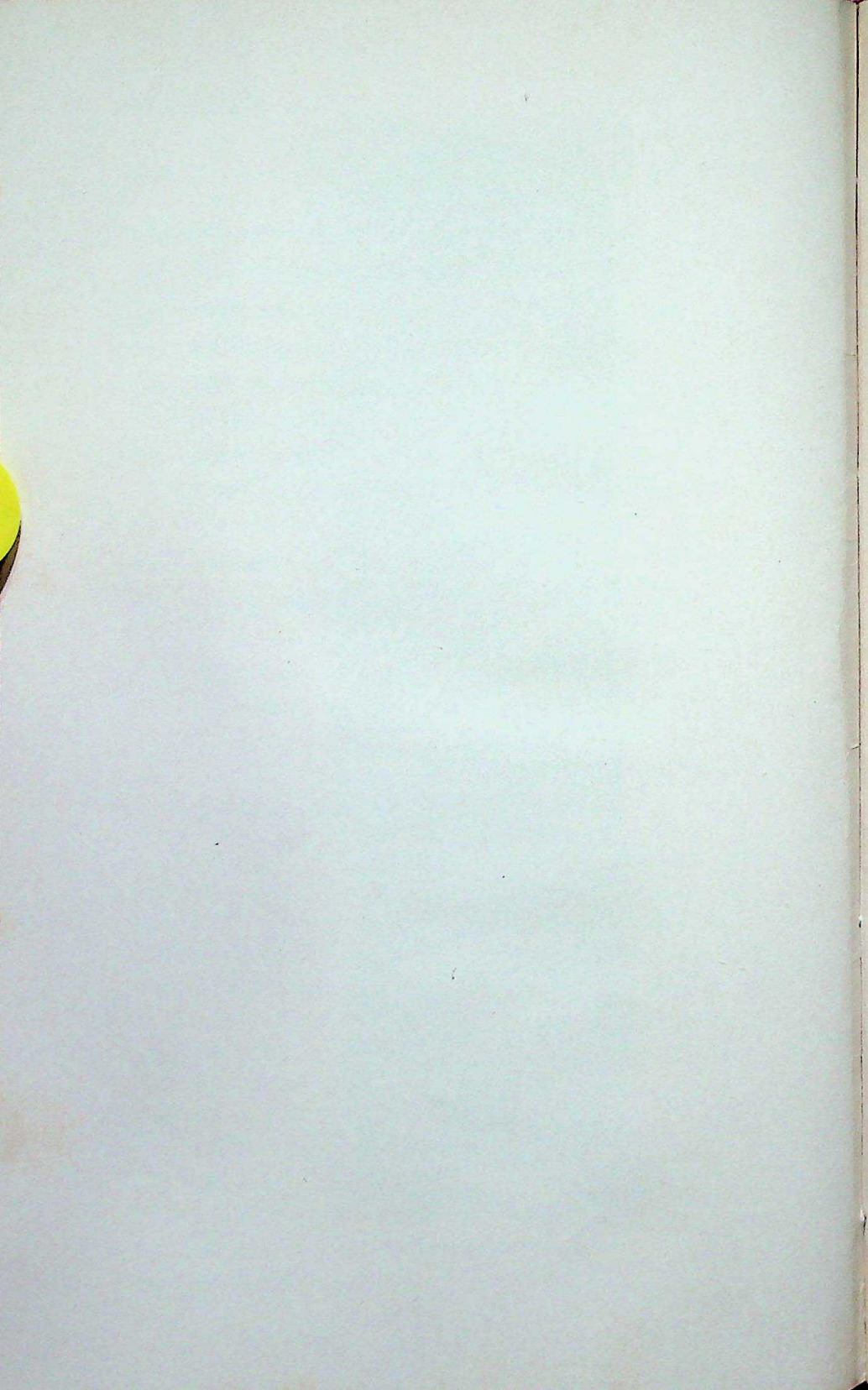
ग्राज कामदेव के शरीर को जलाने वाला प्रसन्न चन्द्रशेखर (शङ्कर) यहाँ ग्राप सबकी रक्षा करें।

सबका कल्याण हो। श्रीजिष्णुगुप्त के संर्वधित विजय राज्य में ग्राचार्य भगवत् प्रमर्द्दन प्राणकौशिक ने वाराहस्वामिन्, धर्मसोम, छत्रसोम को मुण्डशृङ्खलिख पशुपताचार्य की परिषद् (धर्मसङ्घ) में छत्र चन्द्रेश्वर के स्थल एवं जल-प्रणाली के टूटे हुए खण्ड को पुनः निर्मित करने के उद्देश्य से ८० पिण्डक मान की भूमि दी गई। उन प्रदेशों को लिखा जाता है। पिखू ग्राम में १० मास, षाफना (खाफना) दूलक में २० मास, पागुमक में ५ मास, पो ग्राम में २ मास, खूलप्रिङ्गग्राम में ६ मास, ग्रौर ग्रागे १५ मास ये २० मानक — — — ग्रौर दूसरे ४० के द्वारा — — — यहाँ २० मानक — — — मासवद — — शृङ्खलिका पशुपताचार्य की परिषद तथा वाराह-स्वामिन् के साथ क्रमशः जुड़ी हुई जाननी चाहिये तथा ग्रादेश का पालन होना चाहिये (ग्रर्थात् शृङ्खलिक पशुपताचार्य का धर्मसङ्घ एवं वराहस्वामिन् क्रमिक रूप से वर्णित किये गये क्षेत्रों का प्रयोग कर सकते हैं।) स्तम्भ पर लिख दिया गया है।

LX

कामदेवमूर्ति अभिलेख

लगभग सन् ६५० ई०

लगभग ४० सें० मी० भाग में अभिलिखित यह लेख पशुपति मन्दिर के दक्षिण-पूर्वी कोने में कामदेव की मूर्ति की आधार शिला पर उत्कीर्णत है। संवत् की तिथि लुप्त प्राय है।

१a. **ओम् सम्यग्**[1] **धर्मपदानुरक्तपरम्** — — ⏑ — — — ⏑ —

१b. **आचार्यो भगवत् प्रनर्दन इह श्रद्धान्वितोऽचीकरत्** (।)

२a. **कृत्वा पाणि** ⏑ **नु** ⏑ — **इ** ⏑ ⏑ —

श्रीजिष्णुगुप्ते महीम्

२b. — — — **वरणम् सुरासुरगुरोः संसारपाशच्छिदः** (॥)

ओ३म् सम्यक् रूप से धर्म-पद में अनुरक्त, परम शिव भक्त आचार्य भगवत् प्रनर्द्दन ने यहाँ श्रद्धापूर्वक उस शम्भु की वाह्य बाड़ को सुरक्षित रखने वाले जल-कूप का निर्माण कराया जो सुरों और असुरों के गुरु हैं तथा भव-बन्धन का छेदन करने वाले हैं इस समय श्री जिष्णुगुप्त पृथ्वी का पालन एवं रक्षा करते हुए शासन कर रहे हैं।

---

१. शार्दूलविक्रीडित

LXI

लागनटोलेकरदण्डमुक्ति-शिलालेख

संवत् ६४ (६४+५८८=६५२ई०)

लगभग ४३ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख येंगाहिठि जलप्रवाहिका। लागनटोले काठमाण्डू में स्थित है। शिलालेख का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों से सुसज्जित है।

१. ओ३म् अनन्तनागाधिपभोगभासुरे[1] जलाशये शान्ततमं मनोहरम् (।)
२. मुरारिरूपम् यदशेत देहिनां शिवाय तद् वो विदधातु मङ्गलम् ॥
३. स्वस्ति मानगृहात् सकलजननिरुपद्रवोपायसंविधानैक-
४. चित्तसन्तानो लिच्छविकुलकेतुर्भट्टारकमहाराजश्रीभीमार्जुन
५. देवः तत्सहितः श्रीमत् कैलासकूटभवनात् अपरिमिताभिमत-
६. नृपतिगुणकलापाविष्कृतमूर्तिः अनवगीतावदातज्ञान[2]मयू-
७. खापसरितसकलरिपुतिमिरसञ्चयो भगवत् पशुपतिभट्टार-
८. कपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्री विष्णुगुप्तः कुशली भवि-
९. ष्यतो नेपालीभूभुजो यथार्थम् प्रतिमान्यानुदर्शयति विदितम-
१०. स्तु भवतां सकलजगदवसानोदयैककारणस्योदारतरम-
११. हिमावाप्तिनिधानभूतस्य भगवतो विष्णोर्जल शयनरूप नि-
१२. ष्पादन—
योग्यबृहच्छिलाकर्षणव्यापारपरितुष्टैरस्माभिर्दक्षिणको-
१३. लीग्रामस्य पूर्वमेव हङ्गचतुर्भागत्वेन प्रविभक्तस्यैतत्सीमनिवा-
१४. सिनां पदककेयूरनूपुरान् वर्जयित्वान्यैः प्रसादाभरणपरिभो-
१५. गैः प्रसादः कृतो येषाञ्चैतत्स्थाननिवासिनां प्रसादाभरणानि पूर्व-

---

१. वंशस्थ छन्द

ख समान्त्यानुप्रासालङ्कार

ग 'अनन्तनागाधिप' तथा 'मुरारिरूप' शब्दों के साभिप्राय प्रयुक्त होने से परिकर।

२. रूपकालङ्कार

१६. प्रभृत्यैव विद्यमानानि तेषां अयमधिकोऽस्मत्प्रसादो ये वा पुनरे—

१७. तद्दङ्गचतुर्भागसीमाभ्यन्तरर्वातनश्चौरपरदारहत्या राजद्रोहका—

१८. पराधान् अवाप्नुयुस्तेषां एवामुनापराधेन दोषवतां यदात्मीय—

१९. मेव गृहक्षेत्रगोधनादि द्रव्य [मृ त] देव —राजकुल — — — —ए

२०. षाभिशस्तानाम् ये दायादास्तेभ्यो — — — — न्यायेनऽयमपि — — त्वक्र—

२१. ष्टव्यमित्येष च भवत — — — — — — — — समत्कृतप्रसादोप- [कारा]—

२२. र्थो भविष्यद्भिः अपि भूप [तिभिः] — — — — — — — स्वकृतर्निर्विशिष्ट [तया]

२३. मन्यमानै — जै — नुपालनीय — — — — — — — र् अपि — — स्तैरपि नै—

२४. म् अल्पापि [बाधा] विधेया यदि पुनरेतदाज्ञा . — — —नान्यथा प्र [र्वात्त]—ष्यन्ते नि [तरामे] व तेन मर्षयितव्या

२५. इति प्रति [पालना] संवत् ६०४

२६. फाल्गुन शुक्ल द्वितीयायाम् दूतकश्चात्र श्री युवराजश्रीधरगुप्तः

ओ३म् अनन्त शेषनाग के शरी र से शोभायमान जलाशय में जो (विष्णु) शान्त और मनोहर हैं, मुरारी रूप श्री विष्णु भगवान प्राणियों के कल्याण के लिये जिस (शेषनाग) पर शयन करते हैं, वे सबका मङ्गल (कल्याण) करें।

मानगृह से सबका कल्याण हो, समस्त प्रजा के दुःखों के समाधानार्थ उपायों में एक चित्त (तल्लीन) होने वाले, लिच्छवि कुल की पताका भट्टारक महाराज श्रीभीमार्जुन देव और उनके साथ श्रीमत् कैलासकूट भवन से असीमित रूप से प्रिय लगने वाले (लोकप्रिय) राजकीय गुण-पुञ्ज की साक्षात् आविष्कृत मूर्ति, निर्दोष एवं निर्मल ज्ञान की किरणों से एकत्रित होने वाले सम्पूर्ण शत्रुमण्डल रूपी अन्धकार को विदीर्ण करने वाले, भभवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा पात्र एवं वप्प के चरणों का ध्यान करने वाले, नेपाली का मान्य भावी राजा विष्णुगुप्त यथार्थ अथवा तथ्य को कुशलतापूर्वक सूचित करते हैं कि—"आप सबको विदित हो कि सम्पूर्ण जगत् के लय तथा सृष्टि के कारण तथा उदारता एवं महानता के निधान भगवान विष्णु की जल-शयन मूर्ति के निष्पादन के योग्य विशालकाय प्रस्तर-शिला पर आपके द्वारा उसे (जल-शयन विष्णुमूर्ति) गढ़े जाने के कार्य से हम पूर्णरूप से सन्तुष्ट होकर

हमने दक्षिण कोलि गाँव के निश्चित क्षेत्र में कुछ विशेष कृपाएँ की हैं। दक्षिण कोलि ग्राम के पूर्व में ही चार भागों में विभक्त दङ्ग की सीमा में रहने वाले लोगों पर पदक, केयूर, तथा नूपुरों को छोड़ कर अन्य कृपा रूपी आभूषणों के द्वारा कृपा की गई। जिस राजकीय कृपा के द्वारा यहाँ के निवासियों को पहले से ही आभूषण पहनने का अधिकार दिया गया है उनको कुछ और अधिक प्रसादित किया गया है।

चार भागों में विभक्त दङ्ग की सीमा के अन्तर्गत रहने वाला जो व्यक्ति चोरी, परदारहत्या, राजद्रोह आदि अपराधों को करता है तो उसे पैतृक सम्पत्ति के साथ न्यायानुसार राजकुल को सौंप दिया जायेगा। किन्तु अपराधी को अन्याय का भाजन भी नहीं बनने दिया जाना चाहिये। यह और आपका — — — — हमारी कृपा परोपकार के लिये है। भावी राजागण हमारे द्वारा बनाये गये विशेष नियमों का पालन करेंगे। यदि कोई इस आज्ञा के पालन में अल्प बाधा भी पहुंचायेगा अथवा आज्ञा के विपरीत करेगा तो निश्चय ही सहन नहीं किया जायेगा। यह पालन होना चाहिये। संवत् ६४ फाल्गुन शुक्ल द्वितीया। यहाँ दूतक हैं श्री युवराज श्रीधर गुप्त।

LXII

भृङ्गरेश्वर आज्ञा शिलालेख

संवत् ६५ (६५+५८८=६५३ ई०)

लगभग ४२ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख सोनागूठी ग्राम के मृङ्गरेश्वर नामक मन्दिर के पश्चिमी द्वार के दाहिनी ओर स्थित है।

शिला का ऊपरी भाग (Floral Motif)से सुसज्जित है।

१. — [1]— प्रभावगुणविस्तर — — — — — — — — —
— — — न्दसुरा सुराणान् (।)

२. — — — — भुजगभोगवर — — — — — — — —
— — दिव्य सुखानि नित्यम् ।।

३. स्वस्ति मानगृहाद् अमलिनकुशलविलालोपनतसम्पल् लिच्छविकुलकेतु-
भंट्टार—

४. क महाराज श्री भीमार्जुनदेवस्ततसहितः कैलासकूटभचनादतिमात्र-
वस्तुपरि—

५. स्थापनोत्सवोप — महर्षाभिनम्रश्रीमानचरण — गुणो भगवत् पशु-
पति भट्टा-

६. रक पादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः श्रीविष्णुगुप्तः कुशली भविष्यतो
नेपाल-

७. [भू भु] जो यथार्हम् प्रतिमान्यानुदर्शयति अस्तु वः समधिगतमसुरा-
सुरकसंस्कृतात्य

८. — — — — — — — — — — — — — — — ण समधिरूढ़-
प्रसादवेगैरस्माभिराश्चर्यभूत-

९. — — — — . —[रू]पनिष्पादनयोग्यशीलाकर्षणम् प्रतिनियुक्तै-
र्नृङ्मरिग्रामपाञ्चा-

१०. [लिक) — — — — — — — — — — — परयातुष्ट्याकशष्ठी-

---

१. वसन्ततिलका छन्द

विष्टिभारनयनप्रति — —

११. — — — — — — — — — — — — —म् अप्रवेशेन प्रसादः कृतो माप्चोक वस्तुना य

१२. — — — — — — — — — — द् यस्ततो — — — — — — — व प्रवि — — — — — — — या — गृ

१३. — — व्य — न्य — — विचारणाय — — धिकरण — — — — मान्न — — — — क्ता

१४. — मृ अन्तरेण सर्वकार्याणामेवास्मरणमित्य — — — — दत्त- श्चौरपरदारह—

१५. त्या राजद्रोहकापराधांश्च — — वतो ये — वि — ङ्गरग् — प्रणाली प्रतिबद्धगृहक्षेत्र

१६. — — दि — — द्रव्येणैव — जायितव्य — — — देभ्यो नात्रापहारः कर्त्तव्य इत्ययं—

१७. [वः] प्रसादो दत्त एवं वेदिभिरेतेष्व धिकारेष्वधिकृतैर्नैषाम् अल्पापि बाधा विधे [या]

१८. — — — र् एतदाज्ञासमतिक्रमेण प्रवर्तिष्यन्ते तान् वयन्न मर्षयि- ष्यामो येऽपि मद्—

१९. र्ध्वम् भूपा भविष्यन्ति तैरप्येते धर्माधिकारोपयोगपरितोषकृताः प्रसाद- विशे—

२०. षाः स्वकृता इव मन्यमानैरस्माभिर्यथानुपालयन्ते तथैवानुपालनीया इति प्रति

२१. पालना संवत् ६०५ फाल्गुन शुक्ल द्वितीयायाम् श्री युवराज श्रीधर गुप्तः

जल के मध्य शेष नाग की शैया पर शयन करने वाले मनुज, देव, दानवों, एवं धर्मशास्त्रों के लिये ज्ञानातीत भगवान विष्णु आप सब पर दैवी सुखों का वर्षण करें।

मानगृह से सबका कल्याण हो, हृदय से निर्मल, कार्यकुशल तथा विपुल सम्पत्ति को प्राप्त, लिच्छवि कुल की पताका भट्टारक महाराज श्री भीमार्जुन देव तथा उनके साथ कैलासकूट भवन से पूर्णरूप से वस्तु स्थापना अर्थात् नियम-स्थापना (शासन) के उत्सव से उत्पन्न हर्ष से अभिनम्र, श्रीमान् के चरण-गुणों वाला, भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपापात्र, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाला, नेपाल का होने वाला राजा कुशलतापूर्वक यथा-योग्य मान्यता को प्रकट करता है, इसलिये आप उससे अवगत हों।

सुरासुरों के पूज्य शेषशायी भगवान् विष्णु की मूर्ति को आश्चर्यजनक शिला पर उत्कीर्ण करने हेतु हमारे द्वारा नियुक्त शिल्पियों द्वारा पूर्ण किये गये कार्य से प्रसन्न होकर हम नृङ्मरि ग्राम के पाञ्चालिकों को कशपठी नामक विष्टि भार (बेगार में किया गया श्रम) से मुक्त करते हैं — — ग्राम में प्रवेश-निषेध करने के द्वारा कृपा की गई, माप्चोक वस्तु के द्वारा — — विचार के लिये — — अधिकरण — — इसके पश्चात् सभी कार्यों का ही स्मरण — — — जो व्यक्ति दङ्ग के क्षेत्र में रहता हुआ चोरी, परदारहत्या, राजद्रोह आदि अपराध करता है तो उस व्यक्ति से सम्बन्धित (प्रतिबद्ध) घर, क्षेत्र, द्रव्य (सम्पत्ति) आदि पाञ्चालिकों के अधिकार-क्षेत्र में दे दी जायेगी, किन्तु उस अपराधी व्यक्ति के परिवार के अन्य सदस्य की सम्पत्ति का यहाँ अपहरण नहीं किया जाना चाहिये, इस प्रकार का आदेश देकर कृपा की गई। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, इस आज्ञा के पालन में अल्प बाधा भी नहीं पहुंचनी चाहिये। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेंगे उनको हम सहन नहीं करेंगे। जो भी मेरे पश्चात् होने वाले राजागण हैं वे इस उपयोगी एवं तोषक धर्माधिकार का अपने ही द्वारा बनाए गये 'प्रसाद विशेष' जैसा समझकर, हमारी तरह पालन करेंगे। इस प्रकार का आदेश पालनीय है : संवत् ६५ फाल्गुन शुक्ल द्वितीया, यहाँ दूतक हैं श्री युवराज श्रीधरगुप्त।

PLATE LXII

Inscription LXIII

LXIII

कूपजलद्रवणिक निर्माण शिलालेख

लगभग २३ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख संकट नामक मन्दिर के पीछ दाहिनी ओर जल की टंकी को आश्रय देने वाली शिला के ऊपर उत्कीर्णित है। लिपि एवं शैली की दृष्टि से यह पुरालेख अंशुवर्मा तथा नरेन्द्रदेव के मध्य के समय का प्रतीत होता है।

१a. —[1] रत्नत्रयस् भगवदार्य्यमुदा रवर्ण्ण-
१b. मुद्दिश्य सत्वपरिभोगनिमित्तम् एतौ (।)
२a. कूपञ्जलद्रवणिकञ्च शुभाय पित्रोः
२b शाक्यो यतिर्विहितवान् प्रियपालनामा (।।)

सत्य, अहिंसा, प्रेम रूपी त्रिरत्नों के अधिकारी, उदार भगवान आर्य (महात्मा बुद्ध) के वर वचनों को ध्यान में रखकर, जीवों के उपभोग के लिये तथा अपने पिता के शुभ के लिये प्रियपाल नामक शाक्य यति ने एक कुंआ तथा एक जल-द्रवणी को वनवाया।

---

१. वसन्ततिलका

LXIV

करुणाचौक शिलालेख

पाटन के निकट यम्पीबही में करुणाचौक के चबूतरे की एक सीढ़ी-शिला में उत्कीर्णित है । अभिलिखित शिला का भाग लगभग ४० सैं० मी० चौड़ा है ।

१. ओ३म् महाप्रतिहारवार्तसुजात (सजात) प्रभुविहारस्य (।।)

ओ३म् महाप्रतिहार वार्त्त वंश सुजात प्रभु के विहार का ।।

PLATE LXIII
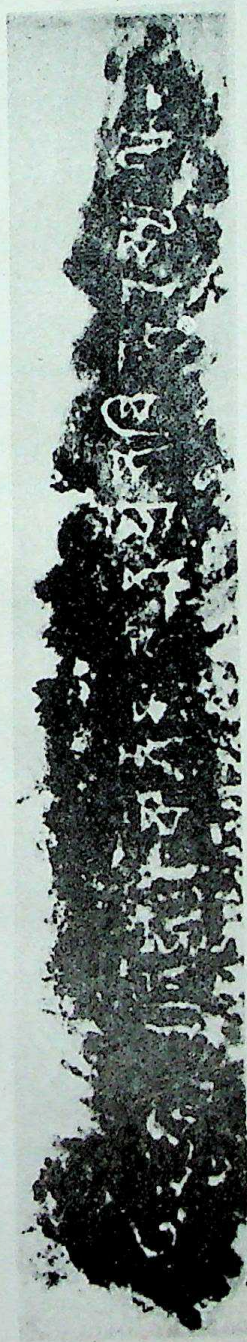
Inscription LXIV.

LXV
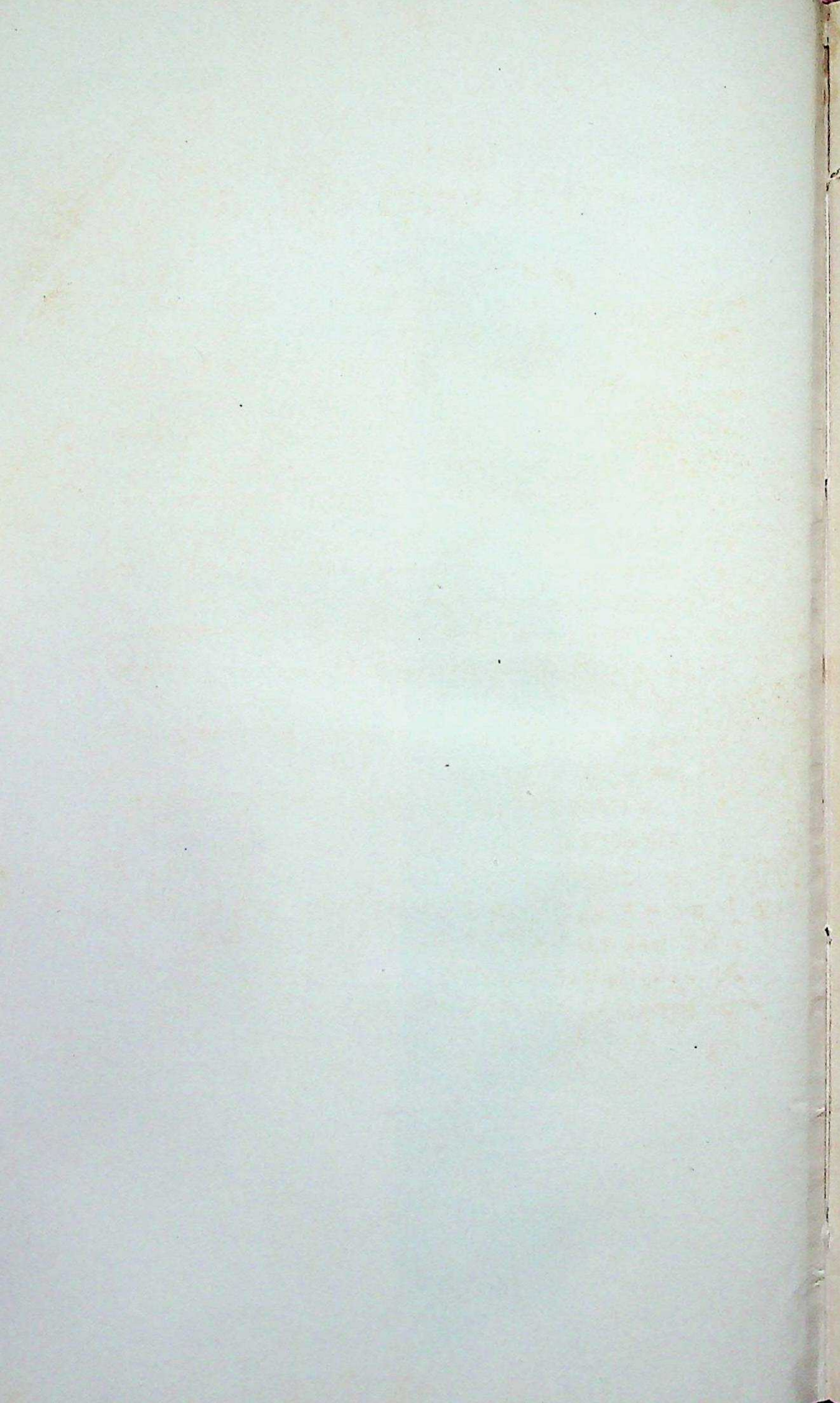
देवपाटन पहाड़ी शिलालेख

संवत् ६९

यह शिलालेख पशुपति-मन्दिर के निकट देवपाटन की पहाड़ियों के मध्य एक शिवलिङ्ग की आधार-शिला के रूप में स्थित है। शिला का उत्कीर्णित भाग लगभग ७५ सें० मी० चौड़ा है। शिलालेख के वर्ण व्यवस्थित रूप में उत्कीर्णित नहीं हैं। संस्कृत भाषा भी व्याकरण की दृष्टि से अत्यधिक अशुद्ध है।

१. **संवत् ६०३ ज्येष्ठकृष्णदिवा सप्तम्यां परमभट्टारक श्रीनरेन्द्रदेवस्य-स्साग्रं वर्षशतम् समाज्ञापयतः चुहुङ्ग्रामे ज्याय — —**

२. **कुटुम्बिग्रामग्रामस्य दक्षिणतस्तिलमकस्य च दक्षिणपूर्वतः क्षेत्र — — शालङ्कास्तस्य प्रसादाधिशासनस्य पट्टसुवर्ण**

३. **गोमिन्याः २ प्रत्ययम् महाबलाध्यक्ष — रा — — लेख्य — राम-स्वामिना दूतकेन दानपाशुपताचार्य्य दक्षिणतिलडुकस्य**

४. **— मिदानश्रृङ्कलिकपाशुपतानां ग्लाननैः सस्यारिदत्तवर्षकस्तत्रैव — इ — — — — — — म् पि — — — विंशतिकया धान्यमा —**

५. **ण्डा ४ प्रत्ययस्य करणीया — धान्यकूडा १ शिच्छिजानामिल् गति-बल — हि — गुप्त .**

६. **. इव निवासिन चन्दनस्य सर्वसाक्षिको ज्येयचुहं ग्रामेनियुक्तश्च धन-वृद्धिसहितेन ॥**

संवत् ६९ ज्येष्ठकृष्ण सप्तमी का दिन, परम भट्टारक श्री नरेन्द्र देव की, आगे के १०० वर्षों तक के लिये यह सूचना प्रकाशित की गई है। नरप्रिङ् नामक ग्राम के दक्षिण में एक नहर है, नहर के दक्षिण-पूर्व में एक क्षेत्र — — विश्वसेन ब्राह्मण की पत्नी शालङ्का निवासी स्वर्णगोमि ने मुख्य सेनाध्यक्ष के उपहार-साधन स्वरूप दक्षिण तिलडुक की भूमि को दान-पाशुपताचार्य एवं श्रृङ्कलिक पाशुपतों के सम्मुख दूतक रामा स्वामी की साक्षिता में अभिलिखित कराया। अरिदत्त वर्षक ने अन्न को वहीं पर — — — २० धान्यमाण्डा तथा ४ प्रत्यय का किया जाना चाहिये — — धान्यकूडा १ शिच्छिजानामिल — गतिबल — गुप्त और इशरिका, चन्द्रमा के समान चन्दन नामक ग्राम के निवासी आमात्य भगव को सर्व साक्षिन् के रूप में ज्येयचुहुं नामक ग्राम में धनवृद्धि और कल्याणवृद्धि के लिये नियुक्त किया है।

LXVI

येंगाहिटि लागनटोले अग्रहारशिलालेख

संवत् ६९ (सन् ६९+५८८=६५७ ई०)

यह शिलालेख येंगाहिटि की जलप्रवाहिका लागनटोले, काठमाण्डू में स्थित है। शिलालेख का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों से सुशोभित है।

१ ओ३म् स्वस्ति कैलासकूटभवनाच्छरदाप्यानशशाङ्कामलमयूखनिकरा-
वभाष्यमानहिमव—

२. दुत्तुङ्गशिखरावदातयशोमालावतंसिताशेषदिङ्मण्डलो य एष शौर्य्य-
न्नीतिगुणैर्गुणै-

३. राकलितैरात्मानमुद्भासिभिः शक्त्या बाहुबलं मतिं स्मृतिमतीं शास्त्रा-
गमैर्भूरिभिः (।)
मर्य्यादाः स्थि-

४. तिर्भिदिशोऽपि यशसा राज्यश्रिया मेदिनीर्जात्या लिच्छविराजवंशमनघं
योऽलङ्करोत्युच्चकैः (।।)

५. भगवत्पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातो भट्टारकमहा-
राजाधिरा-

६. ज श्रीनरेन्द्रदेवः कुशली भविष्यतो नेपाल राज्ञस् सम्यक् प्रतिमान्या-
नुदर्शयति विदितम्

७. अस्तु भवतां यथा दक्षिणकोलीग्रामट्टङ्गस्य सर्वतलग्रामैः सहितस्य
पूर्वराजभिर्भनिश्व-

८. रे [भु]वनेश्वर देवकुलं यथाकल्पिताग्रहारादिप्रत्यायम् पालनोपभोगाय
प्रति[पा]दितं

९. केनापि च हेतुना श्रीभूमगुप्तेनाक्षिप्तं राजतलभोग्यमभूत् तदिदम्
अधुना पूर्वमर्य्यादा—

१०. स्थितिप्रवर्तनाहृतमनोभिरस्माभिः — इ — प्रजानां श्रेयसेऽस्यैव
सर्वतलग्रामसहि—

११. तस्य दक्षिणकोलीग्रामद्रङ्गस्य तदैव भुवनेश्वरदेवकुलं यत्र तत्रा-
वस्थितक्षेत्रवा-
१२. ट्टिकागृहधण्याकारैर्य्यथा पूर्वंभुज्यमानसीमभिस् त्रिभिः कोङ्को
बिल्वमार्ग हुस्प्रिनुदुङ्ग्रामैरेभि-
१३. रग्रहारत्वेनोत्सृष्टैश्चाटभटाप्रवेश्यैः सर्वकोट्टमर्य्यादास्थितिमद्भिश्च
सहितं प्रतिमुक्त-
१४. म् इत्येवञ्च विदितार्थैरप्येतदग्रहारत्रयनिवासिभिर्यथाकल्पितम् पिण्ड-
कादिप्रत्यायम—
१५. स्योपनयद्भिरकुतोभयैराज्ञाश्रवणविधेयैर्भवितव्यम् भूयोऽप्यनेवैवन्यायेन
सीताट्यां
१६. शिवगल्देव [कुले] यथापूर्वकल्पितक्षेत्रपिण्डकादिप्रत्यायम् पालनोप
भोगायैव सर्वत—
१७. ल[ग्रा]म सहितस्यैवास्य द्रङ्गस्य [प्र]ति [मु]क्तमेवं विदितार्थैर्न हीना-
नवमन्यमानैरन्योन्य—
१८. प्रीतिदृढ़ीकृतस्नेहानुग्रहैर् . — नु — — — — — — — पुरुषैस्त
— — — — — —त्रयमेव प्रतिपा—
१९. पालयद्भिः (प्रतिपालयद्भि) सततं श्रस्म — — — वर्तितव्यन्न
कैश्चिदस्मत्पादोपजीविभिरन्यैर्वा स्वल्पा—
२०. पि पीडा कार्य्या यस्त्वेतामाज्ञामुल्लङ्घ्यान्यथा कुर्य्यात् कारयेद् वा तस्य
वा तस्य वयं राजशासनव्यतिक्रम—
२१. कारिणस्तीव्रं म् दण्डम् पातयिष्यामो भाविभिरपि भूपतिभिरिह याशः—
कल्याणायुरारोग्यराज्य—
२२. श्रियाम् वृण्निम् (वृद्धिम्) ईहमानैरमुत्र च स्वर्गे शाश्वतीम् स्थिति-
मिच्छद्भिः पूर्वराजकृतेषु प्रसादेषु पा—
२३. लनादृतैर्भाव्यञ्चिरस्थितये चास्य प्रसादस्य शिलापट्टक [शासनेन
प्रसादः] कृत इति
२४. समाज्ञापना दूतकश्चात्र कुमारामात्यप्रियजीवः संवत् ६०९ भाद्रपद-
शुक्लद्वितीयायाम् ॥

कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। शारदीय चन्द्रमा की विमल किरणों के पुञ्ज के समान, हिमालय की उत्तुङ्ग शुभ्र शिखर के समान जिसकी उदात्त यशोमाला सम्पूर्ण दिङ्मण्डल को प्रकाशमान करती है, वह

राजा शौर्य, गुण एवं नीति से युक्त है तथा स्वयं को उनसे उद्भासित करता है। वह शक्ति, बाहुबल, सुमति, स्मृति एवं शास्त्रागमों से सम्पन्न है। वह उच्च मर्यादा-स्थिति एवं उच्च यश द्वारा दिशाओं को, उच्च राज्यश्री (राजकीय वैभव) के द्वारा पृथ्वी को, एवं उच्च जाति से निष्पाप लिच्छवि राजवंश को अलङ्कृत करता है।

भगवन् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त; वप्प के चरणों का ध्यान करने वाले भट्टारक महाराजाधिराज श्रीनरेन्द्रदेव कुशलतापूर्वक नेपाल के भावी राजाओं के लिये सम्यक् रूप से आदर प्रदर्शित करते हुए सूचित करते हैं कि आप सबको विदित हो कि (नेपाल का होने वाला राजा सम्यक् रूप से विचार करके यह सूचित करते हैं कि) पूर्ववर्ती राजाओं ने मानेश्वर तथा भुवनेश्वर मन्दिरों के पालन तथा उपभोग के लिये सर्वतलग्रामों के साथ ह्ङ्ग के दक्षिणकोलिग्राम को अग्रसर के रूप में भेंट किया। किसी कारण से श्री भूमगुप्त के द्वारा यह गृहीत होकर राज-शासन का उपभोग्य हो गया था। अब पूर्व मर्यादा स्थिति को पुनः चलाने की दृष्टि से और आदरपूर्ण मन से — — — प्रजा के कल्याण के लिये सर्वतलग्राम सहित दक्षिणकोलिग्राम और ह्ङ्ग का वही भुवनेश्वर मन्दिर जहाँ पर स्थित था वहीं पर अवस्थित वाटिका गृह एवं धान्यागारों के द्वारा जैसे वह भुज्यमान था और जो कोङ्को, बिल्लमार्ग तथा हुस्प्रिन् दुङ्ग्राम इन तीनों की सीमाओं से परिवृत्त था उसे हमने अग्रहार बना दिया है और उसे "सर्वकोट्टमर्यादा-स्थिति" के साथ चाट और भटों के प्रवेश से मुक्त कर दिया है। इस प्रकार विदित उद्देश्य के लिये इन तीनों अग्रहारों के निवासियों को यथायोग्य निश्चित किया गया पिण्डकादि (उपज का भाग) के रूप में कर सतत रूप से देना चाहिये। आदेशों को सुनकर राजा के द्वारा सुनाये गये विधान के अनुसार उन्हें अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए निडरतापूर्वक रहना चाहिये। सीताटी तथा शिवगल्देव कुल (शिवमन्दिर) में रहने वाले अन्य भोक्तागण भी इसी न्याय के अनुसार सर्वतलग्राम सहित ह्ङ्ग के पालन, उपभोग एवं प्रतिमुक्ति के लिये पूर्व निश्चित भूमि, पिण्डकादि कर के रूप में प्रदान करते रहेंगे। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, दीन से दीन व्यक्ति के द्वारा भी, अन्यों के द्वारा, प्रीति दृढ़ स्नेह एवं अनुग्रह के साथ पुरुषों के द्वारा तीनों अग्रहरों का लगातार पालन-पोषण किया जाना चाहिये। हमारे चरणो-

पजीवियों के द्वारा अथवा अन्यों के द्वारा थोड़ी सी भी पीड़ा नहीं दी जानी चाहिये ।

जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा हम उस राजशासन (राजाज्ञा) का अतिक्रमण करने वाले को शीघ्र ही दण्ड देंगे । भावी राजागणों के द्वारा, यश, कल्याण, आयु, आरोग्य एवं राज्य श्री की वृद्धि चाहने वालों के द्वारा यहाँ और दूसरे लोक में स्वर्ग और शाश्वत स्थिति को चाहने वालों के द्वारा पूर्वराजदत्त आज्ञा का आदर सहित पालन होना चाहिये । इस कृपा (आज्ञा) की चिरस्थिति के लिये इस शिलापट्टक शासन पर लिखकर कृपा की गई । यह सूचना है । यहाँ दूतक हैं कुमारामात्य प्रियजीव । संवत् ६६ भाद्रपदशुक्ल द्वितीया ।

LXVII

लुञ्झ्याधिकार कर-सीमा निर्धारण शिलालेख

संवत् ६९ (सन् ६९ + ५८८ = ६५७ ई०)

यह ३३ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख लुञ्झ्या का चबूतरा, प्राचीन पाटन-दरबार, मङ्गल बाजार, पाटन में स्थित है। शिलालेख का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों की आकृतियों से सुसज्जित है।

१. ओ३म् स्वस्ति [1]कैलाशकूटभवनात् भुवनप्रकाशाज्ज्योत्स्नावमृष्ट-हिमवच्छिखराग्रदीप्तेः (।)

२. आसागरप्रसृतशुभ्रयशोध्वजानां राज्ञाङ्कुलाम्बर—

३. शशी भुवि लिच्छवीनाम् ॥

४. [2]वल्गद्वीरपदातिकुन्तविशिखप्रोताश्वनागाकुलेशक्त्यान्त्यास्पृहणीयया रणमुखे संज्ञाविशेषान् द्विषः (।)

५. कृत्वा लोकहितोद्यमप्रभवया कीर्त्या दिशोभासय न्नन्योन्याविहितान् प्रजासु विदधद्धर्मार्थकामान् मुदा (॥)

६. भगवत्पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातो भट्टारक—

७. महाराजाधिराज श्री नरेन्द्रदेवः कुशली इहत्यान् भूमिभुजो वर्तमानान्

८. भविष्यतश्च प्रतिमान्यानुदर्शयति विदितं अस्तु भवतां कस्मिश्चिद्द वस्तुन्युप-

९. कृतमवेत्य तत्प्रत्युपकारोत्कण्ठितमतिभिरस्माभिर्यूप ग्रामट्टङ्गस्य सर्वतल-सहितस्य

१०. भट्टमाप्चोकाधिकारयोः प्रा[बा]ल्यादवश्यम् जनस्य महती

११. पीडेत्यनयोरेवाधिकारयोरप्रवेशेन प्रसादः कृतस्तदेवम् विदितार्थै—

१२. रेतधिकारद्वयाधिकृतैरन्यैर्वास्मत्पादप्रतिबद्ध[जी] वनैरल्पापि बाधा न

---

१. वसन्ततिलका

२. परम्परित रूपक

PLATE LXVII
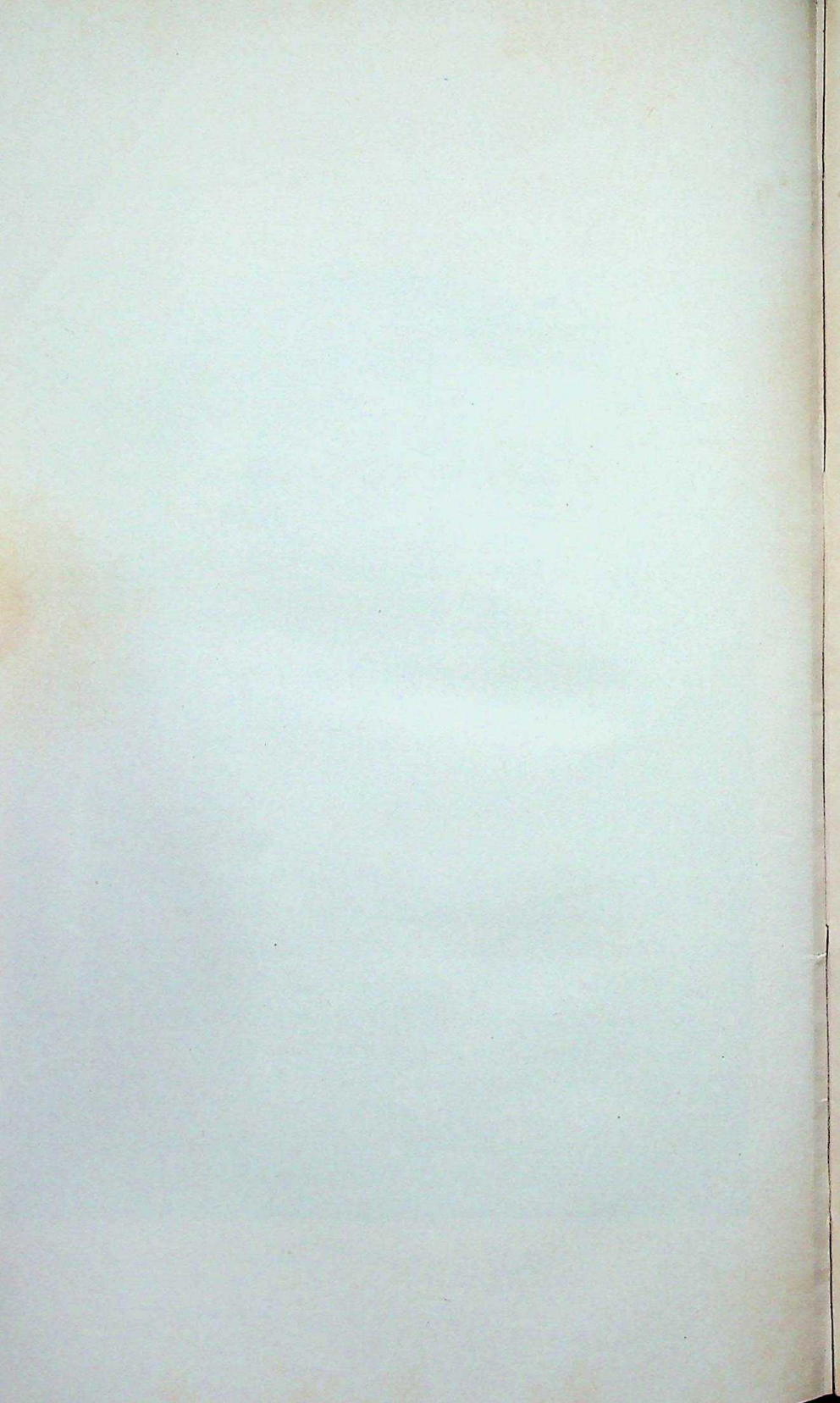
१३. कार्या यस्त्वेतामाज्ञामनादृत्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा तस्यावश्यमस्म-
त्तस् तीव्रतरो

१४. दण्डः पतिष्यत्यस्मदूर्ध्वम् भविष्यद्भिरपि भूपतिभिस्सुकृतः [कर]णैक-
साधनः

१५. पूजितां प्रतिजन्म राज्यश्रियमनुबुभूषद्भिरिह कीर्त्यायुरारोग्यकल्याण-

१६. राज्यश्रीसमुदयमीहमनैः प्रेत्य च शाश्वतं दिप्यम् (दिव्यम्) इच्छद्भिः
सुखमनु—

१७. भवितुम् दिक्षु चाभितः शारदाप्यानोडुराजामलकिरणमालावभास्य-
मानप्रालेयमही —

१८. धरोत्तुङ्गशिखरामलम् यशस्तन्वद्भिराचन्द्रार्कम् स्वप्रतिपादितानाम्
शासनानाम् स्थिति—

१९. भिच्छद्भिपूर्वभूपतिषु सगौरवै र्भूत्वेयमाज्ञा सप्यक् (सम्यक्) प्रति-
पालनीयापि चैतत्

२०. प्रत्युपकृतन्न बहुमन्यमानैरस्माभिः पुनरप्येषाम् पीटाल्जाधिकारम्
प्रतिमुच्य

२१. प्रसादीकृतं एवमर्थम् विदित्वैतदधिकृतैर्न कैश्चित्रदेतद्गता पीडा कर्त्तव्या
यस्तु कु—

२२. र्यात् सोऽस्माभिर्नभूष्यते तथैव भूपतिभिरप्यनुमोदनीयम् चिरस्थितये
चास्य

२३. प्रसादस्य शिलापट्टकशासनेन प्रसादः कृत इति स्वयमाज्ञा (।)
दूतकश्चात्र

२४. [कुमारा] मात्य प्रियजीवः (।)
संवत् ६६ पौष शुक्ल पञ्चम्याम् ।

ओ३म् कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। भुवन को प्रकाशित करने वाली हिम के समान श्वेत ज्योत्स्ना से मण्डित हिमालय के शिखर के अग्रभाग की दीप्ति वाले कैलासकूट भवन से सागर पर्यन्त शुभ्र यशरूपी पताकाएँ पृथ्वी के ऊपर लिच्छवि राजाओं के कुलरूपी अम्बर में शशि के समान सुशोभित हैं।

उछलते हुए एवं आगे बढती हुई वीर पैदल सेनाओं के भालों और तीरों से पिरोए हुए अश्व एवं गजों से परिपूर्ण रणक्षेत्र में सबसे आगे रहने वाले, इच्छित शक्ति के द्वारा रणक्षेत्र में शत्रुओं को नामावशेष करके लोक-हित के उद्यम से उत्पन्न होने वाली कीर्ति से दिशाओं को प्रकाशित करते हुए परस्पर अनाश्रित धर्मार्थ और काम तीन पुरुषार्थों को प्रजा में सहर्ष स्थापित किया।

भगवत पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले भट्टारक महाराजाधिराज श्री नरेन्द्रदेव कुशलतापूर्व इस समय भूमि पर वर्तमान सकल राजाओं को और भावी राजाओं को विचार कर निश्चित करके यह नियम प्रदर्शित करते हैं कि जैसा कि आप सबको विदित हो कि किसी वस्तु में उपकृत होकर उसके प्रत्युपकार के लिये हमने उत्कण्ठित बुद्धि से यूप ग्राम तथा सर्वतल (घाटी) सहित दङ्ग (दुर्ग) के क्षेत्र में निवास करने वाले जनों को भट्ट तथा माप्चोक अधिकरणों के द्वारा बलात् पर्याप्त पीड़ा दिये जाने के कारण, इन दोनों अधिकरणों के अधिकारियों के प्रवेश को इस क्षेत्र में निषिद्ध करने के द्वारा कृपा की है। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, दोनों अधिकरणों के अधिकारियों द्वारा, हमारी चरण-कृपा से आजीविका चलाने वालों के द्वारा आज्ञापालन में थोड़ी सी बाधा नहीं पहुँचानी चाहिये। जो इस आज्ञा का अनादर अथवा अन्यथा करेगा अथवा करायेगा तो हम उसे अवश्य शीघ्र ही दण्ड देंगे। हमारे पश्चात् होने वाले नृपों के द्वारा, पुण्यदायक साधनों का आदर करने वालों के द्वारा, इस संसार में कीर्ति, आयु, आरोग्य, कल्याण, राज्यश्री और उदयाभिलाषी मन वालों के द्वारा और मरने पर शाश्वत दिव्यलोक के अभिलाषियों के द्वारा सुखाभिलाषियों के द्वारा, सभी ओर दिशाओं में शरद् को आप्यायित करने वाली चन्द्रमा की विमल कर-माला को निन्दित कर देने वाले हिमाद्रितुङ्ग शिखर के समान विमल यश को प्रसारित करने वाले, सूर्य-चन्द्रमा की विद्यमानता तक अपने द्वारा प्रतिपादित शासन को स्थिर रखने के अभिलाषियों द्वारा, पूर्व भूपतियों के प्रति गौरवपूर्ण सम्मान रखने वालों के द्वारा इस आज्ञा का सम्यक् पालन होना चाहिये। प्रत्युपकार करते हुए हमने अति सम्मान देते हुए फिर से इन निवासियों को पीटाज्ञाधिकरण के अधिकार से मुक्त करके कृपा की है। इसलिये जानते हुए यहाँ के किसी भी अधिकारो के द्वारा पूर्वनियमानुसार पीड़ा नहीं दी जानी चाहिये। जो ऐसा करेगा वह हमारे द्वारा सहन नहीं किया जायेगा। उसी प्रकार भूपतियों के द्वारा भी, यह अनुमोदित कर दिया जाना चाहिये। इस आज्ञा की चिरस्थिति के लिये शिलापट्ट शासन (लिखित शिलालेख) के द्वारा प्रकाशित किया गया। यह स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक है कुमारामात्य प्रियजीव। संवत् ६९ पौष शुक्ल पञ्चमी।

LXVIII

नारायणमन्दिर भूमि-मर्यादा ताम्रपत्राभिलेख

संवत् ७१ (७१+५८८=६५९ ई०)

लगभग ४४ सें० मी० चौड़ा यह शिलालेख देवपाटन में नारायणमन्दिर पर जाकर समाप्त होने वाली मेंड के सम्मुख स्थित है। इसका ऊपरी भाग एक चक्र की आकृति से अलङ्कृत है। प्रथम दस पंक्तियाँ पूर्णतः मिट गई हैं।

११. — — — — — — — — भगवत् पशुपति भट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानु—

१२. ध्यातः परमभट्टारकमहाराजाधिराज श्री नरेन्द्रदेवः कुशली — — — — —

१३. — — — — — — — — — धिकृत् . — — च — — — — — — — — — — य — — ङ — — — — म — — —

१४. समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां सता — — — ल — — यसायू — इ — —

१५. — — — चचर — — — — — — सु — — तो — स्थितिम् — — प — — — ञ्ङ हततटा

१६. प्र— — — प्रसाद — च स्त . इ — — — र्थम् — वेदिद्भिर्भवद्भिः — — — — — — — धि

१७. — — — — — — — — र समत्प्रसादप्रतिबद्धजीवनैः कैश्चिदपि नवगृहम् प्रविश्या—

१८. ल्पतरापि बाधा न कर्त्तव्या यस्त्विमाम् अविलङ्घनीयां अस्माकीनामाज्ञामना—

१९. दृत्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा तं वयं राजाज्ञाप्रतीपगामिनम्—त्यर्थन्न मर्षयि—

२०. ष्यामो येऽपि चास्मदूर्ध्वम् भूपतयो भवितारस्तैरपि सम्यक् प्रजानु-
पालन — —

२१. तसुचरितमभीष्टानाम् सम्पदाम् कारणम् मन्यमानैरिह कल्याणायु-
रारोग्य-

२२. राज्यश्रियाम् उपचयायामुत्रापि चाभ्युदयाय धर्मगुरुतया पूर्वराजप्र—

२३. सादानुवर्तनम् प्रतिसततम् अवहितमनोभिर्भाव्यञ्चिरकालस्थितये
चास्य

२४. प्रसादस्य शिलापट्टकशासनञ्च प्रसादीकृतमिति स्वयमाज्ञापि च—

२५. — — य — ञ्चि रेहङ्कार्यमुत्पद्यते तच्च स्वयम् पाञ्चालिकै-
र्निर्णेतुम् न शक्य [ते त]—

२६. दा तद् अन्तरासनेन विचारयितव्यं याश्च गोष्ठ्यो नवगृहप्रतिबधास्
त — —

२७. चाटभटानामप्रवेश्या एव या चास्यावस्था ताम्रशासने लिखिता-
भूत् त . — —

२८. — — वस्थया — इका — — निवासिमधुसूदन स्वामी पाञ्चा-
लिकसामान्य इति

२९. [दूत] कश्च दण्डना [य] को नृपदेवः संवत् ७०१ कार्तिकशुक्ल-
द्वितीयायाम्

भगवत् पशुपति भट्टारक के चरणों से अनुगृहीत, बप्पा के चरण का ध्यान करने वाला परम भट्टारक महाराजाधिराज श्री नरेन्द्रदेव कुशलतापूर्वक — — — सूचित करते हैं—आप सब लोगों के द्वारा — — हमारी कृपा पर आश्रित आजीविका वाले — — — — कोई भी नवग्रहों का उल्लङ्घन करके प्रवेश न करें और न रञ्चमात्र भी बाधा पहुंचाए। जो हमारी इस अनुलङ्घनीय आज्ञा का अनादर करके विपरीत कार्य करेगा या करायेगा मैं उस राजाज्ञा के विपरीत करने वाले को सहन नहीं करूँगा। हमारे पश्चात् होने वाले राजागणों के द्वारा भी — — अच्छी प्रकार से प्रजा का पालन करने वालों का सच्चरित्र रूपी सम्पदा को ही कारण मानने वालों के द्वारा, इस लोक में कल्याण, आयु, आरोग्य, राज्यश्री आदि के एकत्रीकरण के लिये और परोक्ष में भी अभ्युदय के लिये धर्मगुरुओं के द्वारा हृदय से माना जाना चाहिये। इस पूर्वराजकृत प्रसादानुवर्तन को

सतत रूप से चिरस्थायी करने के लिये यह शिलापट्टक प्रकाशित किया गया। यह स्वयं की आज्ञा है। यदि कहीं सन्देह उत्पन्न होता है और स्वयं पाञ्चालिक गण निर्णय करने में समर्थ नहीं होते हैं तब अन्तराशन (स्वयं राजा की अन्तरिम समिति) के द्वारा विचार किया जाना चाहिये। और जो गोष्ठी नवग्रह के अधिकार क्षेत्र में प्रतिवद्ध है उसमें चाटभटों के प्रवेश-निषेध की व्यवस्था को ताम्रशासन (ताम्रपत्र) पर लिख दिया गया, इस व्यवस्था का लेखक हैं — — निवासी सामान्य पाञ्चालिक मधुसूदन स्वामी। और यहाँ दूतक हैं दण्डनायक नृपदेव संवत् ७१ कार्तिक शुक्ल द्वितीया।

LXIX

भगवती बहाल उदपान जीर्णोद्धार शिलालेख

संवत् ७८ (७८+५७८=६६६ ई०)

लगभग ४६ सैं० मी० चौड़ा उत्कीर्णित जलप्रवाहिका शिलालेख ज्ञानेश्वर, दिल्ली बाजार के चौराहे के निकट भगवती बहाल मन्दिर के सम्मुख स्थित है।

१a. ओम् शौर्योत्साहपराक्रमाभयनयत्यागप्रतापादिभिः[1]
१b. श्लाघ्यैः स्वामिगुणैरनन्यसुलभैः संस्पर्द्धयेवान्विते (।)
२a. पृथ्वी [पतिनरे] [न्द्र] देव नृपतौ वङ्शक्रमाभ्यागतां
२b. संत्यक्तस्वसुखोद्यमे परहितव्यापारनिम्नात्मनि[2] ।।
३a. [तत्पादाब्ज] प्रसादाद्[3] उपनतविभवो विष्णुदेवः कृतात्मा
३b. लोकस्य ब्राह्मणादेस्त्रिषवणविधिवन्मार्जनादिप्रपूर्त्यै (।)
४a. पाषाणद्रोणम् एतं सुविहितसलिलोद्धारयन्त्रोदपानं
४b. कृत्वा तत्पुण्यबीजाद् बहुतरसुकृतारम्भम् आशस्त भूयः ।।
५. संवत् ७०८ कार्त्तिकशुक्ल नवम्याम् — — —

ओ३म् शौर्य, उत्साह, पराक्रम, अभय, न्याय, त्याग आदि अन्यों को असुलभ स्वामिगुणों के द्वारा स्पर्द्धा करने वाले राजा नरेन्द्रदेव वंशानुक्रमागत रूप से प्राप्त इस पृथ्वी को पोषित करता है। अपने सुख एवं उद्यम को दूसरे के हित-व्यापार में त्याग कर, अपने को लगाकर, श्री विष्णुभगवान के चरण-कमल की कृपा से प्राप्त वैभव वाला, उनमें (विष्णु के चरण-कमलों में) ही अपनी आत्मा को लगाकर, ब्राह्मणों के आदेश से त्रिषवण विधि से युक्त इस पाषाण जल द्रोणी को जल धारण कराते हुए, उसी पुण्य-बीज से अत्यधिक पुनः पुण्य-प्राप्ति की आशा करते हैं। संवत् ७८ कार्तिक शुक्ल नवमी।

१. छन्द-शार्दूलविक्रीडितम्
२. निम्नहेतु
३. स्रग्धरा छन्द

LXX

गैरीधारा कारणपूजा शिलालेख

संवत् ८२ (८२+५८८=६७० ई०)

यह लगभग ४० सें० मी० शिलालेख पाटन के गैरिधारा नामक स्थान पर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक बैल की आकृति से अलङ्कृत है।

१. स्वस्ति कैलासकूटभवनाद् — — — — — — — — — — —
२. [वत्पशु] पतिभट्ट [रकपादा]नुगृहीतो व [प्पपादा]नु [ध्या][1]
३. तो [परमभट्टा] रकमहाराजाधिराज श्री नरेन्द्रदेवः कुशली
४. — — — — — . इ — — — — — — — — — — — — — — — —
५. — — — — — — — — य — — — — — — — — —
६. — — — — — — पा — निम . इ — — — — — — — —
७. — — — — — — — — — तर[2] — — — — — — — तप
८. — — — — — — — — — — — — — न्द्रले भगवद् वज्रे-श्वर मण्ड[3]
९. — — — — — सर्वाधिकरणानाम् अप्रवेशेना — — — — प्र[4]
१०. — — — — — गणप्रसादीकृतम् अनेनास्य — — न्तु
११ — — नात्मनः श्रेयोभिवृद्धये धार्मिकगणानाम्[5] अतिसृष्टम्

---

१. Bh. omits to read line 2-6
२. Bh. 'तर' नहीं पढ़ा
३. Bh. ले भगवद् वज्रेश्वर प्रण
४. Bh. अप्रविधातव्य नुप्र (अप्रवेशेना — — — — प्र) ॥
५. Bh. गणान

१२. प्रतिपालनप्रतिज्ञा — — — कर्मयोगर — — — — — —
१३. — — — — प्यन्तरा — — — कालम्[६] अनतिक्रम्य प्रधान —
१४. स्नपन[७] गन्धपुष्पधूपप्रदीपवर्षवर्धनवर्षाकाल — — — — — — — — —
१५. [वा] दित्रजपकादिका कारणपूजा[८] कर्त्तव्या मण्डल्याञ्च
१६. उपलेपनसम्मार्जनप्रतिसंस्कारादिक [ङ् कृ] त्वा यद्यस्ति
१७. परिशेषम् तेन द्रव्येण भगवन्तं वज्रेश्वरम् उद्दिश्य
१८ पाशुपतानाम् ब्राह्मणानाञ्च यथासम्भवम्[१०] भोजनङ्कर-
१९ णीयम् तदन्यच्च कालान्तरेण यदि कदाचिद् दानपति-
२०. त्वेन प्रार्थयन्ते[११] आपत्सु तत्कालम् बुध्या[१२] दानपतीनाम्
२१. धान्यानाञ्चतुर्विंशतिर्मानिका देया अतोऽधिकम् दानप-
२२. तिभिर्न ग्राह्यं यदा चात्र कार्यम् उत्पद्यते परमासने-
२३. न विचारमात्रङ्क[१३]रणीयन्न तु द्रव्यस्याक्षेपस्तदेव-
२४. म् अवगत्य[१४] सर्वाधिकरणाधिकृतैरन्यैर्वा न कैश्चिद् अय —
२५. म् अस्मत्प्रसादोऽन्यथा कर्त्तव्यो ये त्वस्मदाज्ञां व्यतिक्रम्य वर्तन्ते
२६. वयम् तेषाम् न मर्षयामो येप्यस्मदूर्ध्वम् भवितारो राजा-
२७. नस् तैरपि पूर्वनृपतिकृतप्रसादप्रतिपालनादृ-
२८. तैर्नान्यथा करणीयो स्वयं आज्ञा दूतकश्चात्र भट्टार-
२९. क युवराज स्कन्ददेवः संवत् ८०१ भाद्रपदशुक्ल दिवा-
३०. [ष] ष्ठ्याम्[१५] ।।

---

६. Bh इ — — — कालम्
७. Bh. 'स्नपन' पढ़ा
८. Bh. — — मन्त्रजपकादिप्रकरणपूजा
९. Bh. पञ्चाल्यात्
१०. 'यथार्थ सम्भवम्' होना चाहिये।
११. Bh. प्रार्थयन्त
१२. 'बुध्या' होना चाहिये।
१३. Bh. परमसनम अधिकारमात्रं
१४. Bh. अवगत अवगम्य, अवगत्या
१५. Bh. दि — — म्

कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा से अनुगृहीत, बप्पा के चरणों का ध्यान करने वाले परम भट्टारक महाराजाधिराज श्री नरेन्द्रदेव कुशलतापूर्वक यह आज्ञा प्रदान करते हैं जैसाकि आप सबको विदित है कि भगवत् वज्रेश्वर के मण्डल (क्षेत्र) में सभी अधि-करणों (विभागों) के अधिकारियों का प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया है। ऐसा करके हमने धार्मिक गण (संस्था) पर कृपा की है। हमने अपनी पुण्यवृद्धि के लिये वज्रेश्वर मण्डल के प्रतिपालन एवं रक्षा की प्रतिज्ञा का भार धार्मिक गणों (धार्मिक गण के अधिकारियों) को दे दिया है। — —मध्य काल को न छोड़कर स्नान, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, वर्ष वर्द्धन, वर्षाकाल के वाद्ययन्त्रों, जप, आदि के द्वारा भगवान वज्रेश्वर की कारण पूजा की जानी चाहिये और वज्रेश्वर मण्डल में उपलेपन, मार्जन, प्रतिसंस्कार आदि करने के पश्चात् जो धन शेष रहता है उस धन द्वारा भगवान वज्रेश्वर को उद्देश्य करके पाशुपत ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। और उसके अतिरिक्त कालान्तर में यदि कभी वज्रेश्वर मण्डल के हितकारियों द्वारा दान मांगा जाता है तो आपत्ति को जानकर के तत्काल दान देने योग्य व्यक्तियों को २४ मानिक धान देना चाहिये इससे अधिक दानपतियों को ग्राह्य नहीं होगा।

और जब यहाँ यह कार्य हो तो परमासन के द्वारा इसके विषय में विचार ही किया जाय। द्रव्य की चोरी या कमी नहीं होनी चाहिये।

ऐसा जान कर के सभी अधिकरणों के अधिकारियों द्वारा अथवा अन्य किसी के द्वारा हमारे आदेश को अन्यथा नहीं किया जाना चाहिये। जो हमारी आज्ञा का अतिक्रमण करेंगे हम उनको सहन नहीं करेंगे। जो भी हमारे पश्चात् होने वाले राजा गण हैं उनके द्वारा, जैसे पूर्व राजाओं के द्वारा बनाये गये आदेशों का पालन आदर के साथ होता रहा है, उसी आदर से आज्ञा की अन्यथा नहीं की जानी चाहिये। यह मेरी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक हैं भट्टारक युवराज स्कन्ददेव। संवत् ८२ भाद्रपदशुक्ल दिवा षष्ठी।

LXXI

वटुक भैरव मन्दिर शिलालेख

संवत् ८९ (८९+५८८ = ६७७ ई०)

लगभग ४० सैं० मी० चौड़ा शिलालेख वटुक भैरव मन्दिर, पाटन में स्थित है। शिला का ऊपरी भाग दो हिरणों एवं धर्म-चक्र की आकृति से अलङ्कृत है।

१. — — — — — प्र — — — — — सरङ्ग — मौ पोतशि — —तौ — स इभ —

२. — — — — — — न — — — — — — — — — — — — — — वलै — म् स्थितम् यस्य वः पायात्

.३ — — — — — — रः — — — सरङ्ग — — स्म — — दूराद् श्र — — राजनि —

४. — — —धि — — — — — — — ल — — — — — — स — भाम् — द — — स्थि — राज्य

५. भद्राधिवास शिल — — —वा —

६. — पला — जि—इ— —

७. — — सम्यक्— —

८. —पतिना —

९. भट्ट —

१०. — वे —

(११ से १३ पंक्तियाँ मिट चुकी हैं।)

१४. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— — दोप —रिभि
१५. — — — — — — — — — — — — — — — —
— — —त्तभ त्र — — —
१६. — — — — — — — — — — — — — — — —
— — — — स्मदूर्ध्वम् भ—
१७. — — — — — — — — पत — — — — — — —
— — एवम् स्थितमित्यस्म—
१८. — — द्रक्षासंविधानम् — — — — — — — शासनम् पूर्व-
नृपतेः
१६. —ति — स्म — — — — — महीपतिः — — — — —
पुण्य — निष्ठानाम् स्थैर्यम् प्र
२०. — — द — — — — — — — दूतकश्चात्र राजपुत्रजनार्दनवर्मा
२१. संवत् ८०६ — — — — — — — — त्रयोदश्याम् ॥

— — —हमारे पश्चात् होने वाले राजाओं को इस आदेश का पालन करना चाहिये। इस प्रकार की यह स्थिति (आज्ञा) है। पूर्वराजाओं की निष्टाओं की स्थिरता के लिये — — — — संवत् ८६ — —त्रयोदशी।

LXXII

गणेशमन्दिर चाटभाट निषेधाज्ञा शिलालेख

संवत् ९५ (९५+५८८=६८३ ई०)

लगभग ४२ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख पाटन में च्यासल टोले के गणेश-मन्दिर की नींव पर स्थित है। शिला का उत्कीर्णित भाग दीवार की ओर है। शिला का ऊपरी भाग एक बैल की आकृति से अलङ्कृत है।

१. ओम् स्वस्ति भद्रादिवास (भद्राधिवास) भवनात् — — — — — — —

२. — — — — वप्प — — — — — — — — — — — — —

३. — — — ल — — — — — — — — — — — — — —

(४ से ७ पंक्तियाँ लुप्त हो चुकी हैं)

८. — — — — — — — लकरल — — — — — — — —

९. — — — — — — — वर्तमानान् भविष्यतश्च — — — [कुश]—

१०. [ल]म् आभाष्य समाज्ञापयति विदितम् भवतु [भव]—

११. [ताम् य] थैषाङ्गणिगुलमकोमालिहि — — माशि — —

१२. — — ञ्चाटभटानामप्रवेश्येन — — स्वनास — —

१३. — — — — तुष्टैः प्रसादः कृत एवम् अधिगतार्थै-

१४. [र] स्मत्पादोपजीविभिरन्यैर्वा न कैश्चिदयम् प्रसा-

१५. [दो] ऽन्यथा करणीयो य इमामाज्ञामुल्लङ्घ्यान्यथा [कु]-

१६. र्यात् कारयेत् वा सोऽस्माभिर्न मर्षणीयो ये चास्मदूर्ध्वम्]

१७. [भ] वितारो भूमिपालास्तैरपि पूर्वराजप्रसादसं-

१८. रक्षणप्रवणमानसैरेव भाव्यमिति स्वयमाज्ञा

१९. दूतकश्चात्र श्रीयुवराजशौर्यदेवः सम्बत् ९०५

२०. पौषशुक्ल दिवा दशम्याम् ॥

ओम् भद्राधिवास से सबका कल्याण हो। — — — बप्प — — — वर्तमान और भविष्य के लिये कुशलता पूछकर सूचित करते हैं कि जैसा आप सबको विदित है कि इन गणिगुल्म, कोमालि — हि — माशी के क्षेत्रों में चाट और भटों का प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया है। — — आप लोगों से सन्तुष्ट होकर हमने इस प्रकार कृपा की है। यह जानने वालों के द्वारा, हमारे चरणोपजीवियों के द्वारा, अथवा अन्यों के द्वारा इस कृपा को अन्यथा नहीं किया जाना चाहिये। जो भी इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा वह हमारे द्वारा सहन नहीं किया जायेगा। हमारे पश्चात् होने वाले राजाओं के द्वारा आज्ञा पालन एवं संरक्षण हेतु श्रद्धावान मानस वाले पूर्व राजाओं के समान ही आज्ञा का आदर एवं पालन होना चाहिये। यह मेरी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक हैं श्री युवराज शौर्यदेव। संवत् ५५ पौष शुक्ल दिवा दशमी।

LXXIII

भिक्षु-संघ-क्षेत्र मर्यादाभिलेख

संवत् १०३ (१०३+५८८=६९१ ई०)

लगभग ३८ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख वज्रधर के सम्मुख पशुपति मन्दिर के दक्षिण द्वार के बाहर स्थित है।

१. ओम् स्वस्ति भद्राधिवास [भवनादप्रतिहतशासनो भगवत्पशुपति भट्टारक पादानु-
२. गृहीतो बप्प पा [दानुध्यातो लिच्छविकुलकेतुः प] रममाहेश्वर परमभट्टा-
३. रक महाराजाधि [राजश्री नरेन्द्रदेवः कुशली] — — ञ्चगृतग्रामे प्रधानपुरस्सरा-
४. न् सर्वकुटुम्बिनः कुशल [माभाष्य समाज्ञाप] यति विदितं भवतु भवतां यथा-
५. यङ्ग्रामो भगवत् पशुपतौ स्वकारित महाप्रणालीनामशाठ्येन सर्वेति कर्त्तव्याना-
६. म् अनुष्ठानार्थं विष्ट्याज्ञानुविधायित्वेन चाटभटानामप्रवेश्येन शरीर-कोट्टमर्या-
७. दोपपन्नः शरीरसर्वकरणीयप्रतिमुक्तः कुटुम्बी बहिर्देशगमनादिसर्ववि—
८. ष्टिरहितो गुर्विणीमरणे गर्भोद्धरणाय पणशतमात्रदेयेन स क्षत-गोष्ठपमृ-
९ गापचारे स पणपुराण त्रयमात्रदेयेन च युक्तश्चोरपरदारहत्या-सम्बन्धादि-
१० पञ्चापराधकारिणाम् शरीरमात्रं राजकुलाभाव्यम् तद्गृहक्षेत्रकलत्रा-दिसर्वद्रव्या-

११. एयार्यसङ्घस्येत्यनेन च सम्पन्नः श्रीशिवदेवविहारे चतुर्दिशार्यभिक्षु-
सङ्घायास्मा-

१२. भिरतिसृष्टः सीमा चास्य पूर्वोत्तरेण श्रेष्ठि[1] दुल्मूंधिन[2] प्रीतुम्ब्रूम-
ठ्यमाली तस्याः किञ्चित् पू-

१३. र्वेण वृहदाल्या दक्षिणमनुसृत्य चुह्वङ्गभूमिं पूर्वदक्षिणेन वेष्टयित्वा
हमुप्रिङ्गामी

१४. मार्गः तं दक्षिणमनुसृत्य सरलवनगामी मार्गः तं पश्चिममनुसृत्य हमुप्रिम्
पाञ्चा-

१५. लिकक्षेत्रपश्चिमकोणात् दक्षिणपश्चिममनुसृत्य श्री खर्जूरिक विहारस्य
सर्वा-

१६. परिप क्षेत्रपश्चिमाल्या दक्षिणं गत्वा पृच्छिन्नू दक्षिणेश्वराम्बु तीर्थ-
क्षेत्राणाम् सन्धिः

१७. ततश्च दक्षिणमनुसृत्य शशिक्षेत्रपूर्वदक्षिणकोणात् किञ्चित् पश्चिमं
गत्वा मित्तम्ब्रू पू-

१८. र्वाल्या दक्षिणं अनुसृत्य तत्सर्वदक्षिणाल्या पश्चिमम् गत्वा किञ्चिदुत्त-
राञ्च ततः पश्चिम-

१९. म् अनुसृत्य च निम्न्रू दक्षिणपश्चिमकोणात् दक्षिणं गत्वा लोप्रिङ्-
ग्रामेन्द्र गौष्ठिकक्षेत्रपूर्व-

२०. दक्षिणकोणात् किञ्चित् पश्चिमं गत्वा हमुप्रिम् पाञ्चालिकक्षेत्र
पश्चिमाल्या दक्षिणमनुसृत्य

२१. — — — — — उत्तरपूर्वकोणे हम्प्रिङ्ग्रामी वृहद्पथस्तं पश्चिमम्
अनुसृत्य हमुप्रिलो-

२२. प्रि — — स्तिस्रोतोऽधोऽनुसृत्य मेकण्डिदुल् तिलमकसङ्गमस् तत्पश्चि-
मोर्ध्वम् अधिरुह्य कन्दर-

२३. — — — नुसारेणोत्तरपश्चिममनुसृत्य पानीयपातो यावल्
लोप्रिङ्गामिनम् मार्गम् उ-

२४. — — — — — खरा क्षेत्र सर्वदक्षिणाल्या पश्चिमं लोप्रि — —
— — त क्षेत्रं ततः

---

१. श्रेष्ठि

२. मूर्ध्नि या मूर्धनि

२५. प [श्चिमम]नुसृत्योत्तरञ्च वृहदारामस्य पूर्वमुखे महापथस्तत [उ] त्तरं गत्वा वृर-
२६. दा[राम] स्य पूर्वोत्तरकोणात् अधोऽवतीर्य वनपर्यन्तमुपादय फंशिम्प्रल स्त्रोतस्तदु-
२७. त्तरमनुसृत्य स्त्रोत — — मस स्त्रोतोऽनुसारेण ब्रह्मतीर्थसंवेद्यम् नदी-वाग्वती पूर्व्व-
२८. म् अनुसृत्य [उत्त]रं गत्वा कन्दराग्रानुसारेण श्रेष्ठिदुलर्मूर्धिन[3] सव-प्रीतुम्ब्रू मठ्यमाली त्ये-
२९. तत्सीमपरिक्षिप्तेऽस्मिन्न] ग्रहारे यदि कदाचिदार्यसङ्घस्याशक्यम् कार्य[मुत्प]द्येत
३०. तदा परमा [सनेन विचारणीयमापणकरोऽधिकमासतुलादण्डादि[क] पर्व[4] एवा-
३१. र्यभि[क्षुसङ्घस्ये] त्येवम् अवगतार्थैरस्मत्पादोपजीविभिरन्यैर्वायम् प्रसादोऽन्यथा न
३२. कर[णीयोस्त्वेता] माज्ञामुल्लङ्घ्यान्यथा कुर्यात् कारयेद् वा सोऽस्मा-[भि]स्सुतरान् न मर्षणीयो
३३. ये चा[स्मदूर्ध्वम् भवि] तारो भूमिपालास्तैरप्युभयलोकनिरवद्यसुखा-र्थिभिः पूर्व-
३४ राजविहि[तो]ऽयम् विशिष्टः प्रसाद इति प्रयत्नस् सम्यक् परिपालनीय एव यतो
३५. धर्मशास्त्रवचनम बहुभि[5] र्वसुधा दत्ता राजभिस्सगरादिभिः (।) यस्य यस्य यदा भूमि-
३६ स्तस्य तस्य तदा फलम् (।।)
इति स्वयं आज्ञा दूतकश्चात्र भट्टारक श्री शिवदेवः
३७ संवत् १००३[6] ज्येष्ठ शुक्ल दिवा त्रयोदश्याम् ।।

ओ३म् भद्राधिवास भवन से सबका कल्याण हो । निर्बाध शासन वाले, भगवत्पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा प्राप्त, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले, लिच्छवि कुल की ध्वजा, परमशिवभक्त भट्टारक महाराजाधिराज

४. दण्डादि[त्य] पर्व ? ।।
५. श्लोक छन्द
६. Bh. १४३ पढ़ता है ।

श्रीनरेन्द्रदेव कुशलतापूर्वक — — -- गर्तग्राम में प्रधान मुख्य कुटुम्बियों के सम्मुख कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं जैसे आप सबको विदित हो कि यह सङ्ग्राम भगवान पशुपति के सम्पत्ति-क्षेत्र में आता है। जहाँ पर पूर्व-आज्ञानुसार जल-नालियों के निर्माण-कार्य के अनुष्ठान में आप लोगों ने अपना कर्त्तव्य समझकर बेगार श्रम करके कार्य किया। किन्तु अब हमने इस क्षेत्र में चाट-भट के प्रवेश को निषिद्ध कर दिया है। यह क्षेत्र सुरक्षित दुर्गीय मान-मर्यादाओं से सम्पन्न घोषित कर दिया गया है। बेगार में किये जाने वाले शारीरिक परिश्रम से भी आपको मुक्त किया जाता है विदेश-गमन करने पर भी कुटुम्ब के सदस्य को सभी बेगार के श्रम से मुक्त किया जायेगा। गर्भोद्धार करते समय गुरुपत्नी के मरने पर केवल एक सौ पण दण्ड के रूप में देने होंगे, गोष्ठ (शरणस्थल) से घायल पशु के भागने में केवल तीन पुराणपण देने होंगे, चोरी, परदार हत्या आदि पञ्चापराध करने वाले व्यक्ति को शारीरिक दण्ड हेतु राजकुल में सौंप दिया जायेगा। उसके घर, क्षेत्र, स्त्री समस्त सम्पत्ति आर्य सङ्घ की होगी और इस सम्पत्ति से सम्पन्न श्री शिवदेव विहार में चारों ओर से आर्यभिक्षु सङ्घ की सीमा निर्मित की है—उसके पूर्वोत्तर से श्रेष्ठि दुलमूधनि प्रीतुभ्ब्रू मठ्यमाली, उसके थोड़ा पूर्व में वृहद्-जल-नहर, दक्षिण में घेरे हुए ह्यु प्रिङ्गामी मार्ग, उसके दक्षिण में अनुसरण करते हुए सरलवन को जाने वाला मार्ग, उसको पश्चिम ओर अनुसरण करते हुए ह्यु प्रिम्, पाञ्चालिक क्षेत्र के पश्चिमी कोने से दक्षिण-पश्चिम की ओर अनुसरण करके श्रीखजूरिक विहार के सर्वापरिप क्षेत्र में पश्चिमी नाली, दक्षिण में जाकर पृच्छिन्ब्रू तथा दक्षिणेश्वर जलतीर्थ स्थलों का सङ्गम, तत्पश्चात् दक्षिण की ओर जाते हुए शशिक्षेत्र पूर्व-दक्षिण कोण से थोड़ा पश्चिम में जा कर मित्तम्बू की पूर्व नाली के दक्षिण में जाकर फिर सम्पूर्ण दक्षिणी नाली के पश्चिम में जाकर फिर थोड़ा उत्तर में जाकर तत्पश्चात् पश्चिम में अनुसरण करते हुए और तिम्ब्रू के दक्षिण-पश्चिमी कोण से दक्षिण में जाकर लोप्रिङ्, ग्रामेन्द्र तथा गौष्ठिक क्षेत्र के पूर्व-दक्षिणी कोण से थोड़ा पश्चिम में जाकर ह्यु प्रिम् पाञ्चालिक क्षेत्र के पश्चिमी नाली के दक्षिण में जाकर— — — उत्तर-पूर्वी कोण में ह्यू म्प्रिङ् को जाने वाला महापथ, उसके पश्चिम में जा कर ह्यु प्रिम् लोप्रिम्— — स्रोत के नीचे जाकर मेकाण्डिदुल् नामक जलनहर का संगम, उसके पश्चिम में ऊपर चढ़कर एक गुफा — -- — उसका अनुसरण करते हुए उत्तर पश्चिम में जाकर गिरते हुए झरने से लेकर लोप्रिङ् तक जाने वाले मार्ग तक उ — — – — खरा क्षेत्र के दक्षिणी नाली के पश्चिम में जाकर लोप्रिम् — — — — क्षेत्र, तत्पश्चात् पश्चिम और

उत्तर में जाकर विशाल उद्यान के पूर्व में महापथ, वहाँ से उतर में जाकर, विशाल बाग के पूर्वोत्तरी कोण से नीचे की ओर उतर कर बन में फंशिम्प्रल नाम स्रोत, उसके उत्तर में जाकर फिर स्रोत — — — मस स्रोत का अनुसरण करते हुए ब्रह्मतीर्थ तथा वाग्वती नदी के पूर्व में चलकर, उत्तर में जाकर गुफा के आगे श्रेष्टि दुलमूर्ध्नि सवप्रीतूम्ब्रूमठ्यमाली, इस प्रकार इस अग्रहार की सीमा निश्चित की है। यदि कभी आर्य सङ्घ के द्वारा कोई शङ्का की जाती है तो वह परमासन के द्वारा विचारणीय होगा। बाजार में लगाए हुए बहुत से कर, तुलादण्ड, पर्व के अवसर पर लगाए हुए कर आर्य-सङ्घ के ही होंगे। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, हमारे चरणोपजीवियों के द्वारा, अथवा अन्यों के द्वारा, इस कृपा को अन्यथा नहीं किया जाना चाहिये। जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन करेगा या करायेगा वह हमारे द्वारा कदाचित् सहन नहीं होगा। जो हमारे पश्चात् होने वाले राजागण हैं, उनके द्वारा भी, दोनों लोकों में अनिनन्दनीय सुखाभिलाषियों के द्वारा इस पूर्वराज-विहित विशिष्ट आज्ञा का प्रयत्नपूर्वक सम्यक् रूप से पालन होना चाहिये क्योंकि धर्मशास्त्रों का वचन है कि—

सगरादि बहुत से राजाओं के द्वारा भूमि दी गई। जिस जिस की जब-जब भूमि दी गई उस उसको तब तब फल मिला है। यह मेरी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक हैं भट्टारक शिवदेव। संवत् १०६ ज्येष्ठ शुक्ल दिवा त्रयोदशी।

LXXIV

शिवदेवविहार भिक्षु-संघ सीमा-निर्धारण शिलालेख

लगभग संवत् १०३ (१०३+५८८=६९१ ई०)

यह लगभग ४२ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख पाटन दरबार के येङ्गु नामक स्थान पर तहगली नामक उपवीथि में स्थित है।

१. [ओ३म् स्वस्ति भद्राधि] वास भवनात् अप्रतिहत शसनो[1] भगव [त् पशुपतिभट्टारकपादानुगृहीतो]

२. [बप्प] पादानुध्यातो लिच्छविकुलकेतुः परममाहेश्वर पर[म भट्टारक महाराजाधिराज]

३. [श्री न] रेन्द्रदेवः[2] कुशली गुल्लतङ्ग्रामनिवासिनः प्रधान पुर[स्सरान् सर्वकुटुम्बिनः कु]—

४. शलम् आभाष्य समाज्ञापयति विदितं भवतु भवतां यथायं ग्रामो [भगवत्पशुपतौ स्व]

५. [कारित][3] महाप्रणालीनामशाठ्येन सर्वेतिकर्त्तव्यानाम् अनुष्ठानार्थम् वि [ष्ट्याज्ञानुविधायित्वै]—

६. न चाटभटानामप्रवेश्येन शरीरकोट्मर्यादोपपन्नः शरीरसर्वक [रणीय-प्रति]

७. मुक्तः कुटुम्बी[4] वहिर्देशगमनादिसर्वविष्टिरहितो गुर्विणीमरणे ग-[र्भोद्धरणाय]

---

१. शासनो।

२. L — — — — देवः

३. L. पशुपत

४. L. कुटुम्ब

८.]प]ण शतमात्रदेयेन सक्षतगोष्ठ(प) मृगापचारे[५] स पणपुराणत्रयमा-
[त्रदेयेन च]

९. युक्तश्चौर[६] परदारहत्यासम्बन्धादिपञ्चापराघकारिणम् शरीरमात्रमु
राज[कुलाभा]—

१०. व्यम् तद्गृहक्षेत्रकलत्रादिसर्वद्रव्याण्यार्यसङ्घस्येत्यनेन च सम्पन्नः श्री
शिव दे[व विहा]—

११. [रे] चतुर्दिशार्यभिक्षुसङ्घायास्माभिरतिसृष्टः सीमा चास्य पूर्वोत्तरेण
विहारा — (अ)

१२. — प्रणालीभ्रमस्ततो दक्षिणमनुसृत्य गोमिबूधाञ्चो प्रदेशे वाग्वती
नदी भा — — (विता)

१३. —नुसृत्य गोत्तिलमकसङ्क्रमस्तत उत्तरं गत्वा श्रीमानदेव विहार
खर्जूरि [कावि]—

१४. [हार] क्षेत्रयोः सन्धिस्ततः पश्चिमं गत्वा धोरेवालगञ्वो ततः पश्चिम-
मनु [सृत्य]

१५. [मध्य]म विहारस्य पूर्वदक्षिणकोणपार्श्वे लिमार्गेणोत्तरं गत्वा प्रणा-
ल्याः पू[र्वो]—

१६. [त्त] रानुसारेण कुण्डल[७]क्षेत्रस्य दक्षिणपूर्वकोणे महापथस्ततो मार्गा-
नुसा[रे]—

१७ णोत्तरं गत्वाभयरुचिविहारस्य पूर्व प्रा[कार] स्ततः [पूर्वोत्तरमनुसृत्य
वार्त्त[क]—

१८. ल्याणगुप्तविहारस्य दक्षिणपूर्वप्राकारौ ततः पूर्वोत्तरम् अनुसृत्य
चतुर्भा—

१९. लटसन[८] (लङ्कासन) विहारस्य पूर्वदक्षिणकोणस्तत् उत्तरम् पश्चिम-
ञ्चानुसृत्योत्तरप—

२०. श्चिमकोणे वृहत्पथस्तत्पूर्वोत्तरं गत्वा कम्बीलम्प्रा तत उत्तरपूर्वमनु-
सृत्य

---

५. L. क्षतगोरूपमृगापचारे

६. L. देयेन । मुक्तश्

७. L. कुणाल

८. L. लङ्कासन

२१. श्रीराजविहारेन्द्रमूलकयोः पानीयमार्गसङ्घात [खातकः तस्योत्तर-पूर्वेण]

२२. [वृ]हन्मार्गस्य दक्षिणवाटिकाया दक्षिणाल्यनुसारेण पूर्वदक्षिण-ञ्चानुसृत्य प

२३. — थस् ततो यावत्स्वल्प प्रणाल्याम्[९] परिगेसपल्लीपार्श्वे मार्गस्तत-स्तमेव मार्गंदक्षिणे-

२४. नानुसृत्य स एव विहारस्ततः प्रणालीभ्रम इत्येतत्सीमपरिक्षिप्ते-ऽस्मिन्नग्र[हा]—

२५. रे [यदि क] दाचिदार्यसङ्घस्याशक्यम्[१०] (आर्थैक्यम्) कार्यमुत्पाद्येत तदा परमासनेन विचा[रणी]

२६. [यमित्येवमवगतार्थैरस्म] त्पादोपजीविभिरन्यैर्वायम् प्रसादोऽन्यथा न क [र]—

२७. [णीयो यस्त्वन्यथा कु] र्यात् कार्येद् वा सोऽस्माभिस्सुतरान्नमर्ष-णीयो

२८. [ये चास्मदूर्ध्वम् भवितारो भूमि पा] लास्तैरप्युभयलोकनिरवद्यसुखा-र्थिभिः पू—

२९. [र्वराजवि] हितोऽयम् विशिष्टः प्रसाद इ] ति प्रयत्न [तस् सम्यक् परिपालनीय एव यतो] ध—

३०. [र्मशास्त्र] व [च] नम् [बहुभि] र्वसुधा दत्ता [राजभि] स्स-[गरादिभिः] (।)
यस्य यस्य यदा भूमिस्त—

३१. स्य तस्य तदा फलम् (।।)

— — — — — — — — — — — — —

३२. सम्बत् — ज्येष्ठ [शुक्ल] सप्तम्याम्

ओऽम् भद्राधिवास भवन से सबका कल्याण हो। निर्बाध शासन वाले, भगवत्पशुपति भट्टारक की चरणकृपा प्राप्त, बप्प के चरण का ध्यान करने वाले, लिच्छविकुल के ध्वज, परम शिवभक्त श्री नरेन्द्रदेव कुशलतापूर्वक गुल्लतङ्ग्राम निवासियों एवं प्रधान कुटुम्बियों के सम्मुख कुशलता पूर्वकर

---

९. L. ... त्य

१०. L आर्थक्यं

सूचित करते हैं कि जैसे यह ग्राम भगवत् पशुपति के सम्पत्ति क्षेत्र में आता है। जहाँ पर पूर्व आज्ञानुसार जल-नालियों के निर्माण-कार्य के अनुष्ठान में आप लोगों ने अपना कर्त्तव्य समझकर वेगार-श्रम करके कार्य किया है। किन्तु अब हमने इस क्षेत्र में चाट-भटके प्रवेश को निषिद्ध घोषित किया है। यह क्षेत्र सुरक्षित, दुर्गीय मान मर्यादाओं से सम्पन्न घोषित कर दिया है। वेगार में किये जाने वाले श्रम से आप सबको मुक्त कर दिया गया है। बहिर्देश-गमनादि सब प्रकार की वेगारों से रहित कुटुम्बों को गर्भपात के समय पत्नी के मरने पर केवल एक सौ पण दण्ड के रूप में देने होंगे। गौष्ठ से घायल पशु के भागने पर केवल तीन पुराण देने होंगे, चौरी, परदार हत्या आदि पञ्चापराध करने वाले व्यक्ति को शारीरिक दण्ड हेतु राजकुल को सौंप दिया जायेगा। उसके घर, क्षेत्र, स्त्री आदि समस्त सम्पत्ति आर्यसङ्घ की होगी। और इस सम्पत्ति से सम्पन्न श्रीशिवदेव विहार में चारों ओर से आर्य भिक्षु संघ की सीमा हमने निर्धारित की है। पूर्वोत्तर से विहार के आगे जो नालियां हैं उनसे घूमकर फिर दक्षिण की ओर जाते हुये बागवती नदी से परिवृत गोभिबूधाञ्चो प्रदेश में चलते हुये जो गोत्तिलमक संगम है, उसके उत्तर में जाकर श्रीमानदेव विहार तथा खर्जूरिका विहार क्षेत्रों का सन्धि-स्थल, तत्पश्चात् पश्चिम में जाकर चोरेबालगञ्चो तत्पश्चात् पश्चिम में अनुसरण करते हुए मध्यम विहार के पूर्व-दक्षिण कोण के पार्श्व में एलिमार्ग, उसके उत्तर में जाकर नहर के पूर्वोत्तर में अनुसरण करते हुये कुण्डलक्षेत्र के दक्षिण-पूर्वी कोण में जो महापथ है, उसी महापथ के साथ-साथ उत्तर में जाकर अभयरुचि विहार का पूर्वी प्राचीर, फिर पूर्वोत्तर में जाते हुते कल्याण-गुप्त विहार की दक्षिण-पूर्वी दोनों दीवारें, उससे पूर्वोत्तर में जाते हुये चतुर्माल-टसन विहार का पूर्व-दक्षिण कोण, तत्पश्चात् उत्तर-पश्चिम में अनुसरण करते हुये उत्तर-पश्चिम कोण में बृहद् पथ (महापथ) उसके पूर्वोत्तर में जाकर कम्बीलम्प्रा, उसके उत्तर-पूर्व में जाकर श्री राजेन्द्रविहार के दोनों ओर की खाइयों का जलमार्ग संगम, उसके उत्तर-पूर्व से महापथ की दक्षिण वाटिका की दक्षिणी नाली के साथ-साथ पूर्व-दक्षिण को जाता हुआ एकमार्ग, उसके पश्चात् जहाँ तक छोटी-१ नालियाँ हैं वहाँ तक तथा परिगेसपल्ली के बगल का मार्ग, तत्पश्चात् उसी मार्ग के दक्षिण में जाते हुये वही विहार फिर घूमती हुई जल-नाली, यह सीमा इस विहार में लगाई गई है। यदि कभी आर्यसङ्घ कोई संशय उत्पन्न करदे तब परमासन विचार करेगा। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, हमारे चरणोपजीवियों अथवा अन्यों के द्वारा इस कृपा की

अन्यथा नहीं की जानी चाहिए। जो इस आज्ञा को अन्यथा करेगा अथवा करायेगा वह हमारे द्वारा थोड़ा सा भी सहन नहीं किया जायेगा। जो हमारे पश्चात् होने वाले राजागण हैं उनके द्वारा भी, दोनों लोकों में आनन्दनीय सुखाभिलाषियों के द्वारा, इस पूर्वराजविहित विशिष्ट आज्ञा का प्रयत्नपूर्वक सम्यक् रूप से पालन होना चाहिये क्योंकि धर्मशास्त्र का यह वचन है— सगरादि बहुत से राजाओं के द्वारा यह भूमि दी गई जिसकी जब-जब भूमि दी गई है उस-उसको तब-२ फल मिला है। संवत्— — ३(१०३) ज्येष्ठ शुक्ल सप्तमी।

LXXV

शङ्कु भिक्षुसङ्घ शिलालेख

लगभग २६ सैं० मी० चौड़ा उत्कीर्णित शिलालेख घाटी के उत्तरीपूर्वी किनारे पर स्थित शङ्कु नामक ग्राम में स्थित है। यह अभिलेख नरेन्द्रदेव का शासनकालीन प्रतीत होता है।

१. धेयधर्मोऽयम् श्री धार्मराजिकामात्या सु — — — —

२. साङ्घिक भिक्षुसङ्घस्य — — — — — — — — — — —

यह धारण किया हुआ धर्म है। श्री धर्मराज के अमात्य के अनुसार साङ्घिक भिक्षु सङ्घ की......।

LXXVI

इन्द्रमती छत्र-रोपण क्षेत्र मर्यादा शिलालेख

सम्वत् १०६ (१०६+५८८=६६७)

लगभग ५० सैं० मी० चौड़ा शिलालेख बलम्बू ग्राम के उत्तर में महालक्ष्मी पीठ के खण्डहरों के निकट इन्द्रमती नामक नदी के दाहिने तट पर स्थित है।

१. [ओ३म् स्वस्ति] कैलास[कूटभवना] त्— —

२. — — — — चरण — — — — — — — भगवत्पशु-पति भट्टारक पादानुगृहीतो बप्प—

३. पादानुध्यातो लिच्छविकुलकेतु — — — — परमभट्टारकमहा-राजाधिराज श्री शिवदेवः कु—

४. शली नेपालभूभुजो — — — — — — — — —वधि — — — — सराज — र — — — — इनु — — यथार्थम् (यथार्हङ्) कु—

५. शलमभिधाय समा ापयति विदितमस्तु भवताम् — — — — — — देवकुलप्रतिबद्ध—

६. — नोज्ञाभिधानो ग्रामः — — — — — — — — — — — — — — — — — — भुज्यमान इत्यवगम्या

७. — — दानीमयं ग्रामः कोट्टमर्यादोपपन्नश्चाटभट्टानाभप्रवेश्पेन झलन्दुविष्ट्या च विनिर्मुक्तः

८. सतलसीताटीहङ्गनिवासिनाम् पालनोपभोगार्थम् प्रसादीकृतोऽस्य च देवकुलस्य खण्डस्फुटित सं—

९. स्कारकारणपूजादिकर्मभि — — — — — कारणपूजा — वशिष्टेनदभु — ण भगवतः श्रीपशुपतिर्भट्टार—

१०. कस्य प्रतिवर्षमस्मत्पुण्याधिगमनिमित्तम् शोभनच्छत्रारोपणा करणीया तमुद्दिश्य शोभनायात्रापि क—

११. रणीया तदुपयुक्त एष्टमपि प्रत्यायजातमेतैर्विभज्य स्वयमुपभोक्तव्यम् एष च ग्रामः — वद्रङ्गम्—

१२. स्य दक्षिणपश्चिमे — गम् प्रोद्भिङ् ग्रामस्यापि पश्चिमोत्तरेण गणि-दुङ्ग्रामस्य चोत्तरपूर्वतो नुपुनग्रा—

१३. मस्यापि दक्षिणपूर्वेणामीषाञ्चतुर्णाङ्ग्रामाणाम् सीमा सत्वौमालम्ब संज्ञके प्रदेशे समावास—

१४. यितव्यः सीमा चास्य प्राक्तनी आरामखर प्रदेशे शोभनाम्लाम्रवृक्षात् दक्षिणपश्चिमतः पाण्डर—

१५. मृत्तिका स्रोतसश्च दक्षिणपश्चिमेन यावत् हिमनदी स्रोत उत्तीर्य किञ्च - दारुह्य स्वकीयामेव सीमा—

१६. नं वेष्टयित्वा गवां लवणदानस्ब — ई दक्षिणालिकासमीपे आम्रवृक्षस्तत् पश्चिमतो लुल्जूस्रोतस—

१७. मुत्तीर्य दाम्यम्बीगम् प्रोद्भिः दां . आकोहसी — — —त्रिसन्धि-संज्ञकः प्रदेशस्योत्तरतः

१८. तस्या एवोपरिष्टाद्यावत् प्रत्तीयवडु नदीसङ्गमस्तमुत्तीर्य किञ्चिदारुह्य च प्राच्या किशि — — — न —

१९. क्षेत्रस्योत्तरतः सीम्नो यावत् सलम्बू राजवासकस्योत्तरेण ह — स्रोतो बृहत्सालवृक्षस् तत्पूर्वदक्षिण—

२०. तः पाशवृक्षस् तत्पूर्वतोऽपि राजवासके पानीयारोपित एवोपविधिसि— खोट क्षेत्रोत्तरेणाम्रपादप—

२१. स् तत्पूर्वतोऽपि गोलणम् स्रोतसोऽधस्ताद्यावद् गौतमाश्रमसरित्सङ्गम-स्तस्य चाधस्तात् उत्थिम (नाम) नदीसम्बैद्यस्तम—

२२. वतीर्यारुह्य वदजण्डङ्गुम् — ह पथस्य स्त्रिसन्धिसंज्ञकात्पश्चिमेना-रुह्य किञ्चित्पालणस्य च दक्षिणतो

२३. बृहद् वनम् तद्दक्षिणतोऽपि वस्तुं क्षेत्रं तस्यैव दक्षिणेन चम्पकवृक्षस्त-द्दक्षिणम्चिमतश्च स

२४. एष शोभनाम्लाम्रवृक्ष इत्येतत् सीमान्तः सा . इ — स्मिन् ग्रामेऽस्म-त्प्रतिबद्धजीवनोपभोगिभिरन्यै—

२५. र्वा न कैश्चिदल्यापि पीडा कर्त्तव्या कारयितव्या वा येत्वेतामास्माकी-
माज्ञामवज्ञायान्यथा कुर्युः कार—

२६. येयुर्वा तेऽस्माभिरवश्यन्न क्षम्यन्ते येऽवास्म (येवस्म) दूर्ध्वम् भवितारो
मेदिनीनाथास्तैरपि पूर्वपार्थिव—

१७. कृतोऽयम् विशिष्टः प्रसाद इति स्वहितोदयापेक्षिभिस्तद्गौरवद्भिर्
संरक्षणीयो यथो—

२८. त्कम् पुरातननानाम्[1] पृथ्वीश्वराणाञ्जगद्धितायाविरतोद्यमानाम् (।)
ये सर्वदाज्ञामनुपालयेयुस् ते—

२९. षाम् नृपश्रीर्नियता . इ == इ (।।) इति स्वयमाज्ञा दूतकश्चात्र श्री
जयदेवो भट्टारकः संवत्

३०. १००९ — — — — — — — पञ्चम्याम् ।

ओऽम् कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो। — — — भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा पात्र, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले लिच्छविकुल की ध्वजा, परम भट्टारक महाराजाधिराज श्री शिवदेव कुशलता पूर्वक नेपाल के भावी राजाओं को सम्मान पूर्वक सम्बोधित करते हुए तथा ग्राम-प्रधानों के सम्मुख यथायोग्य कुशलता पूछकर सूचित करते हैं कि जैसा आप सबको विदित हो कि पुट्टिनारायण देवकुल (मन्दिर) से सम्बन्धित — — नोज्ञ नामक ग्राम अब तक राजकुल के द्वारा उपभोग किया जाता था किन्तु अब हमने इस ग्राम को एक सुरक्षित दुर्गीय मर्यादाओं से सम्पन्न घोषित कर दिया है, तथा चाट और भटों के प्रवेश को भी इस क्षेत्र में निषिद्ध कर दिया है, साथ ही इस क्षेत्र के निवासियों को झलन्दु नामक विष्टि (वेगार श्रम) से मुक्त कर दिया है। घाटी में बसी हुई सीताटी के वृङ्ग निवासियों के पालन-पोषण एवं उपभोग के लिए इस क्षेत्र को देकर कृपा की गई है। इस गाँव के मन्दिर के जीर्णोद्धार का काम तथा कारण-पूजा का कार्य भी करना होगा। इस कार्य में व्यय करने के पश्चात् अवशिष्ट धन-राशि से हमें प्रतिवर्ष पुण्यवृद्धि के लिए भगवत् श्री पशुपति भट्टारक के ऊपर शोभन छत्र भेंट करना होगा, इस उद्देश्य से शोभना-यात्रा का भी आयोजन होगा, उसके उपयुक्त बचे हुये धन को बाँटकर विश्वास के साथ ग्राम-निवासियों को स्वयं उपभोग कर लेना चाहिये। और यह ग्राम वृङ्गम् ग्राम

१. उपजाति छन्द

के दक्षिण-पश्चिम में, गमप्रोद्भिङ् ग्राम के दक्षिण-पश्चिम में, ग्रामप्रोद्भिङ् ग्राम के उत्तर-पश्चिम में, गणिदुङ् ग्राम के उत्तर-पूर्व में नुपुन ग्राम से दक्षिण पूर्व से, इन चारों ग्रामों की सीमाएं सत्वोमालम्व नामक प्रदेश में एक साथ मिलेंगी। और इसकी पिछली सीमा इस प्रकार है—आरामखरप्रदेश में सुन्दर अम्ल आम्र वृक्ष से दक्षिण-पश्चिम तक पीली मिट्टी का स्रोत, दक्षिण-पश्चिम की ओर जहाँ तक हिम नदी का स्रोत है उसे पार करके किञ्चित् चढ़ाई चढ़कर अपनी ही सीमा को घेरे हुए जहाँ गायों को नमक-दान देने का स्थल है, दक्षिणालिका (दक्षिणी पगडण्डी) के समीप आम्र वृक्ष, उसके पश्चिम में लुज्जू नामक स्रोत को पार करके — — — एक त्रिसन्धि नामक प्रदेश है जहाँ पर दाम्यम्बीगम, प्रोद्भि — — तथा आको-हसी नामक दुर्गों की सीमाएं मिलती हैं, इस स्थान के उत्तर में ऊपर की ओर बढ़कर जहाँ तक प्रत्ती और यवदु नदी का सङ्गम है, उसे पार करके थोड़ा ऊपर की ओर चढ़कर पूर्व की ओर — — — क्षेत्र के उत्तर की सीमा तक सलम्बू राजवासक के उत्तर से — — — स्रोत और विशाल शालवृक्ष उसके पूर्व-दक्षिण में पाशवृक्ष उसके पूर्व में भी राजवासक में विधि-पूर्वक जलसिञ्चित — — खोट क्षेत्र, उसके उत्तर में आम्रवृक्ष, उसके पूर्व में भी गोलणम स्रोत के नीचे से गौतम आश्रम सहित नदी का संगम है, उसके नीचे से उठती हुई नदी को पार करके, चढ़कर वदजण्डङ्गम् नामक महापथ है, इस महापथ के निकट त्रिसन्धि नामक स्थान है वहाँ पश्चिम की ओर पालण के दक्षिण में कुछ ऊपर चढ़कर एक वृहद् वन है, इसके दक्षिण में भी विभिन्न वस्तुओं को उपजाने वाला वस्तुक्षेत्र है, उसके भी दक्षिण में चम्पक वृक्ष है, इस वृक्ष के ही दक्षिण पश्चिम में वही शोभायमान अम्ल आम्रवृक्ष है। यह सीमा इस ग्राम में निश्चित दी गई है। इस गाँव में हमारे से सम्बन्धित आजीविकोपभोगियों के द्वारा अथवा अन्यों के द्वारा थोड़ी सी भी पीड़ा नहीं दी जानी चाहिए। जो इस आज्ञा की अन्यथा करेगा या करायेगा वे हमारे द्वारा क्षम्य नहीं होंगे। जो हमारे पश्चात् होने वाले भूपति हैं उनके द्वारा पूर्वजों की इस विशेष कृपा (आज्ञा) का अपने कल्याण, विकास की अभिलाषा करते हुए उसके गौरव का संरक्षण एवं पालन होना चाहिये—जैसे कहा गया है—जिन राजाओं ने जगत् हित के लिये सदैव उद्यम किये ऐसे पुरातन राजाओं की आज्ञा का जो पालन करेगा उन राजाओं की, श्री (राज्य लक्ष्मी) सदा स्थिर रहेगी। यह हमारी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक हैं श्री जयदेव भट्टारक। संवत् १०९ (१२९) — — पञ्चमी।

LXXVII

लागनटोले विष्णुमन्दिर शिलालेख

संवत् ११९

यह काले रंग का शिलालेख लागनटोले काठमाण्डु में स्थित विष्णु भगवान के आधुनिक निर्मित मन्दिर की दीवार से लगा हुआ है। शिलालेख का ऊपरी भाग एक बैल की आकृति से अलङ्कृत है।

१. ओ३म् स्वस्ति श्रीमत्कैलासकूटभवनाल्लक्ष्मीतलालम्बनकल्प-पादपो
२. भगवत् पशुपति भट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातो परम भट्टार—
३. क महाराजाधिराज श्रीशिवदेवः कुशली वैद्यग्रामके प्रधानाग्रेसरान् सकल
४. निवासिकुटुम्बिनो यथार्हङ् कुशलम् अभिधाय समाज्ञापयति विदित-मस्तु भव
५. ताम् यथायङ्ग्राभः शरीरकोट्टमर्यादो[पपन्न] श्चाटभटानाम् अप्रवे-श्येनाचन्द्रार्का—
६. वनिकालिको भूमिच्छिद्रन्यायेनाग्रहारतया मातापित्रोरात्मनश्च विपुल-पु —
७. ण्योपचयहेतोरस्माभिः स्वकारितश्रीशिवदेश्वरम् भट्टारकन्नि-मित्तीकृत्य
८. तद्देवकुलखण्डस्फुटित संस्कारकारणाय वशपाशुपताचार्येभ्यः प्रति-
९. पादितः तदेवमवगतार्थैर्भवद्भिः समुचितदेयभागभोगकरहिरण्यादि-
१०. सर्वप्रत्यायानेषामुपय [च्छ] द्भिरेभिरेवानुपाल्यमानैरकुतोभयैः स्वक—
११. र्मानुविधायिभिरितिकर्त्तव्यताव्यापारेषु च सर्वेष्वमीषामाज्ञाश्रवण-विधे—
१२. यैर्भूत्वा सुखमत्र स्थातव्यम् सीमा चास्य पूर्वेण वृहन्मार्गो दक्षिण-पूर्वतश्च

१३. शिवी प्रणाली तामेव चानुसृत्य स्वल्पः पन्था दक्षिणतश्च तेङ्खूः पश्चिमे-

१४. नापि तेङ्खूः उत्तरस्यामपि चिशिमण्डा (नाम) तिलमकः उत्तरपूर्व-तश्चापि सहस्र-

१५. मण्डलभूमिस्ततो यावत् स एव वृहन्मार्ग इत्येवम् सीमान्तर्भूते-ऽस्मिन्नग्र—

१६. हारेभोट्टविष्टिहेतोः प्रतिवर्षम् भारिकजनाः पञ्च ५ व्यवसायिभिः ग्र—

१७. हीतव्याः ये त्वेतामाज्ञाम् व्यतिक्रम्यान्यथा कुर्युः कारयेयुर् वा तेऽस्माभि-र्भृशन्न

१८. क्षम्यन्ते ये वास्मदूर्ध्वम् भूभुजो भ [विष्यन्ति तेऽपि प] रस्वहितापेक्षया पूर्वराज—

१९. कृतोऽयम् धर्म्मसेतुरिति तद [वगत्य] — — — रवा — — — संरक्षणी

२०. यस्तथा चोक्तम्[१] पूर्वदत्ताम् द्विजातिभ्यो यत्नाद् रक्ष युधिष्ठि[र] (।) महीम्महीम

२१. ताम् श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम् ।। षष्ठिम् वर्षसहस्राणि स्वर्गे मो-[दति भू]

२२. मिदः । आक्षेप्ता अनुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् ।। इति स्वयमा—

२३. ज्ञा दूतकश्चात्र राजपुत्र जयदेवः संवत् १०० १०९ फाल्गुन शुक्ल दिवा दशम्याम् ।

ओऽम् श्रीमत् कैलाशकूट भवन से सबका कल्याण हो। सम्पूर्ण लक्ष्मी (ऐश्वर्य) के आश्रय कल्पतरु के समान भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण-कृपा पात्र, बप्प के चरणों का ध्यान करने वाले परम भट्टारक महाराजाधि-राज श्री शिवदेव कुशलता पूर्वक वैद्यग्राम में सभी कुटुम्बीजनों एवं प्रधानों के सम्मुख यथायोग्य कुशलता पूछकर आज्ञा प्रदान करते हैं कि आप सबको ज्ञात हो कि इस ग्राम को प्राकृतिक दृष्टि से दुर्गीय मर्यादाओं से सम्पन्न एवं सूर्य-चन्द्र-पृथ्वी की स्थिति तक चिरकाल के लिए चाटभटों के प्रवेश के लिए भूमि छिद्र न्याय के आधार पर निषिद्ध घोषित कर दिया गया है। अपने मातापिता एवं स्वयं की विपुल पुण्य वृद्धि के संचय के लिये हमारे द्वारा

निर्मित शिवदेवेश्वर मन्दिर के जीर्णोद्धार की दृष्टि से अग्रहार के रूप में वश पाशुपताचार्यों के लिये दे दिया गया है। इस प्रकार जानकर आप लोगों को कर के रूप में उत्पादन भाग, सम्पत्ति-कर, स्वर्ण-मुद्रा आदि बिश्वासपूर्वक देते हुए पूर्ण सम्मान के साथ आज्ञाओं का पालन करते हुये निर्भयपूर्वक अपने कर्म-विधान एवं कर्त्तव्यों के विषयों में नियमों एवं आज्ञाओं को सुनकर कर्त्तव्य-पालन करते हुये सुखपूर्नक यहाँ रहना चाहिए। इस गाँव की सीमाएँ निम्नलिखित हैं—पूर्व में वृहद् मार्ग, दक्षिण-पूर्व में शिवि नाली तथा उसका अनुसरण करते हुये छोटा सा तंग मार्ग, दक्षिण में तेङ्खू, पश्चिम में भी तेङ्खू, उत्त र में भी चिशिमण्डा नामक नहर, उत्तरपूर्व में भी सहस्र मण्डल भूमि, वहाँ से जहाँ तक बृहद् मार्ग है वहाँ तक इस प्रकार अग्रहार की सीमा है।

इस सीमा के अन्तर्गत अग्रहार में व्यापारी लोग भूटान एवं तिब्बत में व्यापार हेतु पाँच कुलियों को बेगार श्रम के लिये (विष्टि) ले सकते हैं। जो इस आज्ञा का अतिक्रमण कर अन्यथा करेंगे या करायेंगे वे निश्चय ही हमारे द्वारा क्षम्य नहीं होंगे। जो हमारे पश्चात् राजागण होंगे, उनको भी इस आज्ञा का अपने हित की अपेक्षा करते हुये तथा पूर्वजों के द्वारा निर्मित धर्म-सेतु समझकर पालन एवं संरक्षण करेंगै और कहा भी गया है—हे भूपतियों में श्रेष्ठ भूपति युधिष्ठिर ! तू पूर्वराजाओं द्वारा दान में ब्राह्मणों को प्रदत्त पृथ्वी का यत्नपूर्वक संरक्षण कर। उसका अनुपालन करना दान करने से अधिक श्रेयस्कर है। भूमिदान् करने वाला साठ हजार वर्षों तक स्वर्ग में आनन्दपूर्वक उपभोग करता है किन्तु उसका अपहर्त्ता एवं अवहेलना करने वाला उतने ही वर्ष नरक में वास करता है। यह स्वयं मेरी आज्ञा है। यहाँ दूतक हैं राजपुत्र जयदेव। संवत् ११९ फाल्गुन शुक्ल दिवा दशमी।

LXXVIII

सोनागूंठी निषेधाज्ञा शिलालेख

सम्वत् १२५ (१२५+५८८=७१३ ई०)

४७ सें० मी० चौड़ा यह शिलालेख सोनागूंठी नामक ग्राम भृङ्गारेश्वर नामक मन्दिर के पश्चिमी द्वार के बाईं ओर स्थित है। शिला का ऊपरी भाग पुष्पों की आकृतियों से अलङ्कृत है।

१. [स्वस्ति कैलास]कूटभवनाद् आ — — — — — — — —
विहित गुण — — स्थि — लिच्छविकुल—

२. केतुर्भगवत् पशुपति भट्टारकपादानुगृहीतो बप्पपादानुध्यातः परम-
भट्टारक—

३. महाराजाधिराजश्रीशिवदेवः [कुशली] — — — — वर्त्तिन्यः
समधिकरणा — — — — —

४. प्रसादोपजीविन्यास् च यथा हि — — — — — — समाज्ञापयति
विदितं भवतु भवतां

५. — — — — — — — अपरिमितजलाशयाप्रवेशतया — इ — —
यि — — याञ्चालिक — —

६. — — — — — — — उपजीवेन विज्ञापितैरस्माभिश्च प्रसादानु-
र्वात्तिभिर्धर्माधिकार[तया]

७. — — — — — — — ताय . श्रो ब्राह्मणपुरस्सराणांश्च पाञ्चा-
लिकानाम् प्रज्ञाम् — — — नि —

८. मित्ताज्ञा — क्रम — — ध्याय भृङ्गारेश्वर देवकुलस्यितये — —
— — सितिलमक — — — — — — — — — — प्र —ते .
यस्मादिति तद्देवकुल — — — — — आगुलस्यादिग्राम

१०. — — — — — — — — — — — — यू — — — — ही
— — लीतिलमकस् स — — — — — तालप—

११. — — — — — — — — — — — — भृङ्गारेश्वर पाञ्चा
— — — — — — — — — — — — —

१२. — — —म् उपभोगत्वाद् अस्माभि — — — ण्य — — —
— — — — — — — — — — — — — —

१३. — — — — — — — — — — — — — — — — —
वंस्य — — — — — — — — — — — — — — — —
१४. — — — — — — — — — — इ — व्यस्तेऽपि — —
— — — — — — — — — — — — — —
१५ — — — — — — — — द्वि — — —राणाम् — —
— — — — — — — — — — — — — — —
१६. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— — पि — कृ — — — — — —
१७. — — — — — — — — — — — — — — — प्र —
म — — नि — — — — — — — — — — —
१८. — — — — — प — — — — — यदण्डेन य — —
शिव — त — — — मि — — — — — — —
१९. — — — — — — — — — कर्त्तव्यः कारयितव्यो वा
ये त्विमाम् आज्ञाम् — — — —
२०. — — — — — — — — — — — — — मर्षयितव्या
— — यु — — — — — — — —
२१. — — — पुरातनराज — इ — ह — — इ — — य् . य .
इ . इस्तम् — — — —
२२. — — — — — — — — — — — — — — श्रूयते
बहुभिर्वसुधा[1] [दत्ता राजभिः]
२३. — सगरादिभिः (।)
[यस्य यस्य यदा भूमि] स्तस्य
तस्य तदा फलम् (।।) पूर्वदत्ताम्
२४. द्विजातिभ्यो [यत्नात् रक्ष यु] धिष्ठिर (।)
महीम् महीभुजाम् श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम् ।।
२५. — — — स्वयमाज्ञा दूतकश्चात्र राजपुत्रजयदेवः
२६. संवत् १००२०५ भाद्रपदशुक्ल

कैलासकूट भवन से सबका कल्याण हो। नृपतिहित गुणों से युक्त लिच्छविकुल के केतु भगवत् पशुपति भट्टारक की चरण कृपा प्राप्त, बप्प के

---

१. श्लोक छन्द

चरणों का ध्यान करने वाले परम भट्टारक महाराजाधिराज श्रीशिवदेव कुशलतापूर्वक वर्तमान समधिकरण के अधिकारियों, प्रसादोपजीवियों की यथायोग्य कुशलता पूछकर सूचित करते हैं कि आप सबको विदित हो कि विशाल एवं गहरे जलाशय में प्रवेश न किया जाय । पाञ्चालिक — — — उपजीव के द्वारा, विज्ञपित करने वाले हमारे द्वारा, और हमारे कृपापात्रों द्वारा पाञ्चालिकों तथा ब्राह्मणों के सम्मुख धर्माधिकार (आज्ञा) का ध्यान करके — — — उसके निमित्त आज्ञा — — — क्रमानुसार — — — पूजा करके भृङ्गेश्वर मन्दिर की चिरस्थिति के लिये — — यह जल-नहर — —जिससे इस प्रकार वही देवकुल (मन्दिर) — — — आगुल के आरम्भ में ग्राम — — — नहर भृङ्गेश्वर के पाञ्चालिकों के उपभोग करने के लिये — — हमारे द्वारा — — जो दण्ड के द्वारा — — जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेगा या करायेगा वह हमारे द्वारा सहन नहीं होगा । पुरातन राजाओं की भाँति इस आज्ञा का पालन किया जाना चाहिये । — — — सुना जाता है — — सगरादि राजाओं के द्वारा वसुधा दान में दी गई । जिस जिसने जब भूमि दान में दी उस उसको तब फल मिला । हे राजाओं में श्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर तू पूर्वराजाओं द्वारा ब्राह्मणों को दी गई पृथ्वी का यत्नपूर्वक संरक्षण कर । उसका अनुपालन करना दान देने से भी अधिक श्रेष्ठ है । यह मेरी स्वयं की आज्ञा हैं यहाँ दूतक है राजपुत्र जयदेव संवत् १२५ भाद्रपद शुक्ल ।

LXXIX

कोट्टमर्यादा शिलालेख

संवत् १३७ (१३७+५८८=७२५ ई०)

यह लगभग ५५ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख चयासल टोले, पाटन नामक स्थान पर एक प्राचीन जल-कूप में स्थित है।

१. — — — — — — — — — —दक्षिणेन — — — — — तंवाटिका[1] पा — — — — — — —

२. —

३. — — — — — — — — [द]क्षिरण — — — — — — — — — सहस्र — — दि। — — — — — न म

४. —स्तन्— — — — — न० ई० — —र्य यावच् — — — — — — — — पश्चिमपानीय — — इ[2]

५. वंमनुसृत्य — इ[3] — — — पिर्ण पश्चिमे — — ण्ण — क्ष् — — ण[4] किञ्चिद् दक्षिणेन पश्चिमे शङ्कर

६. — — टवैशिर — पश्चिमम् . तदुत्तरङ् गत्वा अपौ — — — — ल — यि — — नद (नव) गृहमण्डलकि—

७. — — चोत्तरङ् गत्वा महा — — — पश्चिमम् गत्वा शिला-संक्रमस्य पश्चिमेन रेटा (नाम) पाञ्चाली

८. — — च पूर्वोत्तरम् गत्वा लोप्रिम् (नाम) पाञ्चालिवाटिकाया पश्चिमोत्तरम् गत्वा दोला शिखर —अइ —

९. — — पूर्वेणोत्तरङ् गत्वा पुनु[5] (नाम) पाञ्चालिक क्षेत्रस्य च पश्चिमोत्तरम् गत्वा लोप्रिङ् पाञ्चालिक क्षेत्र—

---

१. L. सहस्र (वा) टिक

२. L. ... न ... र्य यावच्चङ्क कस्रपच्चिम

३. L, अप्रसृत्यात्र

४. L. पिकापक्किमे सा ... मा

५. L. पुङ्क

१०. स्य पश्चिमोत्तरं गत्वा नारायणदेवकुल दशमी गौष्ठिक[६] क्षेत्रस्याप्यु-त्तरम् गत्वा

११. लोप्रिम् ग्रामेन्द्र गौष्ठिकक्षेत्रस्योत्तरम् गत्वा पानीय[७] क्षेत्रस्य चोत्तरम् गत्वा ततो यावत् — —

१२. पुष्पवाटिकाविहारक्षेत्रस्य सीमावधिर इत्येतत्समीपे — — — — — — — —[८]

१३. लप्रासादमण्डलान्य — — — — कोट्टमर्यादास्माभिः प्रसादक — — — — — पजी [वि]—[९]

१४. द्भिरस्मत्पादप्रसादप्रतिबन्धसमर्थैरन्यैर्वा न कैश्चिदयम् प्रसादो व्यति-क्रमणीयो— —[१०]

१५. — — नामस्मदीयामाज्ञामेवोल्लङ्घ्यान्यथा कुर्वीत — कारयेयुर्वा तेऽस्माभिर्न — — —

१६. — — — — — नराधिपतिभिः पूर्वमहीपालकृत प्रसादस्माभिरि-भिर्लोक — — —

१७. — — —तितराम् न मर्षणीयाः ।
स्वयमाज्ञा दूतकोऽप्यत्र भट्टारक श्री विजयदेवः सं-

१८. वत् १००३०७ ज्येष्ठशुक्लपञ्चम्याम्

दक्षिण से — — वाड़ी — — सहस्र — — जहाँ तक पश्चिमी ज़लीय मार्ग का अनुसरण करके — — पश्चिम में — — कुछ दक्षिण से पश्चिम में शङ्कर — — पश्चिम में — — उसके उत्तर में जाकर नवग्रह मण्डल — — उत्तर की ओर जाकर महापथ, पश्चिम में जाकर प्रस्तर के

---

६. L. गोष्ठिक

७. L. मानीय

८. इत्यनर. ए पच्छिमेनोत्तर — — — म ॥

९. L. omits पजीवि

१०. L. चे

पुल के पश्चिम में रेटा पाञ्चाली — — — और पूर्वोत्तर में जाकर, लोप्रिम् के पाञ्चाली वाटिका के पश्चिमोत्तर की ओर जाकर दोला नामक पर्वत का शिखर — — पूर्वोत्तर की ओर जाकर फिर पुनु नामक पाञ्चालिक क्षेत्र के पश्चिमोत्तर में जाकर लोप्रिङ् नामक ग्राम में पाञ्चालिक नारायण तथा दशमी गौष्ठिक क्षेत्र के भी उत्तर में जाकर, लोप्रिम् नामक ग्राम में इन्द्रगौष्ठिक क्षेत्र के भी उत्तर में जाकर जल-क्षेत्र, जल-क्षेत्र के उत्तर में जाकर तत्पश्चात् जहाँ तक पुष्पवाटिका विहार क्षेत्र की सीमावधि है, इस प्रकार यह सीमा का क्षेत्र है। इस प्रासाद मण्डल को हमने दुर्गीय मर्यादाओं से सम्पन्न घोषित कर दिया है। इस प्रकार की हमारे द्वारा कृपा की गई है। — — — हमारे उपजीवियों के द्वारा, हमारी चरण-कृपा से समर्थ बने हुए अन्यों के द्वारा अथवा अन्य किन्हीं के द्वारा इस कृपा का अतिक्रमण नहीं होना चाहिए। जो इस आज्ञा का उल्लङ्घन कर अन्यथा करेंगे या करायेंगे वे हमारे द्वारा क्षम्य नहीं होंगे।

पूर्वराज कृत इस आज्ञा का अतिक्रमण भावी राजागण भी सहन नहीं करेंगे और इस लोक में हमें भी इसका सहन नहीं होगा। यह हमारी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक है भट्टारक श्री विजयदेव। संवत् १३७ ज्येष्ठ-शुक्ल पञ्चमी।

LXXX

मीनानाथ पाटन मर्यादाभिलेख

संवत् १४५ (१४५+५८८=७३३ ई०)

लगभग ४१ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख पाटन में मीनानाथ के मन्दिर के निकट स्थित जलप्रवाहिका के समीप स्थित है।

१. — — — — — — — — — एद —

२. मपूर्वो — ज्य — — — — — — — — — —[1]

३ — — — — — — स्त्रस्वान्तरेप्यमुस् जानद्भिरस्माकं अन्यथा — — — — — — — — — — —निरप्य — — — — — — —

४. — — — — — रूयम्पल — — दत्तम् आ — प्रसादवि — — — — — — — — — — शासु[2] — — — — — — —

५. — — — — — — — शा — — यूप ग्रामे — — लिम — आमाम् प्रतिपादितस्त — — — — — — — — — — आकुर्पासद — — —[3]

६. — — — — —त्पोरशनस्तास्यान्तरे चागूतवनेत्पत्तिका चात्पाट[4] — — — — — — — — — — — — — — — — —

७. — — — — विधमिमम् अपराधम्[5] कृत्वा प्रपलायितः कोट्ट-

---

१. Bh. प्रथम दो पंक्तियों को नहीं पढ़ते

२. Bh. I प्यमुपलपनम् च कुमार्याप्रसादम् वि — — — — सास ॥

३. Bh. I. यूपग्रामे यूचि — — — मा प्रतिपादित ॥

४. Bh. I. ङ्गत्योरगनस्तस्यान्तरे चागूतग्वनेत्पत्तिका चाघाटा ॥

५. Bh. I. पिध — — — मपराधम्

स्थानम् इ[6] — — — — — — — — — — — — —

८. — — — निवेद्य यथापूर्वमनुष्ठातव्यम् तिलमकसमीपे च — — — — — — — — — क[7] — — — —

९. — — — रात्रौ दिवा चा इ — — कैश्चित्[8] तत्परि — पंथिभिरन्यैर्वा न विरोधनीयस्तत्विरोधक — — — —

१०. — — प्राप्तिरेव गृहीत्वा[9] राजकुलमुपनेतव्याः तिलमकसम्वद्धम्[10] कार्यञ्च यदुत्पद्यते [तदन्तरास]

११. [ने] नैव[11] विचार्य निर्णेतव्यम् तिलमकश्च सप्तधा विभज्य परिभोक्तव्यो जीग्वल् पाञ्चालिकैरे [को भा]

१२. गः — ह्यजाज्ञा[12] पाञ्चालिकैरे [को भागः] तेग्वलपाञ्चालिकैरेको भागो यूग्वल् पाञ्चालिकैरत्र[यो भागा]

१३. — ल्ल[13] पाञ्चालिकैस्त्वेको भाग इत्येवम् अवगतार्थैर्भवद्भिर् अनुमन्तव्यमेतत्शासनाराध[14] — — [म] —

१४. नागपि न लङ्घनीयो येत्वेताम् अस्मदीयामाज्ञाम् अतिक्रम्यान्यथा कुर्युः कारयेयु[र्वा तेस्मा]

१५. भिर्द्दढम् न क्षम्यन्ते। ये चास्मदूर्ध्वमवनिपतयो भवितारस्तैरपि पूर्वराजस्थितिपरिपाल [न][16]

---

६. Bh. I. 'इ' को नहीं पढ़ते

७. Bh. I. 'क' को नहीं पढ़ते

८. Bh. I. त्रौ दिवा च — — — कैश्चित् ॥

९. Bh. I. [द्भिरेवम्] गृहीत्वा ॥

१०. Bh. I. 'सम्बद्धम्' को नहीं पढ़ते।

११. Bh. I. यदुत्पद्यते — — — — [ते] नेव ॥

१२. Bh. I. 'ह्यासाज्ञा' पढ़ते हैं।

१३. Bh. I. 'ल्ल' नहीं पढ़ते

१४. Bh. I. शासन

१५. Bh. I. कारयेयु [र्वा] [स्मा] भिर् ॥

१६. Bh. I. परिपाल [ने] ॥

१६. व्यवहितमनोभिर्भाव्यम् तथा चाह ।[१७]
ये[१८] प्राक्तनावनिभुजाम् जगतीहितानाम् धर्म्याम् स्थितिम् स्थितिकृता-
मनुपालनेयुर् । लक्ष्म्या समेत्य सुचिरन्निजभार्ययेव[१९]
प्रेत्यापि वासवसमा* दिवि ते वसेयुर् ॥
इति स्वयमाज्ञा[२०]

१८. दूतकश्चात्र युवराज श्री विजयदेवः । संवत् १००४०५ पौषशुक्लदिवा तृतीयस्याम्[२१] ।

— — अपने अन्तर में भी हमको जानते हुये भी अन्यथा — — भी — — रूयम्पल — — दिया — — कृपा — — ऽ — कार्यान्वित करने के लिए स्वीकृति को पुनर्नवीकरण किया गया — — — यूपग्राम, एक नहर — — के द्वारा बनाई गई — — कुर्पासद — — — और त्पोरशन के बीच में, अगूतवन में तथा उपत्यिका में — — प्रकार के अपराधों को करके भागे हुए अपराधी को दुर्गस्थान में पहुंचा देना चाहिए। — — — निवेदित करके पूर्वानुसार - अनुष्ठान करना चाहिये और जल-नहर के समीप — और दिनरात — — किसी या उसी के ही अनुयायी के द्वारा विरोध नहीं किया जाना चाहिए। जो इसका विरोधी है उसे पकड़कर राजमहल तक पहुँचाया जाना चाहिये। नहर से सम्बन्धित कोई कार्य उत्पन्न होता हैं तो वह अन्तरासन के द्वारा ही विचारकर निर्णीत किया जायेगा। नहर के जल को सात भागों में विभाजित कर उपभोग्य होना चाहिये— जीग्वल के पाञ्चालिकों के द्वारा एक भाग, ह्यजाज्ञा पाञ्चालिकों के द्वारा एक भाग, तेग्वल के पाञ्चालिकों के द्वारा एक भाग, यूग्वल के पाञ्चालिकों के द्वारा तीन भाग, मल्ल पाञ्चालिकों के द्वारा एक भाग— इस प्रकार समझना चाहिये। इस प्रकार जानने वालों के द्वारा, आप लोगों के द्वारा इस आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं अपितु मान्य होना चाहिये। जो हमारी इस

---

१७. Bh. I. [य] था चाह ॥
१८. वसन्ततिलका छन्द
१९. Bh. I. भार्ययैव ।
२०: Bh. I. [शुभमस्तु] ॥
२१. Bh. I. तृतीयायाम्
(क) उपमालङ्कार

आज्ञा का अतिक्रमण कर अन्यथा करेंगे या करायेंगे वे दृढ़तापूर्वक क्षम्य नहीं होंगे। जो हमारे पश्चात् होने वाले भूपति हैं उनको भी पूर्व राज स्थिति के परिपालन में संलग्न मनों वाला होना चाहिये। वैसा कहा भी है—

'जो संसार के हितैषी पूर्व राजाओं के द्वारा स्थापित धर्म की स्थिति को स्थिर करके पालन करते हैं वे स्वर्ग में इन्द्र के समान अपनी भार्या जैसी लक्ष्मी के साथ चिरकाल तक निवास करते हैं। यह मेरी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक है युवराज श्री विजयदेव। संवत् १४५ पौष शुक्ल दिवा तृतीया।

LXXXI

पशुपति वंश-प्रशस्ति-शिलालेख

संवत् १५९ (१५९+५८८=७४७ ई०)

यह विशालकाय १०९ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख पशुपति के नांदिया मन्दिर के पीछे स्थित है। शिला का ऊपरी भाग कमल पुष्प एवं कलियों की आकृतियों से अलङ्कृत है। इस शिलालेख में १, ३, ५, १९, २०, २२, २३, ३० तथा ३२वें पद्यांश स्रग्धरा छन्द में हैं। २, ४, ६, ७, १२-१५, १७, २१, २५-२९, ३३, ३४वें श्लोक शार्दूलविक्रीडित, ८, ११, १६वें पद्यांश वसन्त-तिलका छन्द में ९, २४, ३१वें पद्यांश उपजाति छन्द में तथा १०, १८वें पद्यांश श्लोक छन्द में उत्कीर्णित हैं।

१. ओम्[1] त्र्यक्षस् त्र्य्ययव्ययात्मा त्रिसमयसदृषस्त्रितप्रतीतस्त्रिलोकी-
त्रातात्रेतादि हेतुस्त्रिगुणमयतया त्र्यादिभिर्व्वर्ण्णितोऽलम्।
त्रिस्रोतोधौतमूर्द्धा त्रिपुरजिदजितो निर्विबन्धत्रिवर्ग्गो यस्यो[तुङ्ग]—

---

१. रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमःस्पृशे।
अजाय सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः ॥१॥
—कादम्बरी मङ्गलाचरणम्

अर्थात् सृष्टि के जन्मकाल में रजोगुण सम्पन्न ब्रह्मा, पालनकाल में सत्त्वगुण सम्पन्न विष्णु तथा विनाशकाल में तमोगुण सम्पन्न शिव के रूप में व्यक्त होने वाले—अतः उसके जन्म, पालन तथा विनाश के एकमात्र हेतु उस निर्विकार परब्रह्म परमेश्वर को नमस्कार है जो इस रूपत्रयी की तन्मयी समष्टि तथा गुणत्रयी का घनोभूत संस्थान है।

२. स्त्रिशूलस्त्रिदशपतिनुतस् त्य ⏑– –– त्रोटनोन:[2] ।।१।।
राजद्रावणमूर्धपंक्तिशिखरव्यासक्तचूडामणिश्रेणीसङ्गतिनिश्चलात्मक-
तया लङ्कां पुनानाः पुरीम् । –– –– द्वन्ध्यपराक्रमा ⏑– ⏑–

३. ⏑– –– –– –– ⏑– –– सङ्गता: श्रीबाणासुरशेखरा: पशुपते:
पादार्णव: पान्तु व:[3] ।।२।।
सूर्यात् ब्रह्मप्रपौत्रान् मनुरथभगवान्जन्म लेभे ततोऽभूदिक्ष्वाकुश्चक्र-
र्वात्तनृपतिरपि ततः श्रीविकुक्षिर्बभूव ।[4]

४. जातस्तस्मात् कुकुत्स्थ:[5] पृथुरिति विदितो भूमिपः सार्व्वभौमोऽभूतो
ऽस्माद् विष्वगश्व: प्रबलनिजबलव्याप्तविश्वान्तराल: ।।३।।
राजाष्टोत्तरविंषतिक्षितिभुजस्तस्मात् व्यतीत्य क्रमात् सम्भूत: सगर:
पति:[6] ⏑–

५. ⏑– ⏑– –– –– सागरायाः क्षितेः ।
जातोऽस्माद् असमञ्जसो नरपतिस्तस्मादभूत् अंशुमान् स श्रीन्तम्
अजीजनन् नरवरो भूपन् दिलीपाह्वयम् ।।४।।
भेजे जन्म ततो भगीरथ इति ख्यातो नृपोऽत्रान्तरे भूपाला ⏑– ⏑–
–– ⏑–

---

३. (क) जयन्ति बाणासुरमौलिलालिता दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः ।
सुरासुराधीशशिखान्तशायिनो भवच्छिदस्त्र्यम्बकपादपांसवः ।।
—कादम्बरी—मङ्गलाचरणम् ।२।।

अर्थात् देवताओं तथा दैत्यों के अधिपतिमों के सिर पर शयन करने वाली तथा सांसारिक बन्धनों को काटने में पटु त्रिनेत्रधारी भगवान् शङ्कर के चरणों की उस धूलि की जय हो, जिसे बाणासुर ने, दस शिर वाले रावण की चूड़ामणियों ने भक्ति से विह्वल होकर चूमा था ।

(ख) परिणाम अलङ्कार, 'श्रेणीसङ्गति' साधारण धर्म होने से दीपकालङ्कार है ।

४. Bh. I. नुत: — — — तापनोऽभूत्

५. योगी नरहरिनाथ के अनुसार जातस्तस्मात् ककुस्थस् त्रिभुवनविदितो
Bh. जात – – – – – – – विदितो

६. छन्द में 'ति' के स्थान पर 'ती' होना चाहिये ।

६. = ⏑ ⏑ रघुर्जातो रघोरप्यजः[४] ।
श्रीमत्तुङ्गरथस्ततो दशरथः पुत्रैश्च पौत्रैस् समम् राज्ञोऽष्टाव् अपरान्
विहाय परतः श्रीमान् अभूल्लिच्छविः ।।५।।
अस्त्येव क्षितिमण्डलैकतिलको*लोकप्रतीतो महा = = =

७. ⏑ ⏑ = प्रभावमहताम् मान्यः सुराणाम् अपि । स्वच्छं लिच्छ-
विनाम् बिभ्रदपरो वंशः प्रवृत्तोदयः श्रीमच्चन्द्रकलाकलापधवलो गङ्गा-
प्रवाहोपमः ।।६।।**
तस्माल्लिच्छवितः परेण नृपतीन् हित्वा प

८. = = ⏑ रं श्रीमान् पुष्पशराकृतिः क्षितिपतिर्ज्जातः सुपुष्प-
स्ततः ।
सार्द्धम्[५] भूपतिभिस्त्रिभिः क्षितिभृताम् त्यक्त्वान्तरे विंशतिम् ख्यातः
श्रीजयदेवनामनृपतिः प्रादुर्बभूवापरः ।।७।।
एकादश क्षिति—

९. पतीञ्च परञ्च भूपं हित्वान्तरे[६] विजयिनो जयदेव नाम्नः ।
श्रीमान् बभूव वृषदेव इतिप्रतीतो राजोत्तमः सुगतशासनपक्षपाती ।।८।।
अभूत् ततः शङ्करदेवनामा श्रीधर्म्मदेवोऽप्युदपादि तस्मात् ।

---

*१. दक्षिणाशा-वधू-मुख-विशेषकस्य — — ।
—कादम्बरी-कथामुखे अगस्त्याश्रमवर्णनम् पृ० ६२
चो० सं० सी० वा० १, १९७१
अर्थात् जो (अगस्त्य) दक्षिणादिशा रूपी वधू के मुख के तिलक थे ।

*२. केन कारणेन तन्वीयं हर-मुकुट चन्द्रलेखेव गङ्गास्रोतसा न विभूषिता
हारेण वरारोहे ! शिरोधरा ? काद० कथामुखे ।
तारापीड विलासवती से कहता है—
'गङ्गा के स्रोत में महादेव के मुकुट की चन्द्रकला के समान तुमने इस
कण्ठदेश में मुक्ताहार से शृङ्गार क्यों नहीं किया ?

४. योगी नरहरिनाथः-(भूपालाच्चदिलीपतो रघुर जातो) रघोरप्यजः ।
Bh. : – भूपाला – – – – – – – – – –[जातो] ।।

५. साकम् ।।

६. Bh. I. एकादशाक्षिति – – – – – – – – – [त्य] क्त्वान्तरे ।।

१०. श्रीमानदेवो नृपतिस्ततोऽभूत् ततो महीदेव इति प्रसिद्धः ॥९॥
वसन्त इव लोकस्य कान्तः शान्तारिविग्रहः ।
आसीत् वसन्तदेवोऽस्मात् दान्तसामन्तवन्दितः ॥१०॥
अस्यान्तरेऽप्युदयदेव इति क्षितीशाज्जातस्त्रयो—

११. दश इतश्च[७] नरेन्द्रदेवः ।
मानोन्नतो नतसमस्तनरेन्द्रमौलिमालारजोनिकरपांशुलपादपीठः*॥११॥
दाता सद्द्रविणस्य भूरिविभवो जेता द्विषत्संहतेः कर्त्ता बान्धवतो·
षणस्य

१२. ⏑ ⏑ वत्[८] पाता प्रजानामलम् ।
हर्त्ता संश्रितसाधुवर्ग्गविपदाम्
सत्यस्य वक्ता ततो जातः श्रीशिवदेव इत्यभिमतो लोकस्य भर्त्ता भुवः
॥१२॥

देवी बाहुबलाढ्यमौखरिकुला श्रीवर्म—

---

*१. (क)
नमामि भर्वोश्चरणाम्बुजद्वयं सशेखरैर्मौखारिभिः ।
समस्तसामन्तकिरीटवेदिका विटङ्कपीठोल्लुठितारुणाङ्गुलि ॥
—काद०—मङ्गलाचरणम् ॥४॥

(ख) सुरासुरमुकुटमणिशिलाशयनदुर्ललितपादपङ्केरुहस्य,—
हर्षचरितम् १

अर्थात् उनके (दधीचि) चरण-कमल सुरासुरों की मुकुट-मणियों पर शयन के शौकीन हैं ।

(ग) जठरानल-जीर्ण-वातापिदानवस्य सुरासुरमुकुटमकरपत्रकोटि-
चुम्बित चरण रजसो ।
—काद० कथामुखे अगस्त्याश्रमवर्णनम् पृ० ६२
चौ० सं० सी० वा० १, १९७१

अर्थात् जिन्होंने पेट की आग में वातापि दानव को भी पचा डाला, देवता और राक्षस दोनों ही अपने मुकुटों में बने हुए मत्स्याभूषणों की पत्रलताओं से जिनके चरणों की धूल झाड़ा करते थे ।

७. **Bh. I.** जातस् और ततस् = जातस् और इतस् से स्थान पर

८. Bh. I. यतवत्

१३. चूडामणिख्यातिह्लेपितवैरिभूपतिगणश्रीभोगवर्म्मोद्भवा
दौहित्री मगधाधिपस्य महतः श्र्यादित्यसेनस्य या व्यूढा श्रीरिव तेन सा क्षितिभुजा
श्री वत्सदेव्यादरात् ।।१३।।

१४. तस्मात् भूमिभुजोऽप्यजायत जितारातेरजय्यः परैराजा[9] श्रीजयदेव इत्यवगतः श्रीवत्सदेव्यात्मजः ।
त्यागी मानधनो विशालनयनः सौजन्यरत्नाकरो विद्वान् == ~ चिराश्रयो[10]

१५. गुणवताम् पीनोरुवक्षःस्थलः ।।१४।।
माद्यद्दन्तिसमूहदन्तमुसलक्षुण्णारिभूभृच्छिरो* गौडोड्रादिकलिङ्गकोशलपति श्रीहर्षदेवात्मजा । देवी राज्यमती कुलोचितगुणैर्युक्ताप्रभूता

१६. कुलैर्येनोढ़ा भगदत्तराजकुलजा लक्ष्मीरिव क्ष्माभुजा ।।१५।।
*अङ्गश्रिया परिगतो जितकामरूपः काञ्चीगुणाढ्यवनिताभिरुपास्यमानः ।
कुर्व्वन् सुराष्ट्रपरिपालनकार्यचिन्ताम् यः सार्व्वं–

१७. भौमचरितम् प्रकटीकरोति ।।१६।।
राज्यं प्राज्यसुखोर्ज्जितद्विजाननप्रत्यर्प्पिताज्याहुतिज्योतिर्ज्जातशिखा विजृम्भनजिताशेषप्रजापद्रुजम् । बिभ्रत्कण्टकवर्जितन्निजभुजावष्टम्भविस्फूर्ज्जितम्

१८. शूरत्वात् परचक्रकाम इति यो नाम्नापरेणान्वितः ।।१७।।
स श्रीमान् जयदेवाख्यो विशुद्धबृहदन्वयः ।

---

*१. (क) क्वचिदैरावत-दशन-मुसल-खण्डित-कुमुद-षण्डम्,
—काद०—कथामुखे अच्छोदसरोवरवर्णनम् पृ० ३७४,
रूपक अलङ्कार ।
(ख) दुष्टवारणदन्तमुसलम् उन्मूलयति ।
—काद०—कथामुखे कपिञ्जलं प्रति पुण्डरीकोत्तरवर्णनम् पृ० ४७२
काद० चौ० सं० सी० वा० I, १९७१
(ग) उल्लेखालङ्कार

*१. श्लेषालङ्कार

९. Bh. I राज

१०. Bh. I. विद्वा [न् सक्त] चिर ।।

लब्धप्रतापः सम्प्राप्तबहुपुण्यसमुच्चयः ॥१८॥
मूर्त्तीरष्टाभिरष्टौ[२] महयितुमतुलैः

१९. स्वैर्द्दलैरष्टमूर्त्तैः पातालादुत्थितम् किं कमलमभिनवम् पद्मनामस्य-
नाभेः ।*
देवस्यास्यासनायोपगतमिह चतुर्व्वक्त्रसादृश्यमोहात् विस्तीर्ण्णम्
विष्टरम् किं प्रविकसितसिताम्भोजमम्भोजयोनेः ॥१९॥

२०. कीर्णा किम् भूतिरेषा सपदि पशुपतेर्नृत्यतोऽत्र प्रकामम् मौलीन्दोः किं
मयूखाः शरदमभिनवाम् प्राप्य शोभामुपेताः ।
भक्त्या कैलासशैलाद्धिमनिचयरुचः सानवः किम्

२१. समेता दुग्धाब्धेरागतः किं (गलगर) सहजप्रीतिपीयूषराशिः ॥२०॥
राज्ञः ॥२०॥
देवं वन्दितुमुद्यतो द्युतिमतो विद्योतमानद्युतिः किं ज्योत्स्नाधवला फणा-
वलिरियम्* शेषस्य संदृश्यते ।

२२. अन्तर्दूररसातलाश्रितगतेर्द्देवप्रभावश्रिया[११] किं क्षीरस्नपनम् विधातु-
मुदिताः
क्षीरार्ण्णवस्योर्म्मयः ॥२१॥

---

*. शोण नदी के तट पर सरस्वती अवतरित हुई । तत्पश्चात् 'पुलिनपृष्ठ-प्रतिष्ठितसैकतशिवलिङ्गा च भक्त्या परमया पञ्चब्रह्म पुरस्सरां सम्यङ्मुद्राबन्धविहितकरां ध्रुवागीतिगर्भामवनिपवनगगनदहनतपन-तुहिनकिरणयजमानमयीर्मूर्त्तीरष्टावपि ध्यायन्ती सुचिरमष्टपुष्पिका-मदात् ।

—हर्ष० १; पृ० ३५

*. अथ तस्मात्पुष्यभूतेर्द्विजवरस्वेच्छागृहीतकोषो नाभिपद्म इव पुण्डरीके-क्षणात् ।

—हर्ष० ४ पृ० २०१

(क) पद्मनाभस्य, चतुर्वक्त्र, अम्भोजयोनेः' शब्दों के साभिप्राय प्रयुक्त होने से परिकरालङ्कार है ।

* राजलक्ष्मी-निवास-योग्य-पुण्डरीकाकृतिना — — — क्षीरे — फेन धवलिते—वासुकि—फणामण्डलच्छविना ।

—काद० कथामुखे चन्द्रापीडस्य विद्यालयान्निर्गमः

११. Bh. I. श्रियाः के स्थान पर Bh. I. श्रिया [:] ॥

विष्णोः पातालमूले फणिपतिशयनाक्रान्तिलीलासुखस्थादाज्ञाम् प्राप्योत्प-

२३. तन्त्यास् त्रिपुरविजयिनो भक्तितोऽभ्यर्च्चनाय । लक्ष्म्याः संलक्ष्यते प्राक्करतलकलितोत्फुल्ललीलासरोजम् किं वेत्तीत्थम् वितर्क्कास्पदमतिरुचिरम् मुग्धसिद्धाङ्गनानाम् ।।२२।।
नालीनालीकम्[१२] एतन्न खलु समुदितो[१३] राजतो

२४. राजतोऽहम् पद्मापद्मासनाब्ज[१४] कथमनुहरतो मानवा मानवा मे । पृथ्व्याम् पृथ्व्यान्न माहृग्भवति हृतजगन्मानसे मानसे वा भास्वान्भास्वान् विशेषम् जनयति न हि मे वासरो वा सरो वा ।।२३।।

२५. इतीव चामीकरकेसराली सिन्दूररक्तद्युतिदन्तपंक्त्या ।
राजीवराजीम्प्रति जीवलोके सौन्दर्यदर्प्पादिव सप्रहासम् ।।२४।।
एषा भाति कुलाचलैः परिवृता प्रालेयसंसर्गिभिर्व्वेदी मेरुशिलेव काञ्चनमयी देव–

२६. स्य विश्रामभूः ।
शुभ्रैः प्रान्तविकासिपङ्कजदलैरित्याकलय्य स्वयम् रौप्यम् पद्ममचीकरत् पशुपतेः पूजार्थम् अत्युज्ज्वलम् ।।२५।। राज्ञः ।।
यम् स्तौति प्रकटप्रभावमहिमा ब्रह्मा चतुर्भिर्म्मुखैर्यञ्च श्लाघ—

२७. यति प्रणम्य चरणे षड्भिर्मुखैः षण्मुखः । यन्तुष्टाव दशाननोऽपि दशभिर्व्वक्त्रैः स्फुरितकन्धरः सेवाम् यस्य करोति वासुकिरलम् जिह्वासहस्रैः स्तुवन् ।।२६।।
ख्यात्यायः परमेश्वरोऽपि वहते वासो

२८. दिशम् मण्डलम् व्यापी सूक्ष्मतरश्च शङ्करतया ज्ञातोऽपि[१५] संहारकः । एकोऽप्यष्टतनुः सुरासुरगुरुर्व्वीतत्रपो नृत्यति स्थाणुः पूज्यतमोविराजतिगुणैरेवम् विरुद्धैरपि ।।२७।। ।।राज्ञः ।।
तस्येदम् प्रमथा—

---

१२. Bh. I. नालीनालिकम्
१३. Bh. I. समुदितं
१४. Bh. I. पद्मा पद्मासनाब्जे ।।
१५. Bh. I. ख्यातो

२९. धिपस्य विपुलम् ब्रह्माब्जतुल्यम् शुभम् राजद्राजतपङ्कजम् प्रविततं प्रान्तप्रकीर्ण्णैर्द्दलैः ।
पूजार्थम् प्रविधाप्य तत् पशुपतेर्यत्प्रापि पुण्यम् मया भक्त्या तत्प्रतिपाद्य-मातरि पुनः सम्प्राप्नुयान्निर्वृत्तिम् ।।राज्ञः।। ।।२८।।

३०. किम् शम्भोरुपरिस्थितम् ससलिलम् मन्दाकिनीपङ्कजम् स्वर्ग्गोद्भिन्न-नवाम्बुजेक्षणधिया सम्प्राप्तम् अम्भोरुहम् । देवानां किमियं शुभा सुकृतिनां रम्या विमानावली पद्मं किं करुणाकरस्य करतो लोकेश्वर-स्यागतं ।।२९।। ।।राज्ञः।।
स्रोतः स्वर्ग्गापगायाः किमिदमवतरल्लोलकल्लोलरम्यं किं ब्रह्मोत्पत्ति-पद्मं तलकमलवरप्रेक्षणायोपयातम् ।
सम्प्राप्तञ्चन्द्रमौलेरमलनिजशिरश्चन्द्रविम्बम् किमत्रेत्येवम्

३२. यद्वीक्ष्य शङ्काम् वहति भुविजनो विस्मयोत्फुल्लनेत्रः ।।३०।।
श्रीवत्सदेव्याः नृपतेर्जनन्या समम् समन्तात्परिवारपद्मैः । रौप्यम् हर-स्योपरि पुण्डरीकम् तदादरैः कारितमप्युदारम् ।।३।।
पुण्यम् पुत्रेण दत्तम् शशिकरविमलम्

३३ कारयित्वाब्जमुख्यम् प्राप्तं शुभ्रं शुभञ्च स्वयमपि रजतैः पद्मपूजाम् विधाय । सर्व्वम् श्री वत्सदेवी निजकुलधवलाञ्चित्तवृत्तिम् दधाना प्रादात्कल्याणहेतोश्चिरमवनिभुजे स्वामिने स्वर्गताय ।।३२।।

३४. कः [१६]कुर्यात् कुलजः पुमान्निजगुणश्लाघामिति[१७] ह्रीच्छया राज्ञा सत्कविनापि नो विरचितम् काव्यम् स्ववंशाश्रयम् ।
श्लोकान् पञ्च विहाय साधुरचितान् प्राज्ञेन राज्ञा स्वयं स्नेहात् भूभुजि बुद्धकीर्तिरकरोत् पूर्व्वामपूर्व्वाम् इमाम् ।।३३।।
योगक्षेमविधानवन्धुर—

३५. भुजस्संवर्धयन्वान्धवान् स्निह्यत्पुत्रकलत्रभृत्यसहितो लब्धप्रतापो नृपः । दीर्घायुर्न्नितरान् निरामयवपुर्न्नित्यप्रमोदान्तिः पृथ्वीं पालयतु प्रकाम-विभवस्फीतानुरक्तप्रजाम् ।।
संवत् १००५०९ (Bh. I १००५०९)[१८] कार्तिकशुक्लनवम्याम् ।

---

१. सन्देहालङ्कार

२. सन्देहालङ्कार

१६. Bh. I. कः का निषेध करते हैं

१७. Bh. I. श्लाघामनिर ह्री

१८. Bh. I. १००५०३

१. ओऽम् त्रिनेत्रधारी, त्रयी (ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) में वर्णित अव्यय आत्मा, तीनों कालों में विद्यमान तीनों तापों (भौतिक, दैहिक, दैविक) त्रिलोकी के रक्षक, त्रेतादि युगों के कर्त्ता कारण हेतु) तीनों गुणों से युक्त होने के कारण तीनों देवों (ब्रह्मा-विष्णु-महेश) के रूप में वर्णित किये जाने के पश्चात् भी अकथनीय, गङ्गा के तीनों स्रोतों (स्वर्ग-पृथ्वी-पाताल लोक प्रवाहिणी) से प्रक्षालित मस्तक वाले, त्रिपुर को जीतने वाले, अजित को बाँधने वाले (अजेय त्रिपुर नामक असुर को जीतने वाले) त्रिवर्गों में विभक्त उत्तुङ्ग त्रिशूल वाले, तीस करोड़ देवताओं के स्वामी इन्द्र द्वारा पूज्य भगवान् शङ्कर हमारी बाधाओं को दूर करें।

२. कैलाश शिखर तथा चूड़ामणि से सुशोभित रावण की शिर-पंक्ति निश्चय ही श्रेणी-सङ्गति (त्रिकूट-कैलाश या लङ्कापुरी) के कारण लङ्कापुरी को पवित्र करते हैं — — — जिसका पराक्रम अतुलनीय है — — साथ ही वाणासुरादि के आराध्य पशुपति की चरण-रज आप सबकी रक्षा करें।

३. सूर्य से ब्रह्मा के प्रपौत्र मनु ने जन्म लिया। उसके पश्चात् चक्रवर्ती राजा इक्ष्वाकु हुए, उसके पश्चात् श्री विकुक्षि हुए, उससे ककुत्स्थ जन्मे, उनसे पृथु राजा हुए जो सार्वभौम राजा के रूप में विदित हुए। उनसे पराक्रमी विश्वगश्व हुए जो अपने बल से सम्पूर्ण विश्वान्तराल में व्याप्त हो गए।

४. उसके पश्चात् २८ राजागण क्रम से हुए, तत्पश्चात् महाराज सगर हुए जिन्होंने — — — — पृथ्वी से सागरों तक राज्य किया। उनसे असमञ्जस राजा उत्पन्न हुए (ये बङ्गाल में कपिल के शाप से भस्म हुए), उनसे अंशुमान् हुए, उनसे श्रीमान् एवं नृपश्रेष्ठ राजा को जन्म दिया जो दिलीप नाम से प्रसिद्ध हुए।

५. (भगीरथ से पूर्व त्रिशंकु के पुत्र राजा हरिश्चन्द्र हुए), उसके पश्चात् भागीरथ नामक विख्यात राजा ने जन्म लिया; उनके पश्चात् और भूमिपाल — — — — रघु उत्पन्न हुआ, रघु से अज, तदनन्तर तुङ्गरथ दशरथ और उसके पुत्र और पौत्रों के समान आठ अन्य राजाओं को छोड़कर श्रीमान् लिच्छवि हुए।

जो क्षितिमण्डल का एकमात्र तिलक, लोकप्रसिद्ध (जनता का विश्वास-पात्र), महान् प्रभावशाली एवं देवताओं के द्वारा सम्मानित है। शोभायमान चन्द्रकला-पुञ्ज के समान श्वेत, गङ्गा के प्रवाह के समान पवित्र, लिच्छवियों के निर्मल वंश 'लिच्छवि' नाम को धारण किया।

७. लिच्छवि के पश्चात् होने वाले अन्य राजाओं को छोड़कर श्रीमान् पुष्पशराकृति राजा हुए, उनके पश्चात् सुपुष्प भूपति हुए, उनके पश्चात् २३ राजाओं को छोड़कर श्री जयदेव नामक दूसरे नृपति उत्पन्न हुए।

८. विजयी श्रीजयदेव के पश्चात् ग्यारह और राजाओं को छोड़कर प्रसिद्ध उत्तम राजा श्रीमान् वृषदेव हुए जो सुगत (बौद्ध) शासन के पक्षपाती थे।

९. उनके पश्चात् शङ्करदेव नामक राजा हुए, तत्पश्चात् धर्मदेव उत्पन्न हुए, तत्पश्चात् श्रीमानदेव राजा हुए, तत्पश्चात् प्रसिद्ध महीदेव हुए।

१०. उनके पश्चात् वसन्तदेव हुए जो वसन्त के समान प्रजा के स्वामी, शत्रु को युद्ध में शान्त करने वाले एवं पराक्रमी सामन्तों के द्वारा वन्दित होते थे।

११. उसके पश्चात् श्री उदयदेव क्षितिपति हुए। उनके पश्चात् १३ राजाओं के पश्चात् राजा नरेन्द्रदेव हुए। समस्त राजाओं के शिर पर धारण की गई मालाओं के पुष्पपराग से आर्द्र पादपीठ के द्वारा जिसका मान (यश) उन्नत था।

१२. वे (नरेन्द्रदेव) विपुल वैभवशाली, निर्धनों को धन के दाता, शत्रु-दल के विजेता, बन्धु-बान्धवों को सन्तुष्ट करने वाले, प्रजा के कष्टों को शीघ्र ही दूर करने वाले, संयमशील, साधुसमाज की विपत्तियों को हरने वाले एवं सत्यवक्ता थे। उनके पश्चात् लोकप्रिय प्रजापालक श्री शिवदेव हुए।

१३. श्रीवर्म (वर्मा) वंश के चूडामणि के रूप में विख्यात, शत्रुदल को युद्ध में लज्जित करने वाले राजा भोगवर्मा से उत्पन्न, मगधपति श्री आदित्यसेन की दौहित्री, देवी के बाहुबल से युक्त मौखिरी कुल वाली, सुन्दर, सुगढ़ वह महारानी लक्ष्मी वत्सदेवी महाराज शिवदेव द्वारा लक्ष्मी के समान सादर वरण की गई।

१४. शत्रुओं को जीतने वाले, दूसरों से अजेय एक अन्य जयदेव नामक राजा उत्पन्न हुए जो श्रीवत्सदेवी के आत्मज अवगत हुए। वह राजा जयदेव, त्यागी, मान को ही धन मानने वाला, विशाल नेत्रों वाला (शासन के प्रत्येक कर्मचारी पर दृष्टि रखने वाला), सौजन्यरूपी रत्नों का भण्डार, गुणवानों एवं विद्वानों का चिराश्रय, विशाल वक्षःस्थल एवं जांघों वाला पराक्रमी राजा था।

१५. मतवाले हाथियों के समूहों के दन्तरूपी मूसलों से विदीर्ण किये गए शिरों वाले गौड, उड्रादि देशों के शत्रु-नरेशों के स्वामी, कलिंग एवं कौशलपति श्रीहर्षदेव की पुत्री कुलोचित गुणों से युक्त, भगदत्त राजकुल में उत्पन्न लक्ष्मी के समान देवी राज्यमती राजा (जयदेवद्वितीय) के द्वारा वरण की गई ।

१६. कामदेव के सुन्दर रूप को भी पराजित करने वाले अपने शरीर की शोभा से युक्त था, करधनियों से युक्त गुणवान वनिताओं द्वारा उपास्यमान रहता था । अपने सुराष्ट्र के परिपालन-कार्य की चिन्ता करने वाला था जो सार्वभौमिक चित्त को प्रगट करता है ।

अथवा

अंग देश को जीतने के कारण उसकी श्री एवं समृद्धि से परिवृत जीते हुए कामरूप, एवं काञ्ची प्रदेशों की गुणवान वनिताओं द्वारा उपास्यमान होता था । सौराष्ट्र प्रदेश के परिपालन-कार्य में चिन्ता करने वाला था, जो उसके सार्वभौमिक चरित्र (सार्वभौमिक साम्राज्य) को प्रगट करता है' अथवा (एक आदर्श राष्ट्र के रूप में साम्राज्य के परिपालन-कार्य में चिन्तन-मनन करते हुए)

अथवा

समृद्धशाली जीते हुए अङ्ग, कामरूप, काञ्ची, सौराष्ट्र रूपी गुणवान वनितायों के द्वारा पूजित होता था जो उसके सार्वभौमिक चरित्र को व्यक्त करता है ।

१७. राज्य में प्रभूत सुखों को प्राप्त द्विजजनों के द्वारा यज्ञ में प्रत्यर्पित घृताहुति की ज्योति से उत्पन्न शिखा के विजृम्भण (जंभाई) से प्रजा के समस्त संकटों और रोगों को पराजित कर अपनी भुजाओं के आश्रय बल से कुचले हुए शत्रु रूपी कण्टकों से रहित राज्य को धारण किया तथा जो शूरता (शत्रु देशों को जीतने के कारण) 'परचक्रकाम' नाम से अभिहित हुआ ।

१८. जयदेव नामक वह श्रीमान् विशुद्ध एवं महान् वंश से उत्पन्न, प्रताप एवं बहुपुण्य सम्प्राप्त तथा सर्वगुण सम्पन्न हैं ।

१९. पाताल से कमलनाभि विष्णु की नाभि से कोई नवीन कमल अपने अष्टदल रूपी अष्ट शिवमूर्तियों के साथ उठा है क्या ? (जो अपने आठ दलों के द्वारा अष्टमूर्तियों की पूजा करना चाहता है)

अथवा

पाताल से कमलनाभि विष्णु की नाभि से अष्टदल वाला कोई कमल उठा है च्या ? जो भगवान् शङ्कर की अष्टमूर्तियों की पूजा करना चाहता है। देव के आसन के लिए यह विस्तृत आसन ब्रह्मा जी के मुख-सादृश्य के भ्रम से यहाँ आया है क्या ? क्या यह ब्रह्मा जी का श्वेतकमल है ?

२०. शङ्कर के नृत्य करते समय शीघ्र प्रकीर्णित यह विभूति है क्या ? क्या ये भगवान् शङ्कर के मस्तक की चन्द्र किरणें हैं ? क्या शरदकाल की अभिनव शोभा को प्राप्त करके यहाँ आ गई है ? हिमपुञ्ज से प्रकाशित कैलाशपर्वत से अलग होकर आने वाली चोटियाँ है क्या ? क्षीरसागर से आने वाला भगवान् शङ्कर के गले के विष के साथ सहज प्रीति वाला पीयूष-राशि है क्या ?

२१. देवता की वन्दना करने के लिए उद्यत द्युतिमान् द्युति शेषनाग की धवल ज्योत्स्नामथी फणावली दिखाई देती है क्या ? देवप्रसाद श्री के द्वारा दुग्ध का स्नान कराने के लिए अन्दर दूर तक रसातल के आश्रित क्षीरसागर से उठने वाली लहरें हैं क्या ?

२२. पाताल में शेषनाग की शय्या पर लेटे हुए लीलासुख में स्थित श्री विष्णु की आज्ञा पाकर भक्ति के कारण त्रिपुर विजेता भगवान शङ्कर की अर्चना के लिये उठती हुई (क्रीड़ा करती हुई) लक्ष्मी के अग्र करतल पर विकसित क्रीड़ा-कमल दिखाई दे रहा है क्या ? इस प्रकार मुग्धा सिद्धाङ्गनाओं का अतिरुचिर वितर्कास्पद विषय बन गया।

२३. रजत कमल कहता है—निश्चय ही मैं कमल हूं, मिथ्या नहीं है, किन्तु मैं यह कमल नहीं हूँ जो सरोवर में विकसित होता हुआ शोभित हो रहा है अपितु मैं राजा द्वारा समर्पित किया गया शोभायमान रजतकमल हूँ। हे मानवो ! लक्ष्मी और ब्रह्मा जी के कमल मेरी तुलना कैसे कर सकते है ? क्योंकि उनमें मेरी जैसी नवीनता नहीं है, वे तो बहुत पुराने हैं। दूसरी बात है मैं मानवी (मानवकृत) हूं किन्तु वे अभानवी (मनुष्येतर कृत) है। इस सम्पूर्ण फैली हुई पृथ्वी पर मेरे जैसा कमल न तो जगत् के किसी मनुष्य के हृदय में है नाहीं किसी सरोवर में है। मुझ चमकते हुए दिव्य कमल में सूर्य अथवा दिन अथवा सरोवर ने ही कोई विशेष परिवर्तन या विकार उत्पन्न नहीं किया है अर्थात् सूर्य, दिन एवं सरोबर के विना भी मैं सदैव देदीप्यमान (विकसित) रहता हूं।

२४. अपने अधोभाग एवं मध्यभाग में स्वर्णाभ, सिन्दूरी तथा लाल रंग की आभा युक्त कमल अपने दलों के ऊपरी श्वेत दन्ताकार किनारों की पक्ति से ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो वह संसार में अपने सौन्दर्य के दर्प से सरोवर में विकसित कमलों के प्रति उपहास करता हुआ लाल होंठों से युक्त विस्फारित मुख की दन्त पंक्ति की द्युति (आभा) को प्रदर्शित करता है।

२५. यह देव की विश्राम भूमि वेदी काञ्चनमयी मेरु शिला की तरह हिम के संसर्ग वाले शुभ्र और किनारे पर विकसित कमल दल वाले कुलपर्वतों से घिरी हुई शोभित हो रही है। ऐसा समझकर पशुपति की पूजा के लिए अति उज्ज्वल रूपहले, कमल को बनाया।

२६. प्रकट प्रभाव और महिमा वाला ब्रह्मा जिसकी चार मुखों से स्तुति करता है। छः मुखों के द्वारा कार्तिकेय चरणों में प्रणाम करके जिसकी प्रशंसा करता है। स्फुरित कन्धों वाले दशानन ने भी दशमुखों से जिसकी स्तुति की। समर्थ वासुकि हजारों जिह्वाओं से स्तुति करता हुआ जिसकी सेवा कर रहा है।

२७. प्रसिद्ध परमेश्वर होते हुए भी दिग्मण्डल रूपी वस्त्र को धारण करता है, सर्वव्यापक होते हुए भी सूक्ष्मतर है, जो शङ्कर होते हुए भी संहारक है, एक होते हुए भी आठ शरीरों वाला है, सुरासुर का पूज्य गुरु होते हुए भी शङ्कर निर्लज्ज होकर नाच रहा है। इस प्रकार वह विरुद्ध गुणों से विराज रहा है।

२८. उस भगवान शिव का वह विपुल ब्रह्माब्ज (ब्रह्मा जी के आसन का कमल) के तुल्य शुभ रजतकमल जो कि किनारों पर दलों से फैला हुआ है, उसे पूजा के लिये विधान करके मेरे द्वारा पशुपति से जो पुण्य प्राप्त हुआ था उसे भक्ति सहित पुनः माता को समर्पित करके मैं शान्ति को प्राप्त करूँ।

२९. शम्भु के सिर पर समर्पित रजतकमल क्या साक्षात् जलवाली गङ्गा जी का कमल है? क्या शङ्कर के सिर पर बहने वाली गङ्गा स्वर्ग में प्रवाहित होने वाली गङ्गा है? जो इस नवीन कमल को देखने की इच्छा से स्वर्ग से अवतरित होकर आई हुई है। क्या वह शुभ पुण्यवान देवों की रम्य विमानावली है? क्या यह करुणाकर लोकेश्वर के हाथ से आया हुआ कमल है?

३०. क्या वह स्वर्गङ्गा का नीचे से उतरता हुआ, सुन्दर कल्लोल करता हुआ रम्य स्रोत है? पृथ्वी तल के श्रेष्ठ कमल को देखने के लिए क्या यह ब्रह्मोत्पत्ति का कमल आया हुआ है? चन्द्रमौलि भगवान् शङ्कर के स्वच्छ

शिर के चन्द्रमा का बिम्ब तो नहीं है ? जिसको देखकर भूलोकवासी विस्मयोत्फुल्ल नेत्रों से शङ्का का आह्वान कर रहे हैं ।

३१. राजा की माता श्रीवत्सदेवी के द्वारा अन्य कमलों के परिवार से परिवृत्त एवं सम्मानित विशाल रजत-पुण्डरीक को शङ्कर भगवान के ऊपर आदर के साथ चढ़ाया गया ।

३२. अपने कुल की निर्मल एवं पवित्र चित्तवृत्तियों को धारण करने वाली श्री वत्सदेवी ने स्वयं भी अपने स्वर्गीय पति राजा की सम्पूर्ण एवं चिरस्थाई कल्याण के लिए पुत्र द्वारा बनवाकर दिए गये निर्मल, प्रधान, शुभ्र एवं शुभ रजत-कमल को पशुपति पर चढ़ाकर "पद्मपूजा' के द्वारा' पुण्य को प्राप्त किया ।

३३. कौन कुलीन व्यक्ति है जो अपने गुणों की श्लाघा करे ? इसलिये लज्जा के कारण अच्छा कवि होते हुए भी राजा ने अपने वंश से संबन्धित काव्य की रचना नहीं की । बुद्धिमान राजा के साधु रचे गये पाँच श्लोकों को छोड़कर राजा के प्रति स्नेह होने के कारण वुद्धिकीर्ति ने स्वयं इस अद्भुत अभूतपूर्व प्रशस्ति की रचना की है ।

३४. योगक्षेम विधान के लिए सुन्दर भुजाओं से बन्धुओं को ऊँचा उठाते हुए, प्रेम करने वाले पुत्र, कलत्र एवं भृत्यों सहित लब्ध प्रताप राजा, दीर्घायु वाला, पूर्ण निरामय शरीर वाला नित्य प्रमुदित होकर भली प्रकार अत्यधिक मनोवाञ्छित वैभव की वृद्धि के कारण अनुरक्त प्रजावाली पृथ्वी का पालन करें । संवत् १५९ कार्तिक शुक्ल नवमी ।

LXXXII

ठीमी आज्ञाभिलेख

यह लगभग ४० सैं० मी० चौड़ा शिलालेख काठमाण्डू ग्रौर भादगाँव के मध्य स्थित ठीमी नामक ग्राम में एक प्राचीन जलासय में विद्यमान है।

१. — — — — — — — — — — — — रयादिप्र —

२. — — — — — — — — — — — — पश्चिमेनि —

३. —

४. — — — — — — — — — — — — — — मे प्र —

५. — — — — — — — — — — — — — — यमेत —

६. — — — — — — — — — — — — तश्च पश्चिमेन च तदे — — — — — — — — — — — — — — — — — —

७. — — — — — — — — — — — —द् ग्रन्तरेणापि ते —माप्र — — — — — — — — — — — — — — —

८. — — — — — — — — — — — — — खातम् पल्ली ततो याव — — — — — — — — — — — — — — —

९. — — — ग्र — क — — — विष्टिमनुष्य सम्बन्धेन प्रतिवर्षम् यत्पुराणशत — — —

१०. — — —भ्य एव ग्रामीणैर्दातव्यम् राजकुलीयव्यवसायिभिस्तु न कदाचिद् [अन्यथा]

११. [कर्त्त]व्यम् ये तु केचिद् अस्मत्पादप्रसादोपजीविनोपरे चान्यथा [कुर्यु:] कारयेयु[र्वा]

१२. — — — तरन्न क्षम्यन्ते भविष्यद्भिरपि वसुधाधिपतिभिरात्मनः करुणातिशयम् — —

१३. पूर्वपार्थिवप्रणीतोऽयम् दानधर्मसेतुरिति तद्गौरवात् सम्यक् एवानुपालनीयस्तथा [चोक्तम्]

१४. पूर्वदत्ताम् द्विजातिभ्यो यत्नाद् रक्ष युधिष्ठिर। महीं महीभुजां श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयोऽ[नुपा]लनम् ॥

१५. षष्टि वर्षसहस्राणि स्वर्गे मोदति भूमिदः। आक्षेप्ता चानुमन्ता च ता [वन्ति] नरके वसेत् ॥

१६. इति स्वयं आज्ञा। दूतकश्चात्र राजपुत्र जयदेवः। सम्वत् — — —

१७. आश्वयुजे कृष्णषष्ठ्यां ॥

जहाँ तक बेगार-श्रम का मनुष्य के साथ सम्बन्ध है, प्रतिवर्ष एक सौ पुराण (मुद्राएं) ग्रामीणों द्वारा दी जानी चाहिएँ। राजकुलीय व्यवसायियों के द्वारा इस आज्ञा की अन्यथा कदाचित् नहीं की जानी चाहिए।

जो कोई हमारे चरणोपजीवी अथवा अन्य कोई इस आज्ञा की अन्यथा करेगा या करायेगा; उसको हम निश्चय ही क्षमा नहीं करेंगे। 'पूर्ववर्ती राजाओं द्वारा प्रणीत आज्ञा दान-धर्म-दया का सेतु है" इस प्रकार गौरव समझकर भावी राजाओं द्वारा पालन किया जाना चाहिए।

कहा भी गया है—हे महीपतियों के महीपति युधिष्ठिर! ब्राह्मणों को पूर्व राजाओं द्वारा दान में प्रदत्त भूमि का यत्नपूर्वक रक्षण कर, क्योंकि उसका अनुपालन करना ही दान देने से अधिक श्रेष्ठ है। भूमि का दान करने वाला स्वर्ग में साठ हजार वर्षों तक आनन्द का उपभोग करता है, इसके विपरीत भूमि का अपहर्ता एवं अवहेलना करने वाला उतने वर्षों तक नरक में वास करता है। यह मेरी स्वयं आज्ञा है। यहाँ दूतक है राजपुत्र जयदेव। संवत् — — आश्वयुज कृष्णा षष्ठी।

LXXXIII

नक्सालनारायण आजीविका निर्धारण शिलालेख

लगभग ३८ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख काण्डमाण्डु में नक्साल नारायण नामक (   ) पर स्थित है प्रथम ९ पंक्तियाँ पूर्णरूप से मिट चुकी हैं।

१०. — पञ्च — —

११. — — — — — — — — — — — — — श्रवद — — — — — — — — — — — — — — — — — —

१२. — मद्वे — —

१३. —धिकरण . इर—

१४. — — — — — — — — — — — — दान — — — — — प्रयग — — — — — — — — — — — — — — — —

१५. — — — — — — — — — — — — .दा — — — — — इ — — — — — —नि — — इ — — — — — — — — — — —

१६. क्ष — र्य — — — — स्य —सं— — — — — — — — — — —

१७. — प्र — — — : प — ह — — — — — — — — —
— शि — — — — — — — — — — — ते — — — — —

१८. त्रयं वायुक्तविवारण — — — — — — — — — — —
— — — दि — — — — — — — — — — इ तत

१९. — — — — — — — — — — — — — — — दश पण —
— — — ई — मध्यकहलन — — — — — — — — —[1]

२०. य — — — वप — — — — — — कार्येण श्री — — —
— — — — — श्री पूर्व्वाधिकरणस्य दक्षिण — — — — — — —[2]

२१. करणस्य — — — — — — — —चरण — — — — — सुरो-
दौवारिकेणापि यथाशास्त्रानुगत — — — — — — —[3]

२२. क — — णोन् — — — — — — — — — — — — —
— — — भट्टा — का प्रभृतीना — — धिकरण — — —
— — —[4]

२३. शी — रि — — प्रज्ञान — — — — — — — — — — —
— — कार्याणाम् — — — — — — — — — — — —
— न्त — — — — — — — — —[5]

२४. नर्यकात् परि — इर्याकुस — — — — — — — — — — —
रि — — — — — — — — हार — पणेत — — — — — —[6]

२५. लो दोलने पणपुराणा — — । नि — क्षले —ङ्ग — पणपुराण-
चतुष्टयं । सो . इ . इनि — — पणपुराणम्[7]

---

१. L. .. णास — — नदनपणपुराण — कामव्यक ... ॥

२. L. ... लकोणस्य च्रीपूर्व्वाधिकरण ...... ॥

३. L. परोदौवारिकेणापि यथाशास्त्रानुगत .... ॥

४. L. ... ण्डेरकस्याति — रणं क:रत्पता कारप्रभृतीन् असिधाधिकरण-प्र,...॥

५. L. चिरिति सम ... स् . सारे कारे .... णाम् — समं ... कानाम् एव व्याय ....

६. L. न . र्यंकात् परि . भियाकु . प .... तो .... हारे . औ पने ...॥

७. L. कादलने पणपुराणा : प . नियकाल . . पणपुराण — चपुष्टयां अजति — सेपा . . ॥

२६. देयं सार्द्धं । मूद्रयांघट्ट्ग — विंशतिपणा वेत्रोपस्थितसाक्षिणां दत्ताः पणशतचतुष्टयम् लिखि — --[८]

२७ ना — श[६] पणशतम् । सम्द्रतिपत्तौ पणपुराणा — — दि — णाः । प्री — क्षिवणे[१०] पणपुराणाः प[११] — — — —

२८. शति : । अयक्षिकाङ्कादशपणपुराणाः सार्द्धं च उत्तमकाये । मध्यमावरकाये — — प्र . ई पणपुराणाः

२९. सतिपणाः स — — पणपुराणत्रयमिति निर्णिणक्षव्यवहारभागस्य ग — ण — — ण — भवेच्च — — —[१३]

३०. ञ्चविंशतिश्च[१४] पणपुराणा — . इ . ईद — आ : ।[१५] व्यवहारपरिनिष्ठतजातं द्रव्यस्य जपाग्रे पाञ्चालिकेन दातव्यं ॥[१६]

३१. यस्तु द्रव्यं न प्रयच्छेत् स्वस्थानवास्तव्यस्यान्यस्थानीयस्य च धारणकस्यात्रैव[१७] रोधोऽपरोधो भवेत् । यस्तुकु[१८]

३२ म्[१९] इति कार्यम् अस्य ततो रोगमाचौ[२०] दौवारिकस्यावेदनीयं तेनापि श्रीमत्पाद्दियाकरासनकरणे[२१] यथा

---

८. L. देयं तार —। प्रद्रयाघट्टने विंशति पणा वेत्रोपस्थितसाक्षिणाम् दत्ता. पण शत चतुष्टयम् — कान —॥

९. L. आवने ॥

१० L. प्री — श्रावणे ॥

११. L. प . . ॥

१२. L. अयत्तिकाङ्का दश पणपुराणा स्मार्या उत्तमकारे । . . व्यामवर . आ व्य — वम —पणपुराण ॥

१३. L. सति पणः स पण — त्रयेण पुराणत्रयम् इति निर्णतृव्यवहारतस् तस्य प .... ण सु तम् अण्ड

१४. L. र विंशतिश् ॥

१५. L. पुराण — स्य तैः दत्ताः ॥

१६. L. द्रत्यस्य वहु समादनी (यम्) ॥

१७. L. कस्य तेन ॥

१८. L. परोधो (सं)वत् . आयस् त . . ॥

१९. L. तग्

२०. L. तत्परामावौ

२१. L. पादीयोत्तरासनकरणे ॥

३३. मासं रोपणीयः । सगर्भनारीमरणे पणशतमेकम् । आत्मघातकानाथ च्छिषहुत्ताषकण-मरणे[२२]

३४. दौवारिकस्यावेद्यं मृतशोधनं । तदर्थम् आगतस्य तस्य तस्य सद्विपणाः षट्पणपुराणा देया- । सकृतगोरुपनि-

३५. वासो[२३] स पणपुराणत्रयं यथाधिकारिणां देयं । प्रासादरथचित्रणे सिन्द्रिरदौवारिकस्याशीतिः पण-

३६. पुराणाः देयाः । रथोत्तोलने प्रासादसंस्कारे च सर्व्वपरिस्नपने[२५] प्रति-वर्षम् वैत्रदौवारिकस्याशीतिः पण-

३७. पुराणाः । एवञ्चेलकरस्य च षट् पणपुराणाः सद्विपणाः । २०२ घटिकाक्रये दौवारिकेण[२७] पञ्चभिः-

३८ पणपुराणाः देया ।[२८] मण्डपायां[२९] वा याशाञ्चेलपट्टयुगम्[३०] उत्तमञ्च[३०] पञ्चाभरणकम् । प्रतिवर्षं मानदौवा-

३९. रिकस्य पणपुराणसहस्रम् एकं पाञ्चालिकं[३२] देयम् । ताम्रकुट्टशाला । मानेश्वर । शाम्भपुर[३३] हृमस्प्रिग[३४] ।

४० पुठम्प्रिङ्ग । जभयप्ती ।[३५] पुंदट्ट[३६] ग्रामाणां द्रंगत्वमात्रमेव प्रसादी-कृतमत्र शिलापट्टको — र[३७] श्री स —

---

२२. L. घातकास्य — विसःऋ्त्ताषकल — यं ।।

२३. L. सकृतगो-परिवार्य ।।

२४. L. सि - पर ।।

२५. L. परिक्षलने

२६. L. एवं ।।

२७. दौवारिकेतो ।।

२८. L. पुराणाः देयाः ।।

२९. आरोपे ।।

३०. L. यासां

३१. L. उत्तम ।।

३२. L. पालोरिक ।।

३३. L. साम्बा

३४. L. हृ्दस्प्रिग ।।

३५. L. यथम्प्रिङ्गजमय — ।।

३६. L. प् . अ ।।

३७. L. — तुशिलापङ्कै . ए — ।।

४१. ङ्गादि प्रसादविशेषाः समादिष्टा इति। परिगतार्थैर्यथोपरिलिखित-
नियोगाधिकृतैस्तदधि-

४२. कारिभिः स्वव्यापारव्यपदेशेन मनसापि प्रसादातिक्रमसाहसाध्यवसायो
न कर्त्तव्य इत्यादिज्ञा

४३. येन्यथाकारिणस्तेषामतिदारुणं दण्डं पातयिष्यामो भाविभिरपि नरा-
धिनाथैः पूर्वनृपकृ-

४४. तप्रसादपालनपरैः प्रजाप्रमोददानज्ञैः सुतरां[३८] न मर्षणीयास्तथा च
पालनानुशंसा[३९] श्र-

४५. यते। ये[४०] शीतांशुकरावदातचरिताः सम्यक् प्रजापालने नो जिह्माः[४१]
प्रथमावनीश्वर कृतां रक्षन्ति धर्म्यां स्थितिम्।

४६. तेऽवज्ञा[४२] विजितारिचक्ररुचिरां सम्भुज्य राज्यश्रियं नाके शक्र-
समानमानविभवास्तिष्ठन्ति धान्यास् स्थिरम्॥ सीमा

४७ चास्य स्थानस्योत्तरपूर्व्वस्याम् दिशि आजिकाविहारपूर्व्वद्द्वारा —
— ङ्[४४] कण्ठका ततो दक्षिणाभिमुखेन महापथानु-

४८. सृत्य मणिनागाट्टिकस्योत्तरतो[४५] वृहद्ग्रामं[४६] यावत् ततोत्तरं[४७]
पश्चिमाभिमुखेन वलसोक्षि[४८] देवकुलस्य दक्षि-

४९. णा तिरश्ची[४९] अनुसृत्य वोद्दविषय अरघट्टस्यो[५०]त्तरेण मीशानु[५१]

---

३८. L. दान् . स् . ऐस् तराम्॥
३९. L. नुशस्॥
४०. L. शार्दूलविक्रीडित
४१. L. राजि . श्राः॥
४२. L. . ज्ञा॥
४३. L. पूर्व्व॥
४४. द्वाराद् . .॥
४५. L. मणिनागाहिका — स्योत्तरतो।
४६. L. ग्राम
४७. L. यावत् — तो॥
४८. L. वलसैक्कि॥
४९. L. तिध्रि॥
५०. L. अरघ . तस्यो॥
५१. L. मार्गा॥

सृत्य पश्चि[५२]भिमुखेन लंखूलं उट्टणे[५४] ततस्ता-

५० — ट्टणकमनुसृत्य[५६] नडपटा[५७] वाटिकाम् अनुसृत्य पश्चिमाभिमुखेन महाप्रतीहार[५८] — — ग्रहमण्डलस्य द

५१. दक्षिणस्य[५९] कण्ठानुसारेण महारथ्यायां स्तम्भित[६०] शिलास्ततस् तेन रथ्यामूलस्य यद्दुर्द्वारं[६१] प्रविश्य पूर्व्वगृहोत्तरार्ध-

५२. भागम् आक्रम्य दक्षिण[६२] गृहाग्रतः पश्चिमम् अनुसृत्य द्वार[६३] गृह-मण्डलं प्रविश्य दक्षिणगृहमादाय पश्चिमक[६२]-

५३ च्छं[६५] लङ्घयित्वा[६७] योवी[६७] ग्राममध्येन तवेचेखा[६८]नुसारेण पश्चिमाभिमुखेन मार्गस्ततस्तन्मार्गेण उत्तरामुखा-

५४. नुसारेण कुमद्वटी[६९] मार्गस्ततः पश्चिमाभिमुखेन परिक्रम्योत्तरामुख-मनुसृत्य पोन्ति मण्डपिकासमी-[७०]

---

५२. पश्चिम
५३. L. लंखुलं ॥
५४. L. उदेणी
५५. L. त ॥
५६. L. ... णाकाम् ॥
५७. L. न . पट्ट ॥
५८. भस् . आ ॥
५९. L. क्षि — स्य ॥
६०. L. स्थवित
६१. L. मूलस्यायद्वार ॥
६२. L. दक्षिणा ॥
६३. L. 'द्वार' का निषेध करते हैं।
६४. L. पश्चिमेन
६५. L. च ॥
६६. L. लघयित्वा
६७. L. योवि
६८. L. त — चेवा ॥
६९. L. कुमुद्वटी
७०. L. योऽन्तिम ... पिका . . ॥

५५. येन उडणे हुशस्ततस्तने[७१] पश्चिमम् अवतीर्य ताम्रकुट्ट शालागमन-मार्गानुसारेण जप्तिखूसंक्रमाभि[७२]मुखेन

५६. ताम्रकुट्ट शालालखमकस्[७३] ततोत्तराभि[७४]मुखेन मानेश्वर राजाङ्ग-णली दक्षिणेन प्रेक्षण[७५] मण्डपी[७६] पृष्ठतः पूर्व्वो–

५७. त्तरम्[७७] गत्वा पूर्व्वद्वारेण प्रविश्य राजाङ्गण मध्येन पश्चिमद्वारेण . इ[७८] — — — गत्वा प्रवर्द्धमानेश्वरस्याग्रतः[७९]

५८. पश्चिममार्गमनुसृत्य यावत् वोत्तरिशा कारितप्रणाल्याग्रतः — ति — य् . — मस्ता[८०] तद्दक्षिणेन साम्बपुर

५९. वाटिका — — श्चर्व ततः[८१] — — — मार्गस्योवल्माः[८२] पश्चिम — सु — — — — — —[८३] ना दक्षिणमनुसृत्य दक्षिण —

६० गामी पश्चिमद्वारेण — — — जतववत्मविहारस्य दक्षिण — हद्द[८४] वाटिकाया दक्षिणाली

६१. पश्चिमा[८५]— — — — — — — — — आद् उत्तरपश्चि-मेन — — — — — — — — — — म् अनुसृत्य कघ्-प्रायम्भी[८६]

---

७१. L. धन — णे — श — सने ॥
७२. L. इपूसकम् ॥
७५. L. णाः
७७. — क्षणमृत्त L. त्तरे ॥
७८. L. — स्या — ॥
७९. L. श्वरश् चाग्रत् . ॥
८०. L. यावत् . . आभ् . — शाकारितप्र ..... घ्य् . — समस्त
८१. L. लाटिका . र्ध .... ॥
८२. L. मार्गस्य ... ॥
८३. L. पश्चिम ... ॥
८४. L गामी प . इ .... विहारस्य ... कद् ॥
८५. पश्चिम् ॥
८६. L कण्ठयम्प्रि ॥

६२. — — ण —[८७] — — — रकप्रतिवर्धस् तत्र कुन्चो[८८] —
— — — — — — — — — — —— — विहारभूमिः प

६३. — — — — — — — — —— — नदीमध्य — — —
— — — — — — — — — — — — — मान —
तिमिह्र्म[८९] इ [९०] भूमध्य

६४. — — — — — — — — — रीपेका — ततो दक्षिणमार्गाह्य
— — — — — —— — — — — ग्रामे[९१] ग्राममार्ग

६५. — — — — — — — — — नुसारेऽपि — — — — —
— — पश्चिमे यकुस्ततो[९२] — — — — — — — —
— — —पिक्[९३]

६६. — — — —करगोष्ठिभूमेः पूर्व्वत् — [तत्रैव सप्तमीगोष्ठीभूमेः
— — — —— — — — — — विहारभूमेः

६७. — — माली — — — रप्रमालीभूमेश्च पूर्व्वली ततोऽनुसारेण[९४]
श्रीतुक — — — — — — — — — — —

६८. — — — एतुरीषा— — गोष्ठीभूमेर्या — इ माली तदनुसारेण
— — — — — — — — — — — — — — — —
दक्षिणो[९५] —

६९. त्तमा — — — अप्र — — र्त्त — ग — —पूर्व्वानुसारेण च
— आवती — — — — — — — — — — — — — —
— — —

---

८७. L. ण का निषेध
८८. L. खरो ।।
८९. L. तिमिहट्टि ।।
९०. L. मार्ग
९१. L. त
९२. L. त ।।
९३. L. पिक का निषेध
९४. L. पूर्व्वाली । तनुसारेण ।।
९५. L 'दक्षिणो' का निषेध

७०. — — मार्गस्ततो नदी पल्ल — वार्त — दिव्वंप . इ . इ —

७१. — — — — — — — — — — — — प्ति — — पूर्व्व — — विल — [९६]

(लगभग १० अन्य पंक्तियाँ अपठनीय हैं)

(प्रथम १७ पंक्तियाँ अस्पष्ट हैं) यहाँ वे उचित रूप से विचार करें। जैसा उपयुक्त हो वैसा पूर्वी द्वारपालों पर विचार किया जाना चाहिए। श्री पूर्वीकार्यालय (अधिकरण) को — — — दश पण पुराण दिये जाने चाहिएँ। पुत्र के सम्बन्ध में — —— श्री पश्चिमी तथा श्री पूर्वी कार्यालयों के दक्षिण — — — के दक्षिण में गये हुए — — वह कार्यालय — — व्यवहार आरम्भ में लिखित आदेशों के अनुसार ही द्वारपालों को कार्य करना चाहिये — — भट्ट कार्यालय (अधिकरण) के साथ अन्य सभी कार्यालयों अथवा विभागों (अधिकरणों) को प्रवेश से वर्जित किया जाता है। — — सीमा के अन्तर्गत अथवा सीमा से बाहर के सम्बन्ध में जो भी समस्या उत्पन्न होती है तो पाञ्चालिका स्वयं न्याय-विधान के अनुसार निर्णय करेंगे।

पश्चिमी विभाग में — —अविद्या को हटाने के लिए — — गलत काम के दुगव करने पर — — ठगी करने पर पाँच पुराण जुर्माना किया जायेगा। सम्पत्ति, पशु या धन के आदान-प्रदान (क्रय-विक्रय) में नियमों के तोड़ने पर चार पणपुराण जुर्माना किया जायेगा। नियम तोड़ने के प्रयास २.१।२ पणपुराण जुर्माना किया जायेगा। — २० पण गवाहों के आसन पर उपस्थित होने पर ४००पण दिए जाने चाहिएँ। यदि लिखित रूप से कोई अपराध सिद्ध होता है तो उस पर १०० पण जुर्माना किया जाना चाहिए। दोनों के उपस्थित होने पर पण पुराण — —। — — — पणपुराण क्षिवण में एक सौ पण पुराण — — — उत्तम शरीर के होने पर अयक्षिकाङ्कित दशपुराण और साथ ही मध्यम तथा निम्नशरीर के होने पर क्रमशः उपहार स्वरूप पणों के अतिरिक्त — — पणपुराण, तथा ३ पण-

९६. पूरी पंक्ति का निषेध

पुराण इस प्रकार दिये जाने चाहिएँ। पवित्र व्यवहार (व्यापार-क्षेत्र भाग का — — होना चाहिए — — — २५ पणपुराण के द्रव्य के अत्यन्त शुद्ध व्यापार होने पर जपग्र पाञ्चालिक के द्वारा दिया जाना चाहिये। जो द्रव्य प्रदान न करे चाहे वह अपने स्थान पर हो अथवा अन्य स्थानवासी हो उस ऋणी व्यक्ति को बन्दी बनाकर रोक लेना चाहिए। — — यह ऐसा किया जाना चाहिए। अन्याय होने पर द्वारपाल को सूचित किया जाना चाहिए, यदि द्वारपाल निर्णय करने में असमर्थ हो तो उसके द्वारा एक मास के अन्दर-२ राजा के अन्तरासन के समक्ष निर्णय हेतु उपस्थित किया जाना चाहिए। गर्भवती नारी के मरने में एक सौ पण, आत्मघातक, अनाथ शिशु, अग्नि के पतंगों से मरने पर उनकी अन्त्येष्टि की सूचना द्वारपाल को दी जानी चाहिएँ। इस कर्त्तव्य के लिये उसे दो पणों के साथ छः पणपुराण दिए जाने चाहिएँ। जो गोपुर में निवास करने वाला है, उसे भी अधिकारियों की तरह तीन पण दिए जाने चाहिएँ। प्रासाद-रथ के चित्रण करने में सिन्द्रीर दौवारिक को ८० पणपुराण दिए जाने चाहिएँ। रथ को संवारने में, प्रासाद के जीर्णोद्धार संस्कार में, सबके परिप्रक्षालन एवं साजसज्जा में प्रतिवर्ष वेत्र दौवारिक को ८० पण-पुराण दिये जाने चाहिएँ। इस प्रकार चेलकर (वस्त्रकर) दो पणों के साथ छ. पणपुराण वस्त्रकर के होने चाहिएँ। २२ घड़ियों के खरीदने में दौवारिक के द्वारा पाँच पणपुराण दिये जाने चाहिएँ। जिनके पास मण्डूपा (एक प्रकार का वस्त्र) अथवा उत्तम वस्त्र के थान का जोड़ा है, उसके लिए पाँच आभरण (सिक्कों का नाम) देय होने चाहिएँ। प्रतिवर्ष मान दौवारिक के १००० पण पुराण पाञ्चालिक के द्वारा दिये जाने चाहिएँ। ताम्रकुट्टशाला, मानेश्वर, शाम्भपुर, हमस्प्रिङ्ग, पुट्ठस्प्रिङ्ग, जमयप्ती, पुदर्ट ग्रामों की दङ्ग-त्वमात्र (सुरक्षित दुर्गीय गौरव मान) ही को प्रसादीकृत किया गया है अर्थात् इन ग्रामों को सुरक्षित दुर्गीय गौरव प्रदान करने की कृपा की गई है। शिलापट्टक पर श्रीसङ्गादि के प्रसादविशेषों के लिये आदेश लिख दिया गया है। अवगतार्थियों के द्वारा जैसे ऊपर लेखानुसार कार्यों में नियुक्त उसके अधिकार वाले जनों के द्वारा अपने व्यापार के बहाने से मन में भी प्रसाद (आज्ञा) का अतिक्रमण करने के साहस का प्रयास (अध्यवसाय) नहीं होना चाहिए। इस प्रकार की आज्ञा को जो अन्यथा करेंगे उनके लिए अत्यन्त भयानक दण्ड देंगे। पूर्व राजाओं द्वारा निर्मित आज्ञाओं को प्रजा के आमोद-

प्रमोद एवं दान के लिए महत्वपूर्ण समझकर पालन करने वाले भावी राजाओं के द्वारा भी निश्चय ही किसी भी प्रकार की अवज्ञा असह्य होगी। जिन्होंने आज्ञा का पालन किया है उनकी प्रशंसा ही सुनी जाती है—

"जो शारदीय चन्द्रमा की निर्मल किरणों के समान अवदात चरित्रवान है, कुटिल नहीं है, प्रजा के पालन में पूर्वराजाओं के द्वारा धवल (पवित्र) धार्मिक स्थिति (आदेश) की सम्यक् रूप से रक्षा करते हैं, शत्रुपक्ष की अवज्ञा करने वाले वे जन धन्य हैं जो शत्रुओं के दल को जीतने के कारण राज्यलक्ष्मी का उपभोग करके स्वर्ग में शक्र समान मान एवं वैभवशाली होकर स्थिरतापूर्वक स्थित होते हैं। और अब इसकी सीमा है—यहाँ से उत्तर-पूर्व दिशा में अजिक विहार का दभ्रिङ्-कण्ठका नामक पूर्वी द्वार, वहाँ से दक्षिण की ओर महापथ का अनुसरण करते हुए मणिनागाट्टिक के उत्तर से वृहद् ग्राम तक, उसके उत्तर-पश्चिम की ओर वलसोक्षि मन्दिर के दक्षिण में सीधे अनुसरण करते हुए वोद्द जिले (विषय) में पहुंचकर अरघट्ट के उत्तर की ओर, मीशा नामक मार्ग का अनुसरण करते हुए पश्चिम की ओर लंखूलं उद्दण में, वहाँ से ता—द्दणकं का अनुसरण करते हुए तथा नडपटा वाटिका का अनुसरण करते हुए पश्चिम की ओर महाप्रतीहार — — ग्रहमण्डल के द्वार (कण्ठ) का अनुसरण करते हुए बहुत बड़ी गली में स्तम्भाकार शिला वहाँ से गली के प्रारम्भ से लेकर जो कठिन द्वार है उसमें प्रवेश करके पहले घर के उत्तरार्ध भाग को पार करके दक्षिणी गृह के आगे से पश्चिम की ओर अनुसरण करते हुए ग्रहमण्डल के द्वार में प्रवेश करके दक्षिणी घर में आकर पश्चिम में कच्च भूमि (दलदल भूमि) को पार करके योवो नामक ग्राम के मध्य से होते हुये तवेचेखा नामक स्थान का अनुसरण करते हुये पश्चिम की ओर एक मार्ग है, उसके पश्चात् उस मार्ग से उत्तर की ओर अनुसरण करते हुए कुमुदवटी नामक राजपथ है, उसके पश्चिम की ओर अनुसरण करते हुए पीन्ति-मण्डपिका के पास से होते हुए उडणेहुश नामक स्थान, वहाँ से पश्चिम में उतरकर ताम्रकुट्ट शाला की ओर आने वाले मार्ग का अनुसरण करते हुए जप्तिखूसंक्रमा नामक स्थान के सामने से तम्रकुट्टशाला के निकट से चलते हुये उसके सामने उत्तर में मानेश्वर राजमहल का आँगन उसके दक्षिण में प्रेक्षण-मण्डपी के पृष्ठभाग के पीछे से पूर्वोत्तर की ओर जाकर, पूर्वी द्वार से प्रविष्ट होकर राजकीय आंगन के मध्य से होते हुए पश्चिमी द्वार से जाकर प्रवर्द्धमानेश्वर राजमहल के आगे से होते हुए पश्चिमी राजमार्ग का अनुसरण करते हुये बोत्तरिशा (वोत्तरिणा D.R. Regmi)

के द्वारा निर्मित जल-नहर तक, फिर वहाँ से दक्षिण की ओर साम्बपुर वाटिका — — मार्ग के पश्चिम में — — फिर दक्षिण में अनुसरण करते हुये, दक्षिण की ओर फैले हुए पश्चिमी द्वार से — — — जतववत्म विहार (जीववर्मा Regmi) के दक्षिण में वृहद् वाटिका की दक्षिणी कतार उसके पश्चिम में — — वहाँ से उत्तरपश्चिम में — — — (प्रणालीम्) जल-नाली का अनुसरण करते हुये कघ्प्रायम्भी (कम्प्रोयम्वी D.R. Regmi) (इसके आगे Regmi) (इसके आगे Regmi के अनुसार—

और इसके उत्तर में भगवत् — — को दान में दी गई भूमि — — विहार भूमि के पश्चिमी वेदिका (Terrace) से — — — विशाल नदी के मध्यभाग से लेकर नठि विद्वा तक, वहाँ से उतरकर उत्तर में दिपेका नामक स्थान — — — उसके पश्चात् दक्षिणी रूप पश — — गाँव को जाता हुआ मार्ग – – वहाँ से विङ्बोचे मण्डपि, फिर याकू वहाँ से – – – स्वामी कार्तिकेय करगोष्ठी, वहाँ से सप्तमी गोष्ठी भूमि, और इसके पूर्व की ओर – – पश्चिमी क्षेत्र में विहार की भूमि – – पाञ्चालिका की भूमि, पूर्वी क्षेत्र में इसकी, टीला श्री तुकारा (श्री तुक–) का अनुसरण करते हुये — – पूर्व में, फिर वहाँ से तैत्रिय विद्यापीठ (– – –) की भूमि उसके पश्चात् पश्चिमी टीला — — और इस क्रम से — — दक्षिणी के किनारे चलते हुये — — पूर्व दिशा में कङ्क-बट्टिका के साथ-साथ चलते हुये – – फिर मार्ग – – फिर नदी को पार करते हुये वटंकुठी में प्रवेश करके और इसके पूर्व में पंकुटि – – यह सीमा है – – उस मार्ग में सामन्त की भूमि — — गोष्ठी की भूमि – – और पूर्वी नहर – – ।

नक्साल नारायण शिलालेख

लगभग ४२ सैं० मी० चौड़ा शिलालेख काठमाण्डू के नक्साल नारायण नामक स्थान पर स्थित है। इसके ऊपरी भाग में एक बैल की आकृति से आभूषित है। प्रथम आठ पंक्तियाँ लुप्तप्राय होने के कारण अपठनीय हैं।

९. — — — — — — — — — — — — — — — — —
— — — [यस्त्व] मामाज्ञाम् [ति] [क्रम्या]न्यथा कुर्युः कारये-
युर्वास्माभिः

१०. — — — — — — — — — — भूपतिभिः पूर्व्वराजकृत-
प्रसादानुपालनस्य व्यवहित

११. [मनोभिर] — — — — दृढ — — — — — ईया इति
स्वयमाज्ञा।
दूतकश्चात्र भट्टारकश्रीजयदे-

१२. व — — — — — — — — — — घ पौषशुक्लपञ्चम्याम्।

(१-८ पंक्तियाँ लुप्तप्राय हैं)

जो इस आज्ञा का अतिक्रमण करेंगे या करायेंगे उन्हें हम निश्चय ही सहन नहीं करेंगे। अपने पूर्व राजाओं की आज्ञाओं के पालन में अनुरक्त मन वाले भावी राजाओं के द्वारा भी किसी के द्वारा की गई अवज्ञा असह्य होगी। यह हमारी स्वयं की आज्ञा है। यहाँ दूतक हैं श्री भट्टारक जयदेव — — — पौषशुक्ल पञ्चमी।

LXXXV

मीनानाथ शिलालेख जलाशय

लगभग ४५ सैं० मी० चौड़ा यह शिलालेख पाटन में मीनानाथ या मञ्जुघोष मन्दिर के निकट तुङ्गहिटि नामक प्राचीन स्थान में स्थित है। शिला का ऊपरी भाग एक चक्र तथा दो शङ्खों की आकृतियों से अलङ्कृत है।

१. — ल — द — रा —

२. — — श्रीविजय —

३. हरशा —

४. द्वारक — — — — — — — — — — — — — — —
— महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीजयदेवः

५. कुशली —
[य]—

६. थाहं कुशलमाभाष्य —

७. दु — — — यि. श्रो —

८. परिजिह —

LXXXVI

बाहिलि टोले शिलालेख

यह जल-नाली शिलालेख पाटन के बाहिलि टोले नामक स्थान की एक गली की दीवार में स्थित है । अभिलेख लगभग ४० सैं० मी० चौड़ी शिला पर अंकित है ।

१. **पौन . — . मृ भिक्षुणी सु — क्याश्रो सदाया स्वयं ।**

२. . **दत्ता एषा शिलाद्रोण सत्वानां हितहेतवे ।।**

पवित्र जो भिक्षुणी है वह प्रसिद्ध है और स्वयं दया की अवतार है । प्राणियों की भलाई के कारण इन्होंने बहुत कुछ दिया है ।

LXXXVII

सौरपथ शिलालेख

लगभग ७० सें० मी० चौड़ा शिलालेख पशुपति मन्दिर के अहाते में राजेश्वर घाट एवं आर्य घाट के सन्धि स्थल के सम्मुख गोलाकार सौरपथ पर स्थित है।

१. — — — यत् पादानुध्यातो ब्राह्मणपुण्यगोमिनः स्वपुण्याप्यायनाय चा — इव शिलास्थाम् . इ — — — — प — — मा —।

— — — के चरणों का ध्यान करने वाले पुण्यप्राप्ति के लिये और अर्क के समान इस शिला को स्थापित किया।

LXXXVIII

यह शिलालेख-खण्ड श्री एच० ई० केशर वहादुर के द्वारा बिना स्थान निर्देश के श्री नोली साहब के पास प्रेषित किया गया था।

१. **स्वस्ति पर — कारण — — — — — — — — — — —**
भगवतः [प्र] तिष्ठान — स्ति परम् पुण्यमिति मत्वा भगवन्तं त्रैलोक्यगुरुम् — — — —

जो कल्याण का कारण है, जो भगवान का प्रतिष्ठान स्वरूप है, परम-पुण्य स्वरूप है, ऐसा मानकर, जो त्रिलोक-गुरु है उनको (प्रणाम) हो।

LXXXIX

छंगूनारायण प्रवेशद्वार शिलालेख

संवत् १७२ (१७२+५८८=७६० ई०)

यह अभिलेख छंगूनारायण मन्दिर के प्रवेश द्वार के सम्मुख स्थित शिवलिङ्ग की आधार शिला पर लगभग ८५ सैं० मी० भाग में उत्कीर्णित है।

१. — — — — — — १००७०२ दिवा — — — — — — —
श्री शिवदेव — — लङ्का ग्रामनिवासि — — — रौ नश्य शुभमति किभम प्रतिष्ठापित — — —- प्रतिपालन — — —

२. — — — — — — — — देव — — — ब्राह्मणस्य स्वामि
**— — — — — — — प्रद — — — — — — ण — — —
— — — महुं श्रीभारलक्षणभारतन . इ . इ — — — — —
— — — — — — — —**

लङ्काग्राम निवासी, — — — शुभमति वाले — — — ने प्रतिष्ठित किया — — — — जो सबका पालन करते थे, ब्राह्मण को सम्मान देते थे — — — जो लक्ष्मीधर होकर दूसरों को लक्ष्मी प्रदान करते थे।

ग्रन्थसूची

१. अभिज्ञान-शाकुन्तलम्—व्याख्याकार, डा० जमुना पाठक, प्रकाशन रमाशंकर पाण्डेय, मुडियार, गाजीपुर, प्रथम संस्करण सं० १९७८

२. कादम्बरी—(कथामुखम् उज्जयिनीवर्णन), श्री कृष्णमोहन शास्त्री, चौ० सं० सी०, वाराणसी-१, १९६१

३. रघुवंशमहाकाव्यम्—सं० रावेमोहन पाण्डेय, प्रकाशक, पण्डित पुस्तकालय, काशी, १९६५।

४. हर्षचरितम् (बाणभट्ट)—हिन्दी व्याख्याकार श्री जगन्नाथ पाठक साहित्याचार्य चौ० वि० भ०, वाराणसी-१, २०२९

५. कालिदास ग्रन्थावली—आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, प्रकाशक: गयाप्रसाद ज्योतिषी, अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, २००१

६. नेपाल का आलोचनात्मक इतिहास—डी० आर० भण्डारी, काठमण्डू, नेपाल।

७. महाकवि भास—नेमिचन्द शास्त्री, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, १९७२।

अंग्रेजी ग्रन्थ

1. Ancient Nepal—D. R. Regmi, Firma K. L. Mukhopadhyaya, Kathmandu, Nepal, 3rd edition, 1969
2. Ancient, Medieval and Modern Nepal—D. R. Regmi
3. A Literary Study of Bana Bhatta—Nitu Sharma, Munshi Ram Manohar Lal, Oriental Publishers, Nai Sarak, Delhi-6, 1968

4. A Short History of Nepal—Netra B. Thapa, Ratna Pustak Bhandar, Bhatahiti, Kathmandu Nepal, 1930
5. Chaukhambha Sanskrit Studies, Vol. XXIV Varanasi-I, 1970, A.D.
6. Metres of Kālidāsa—Madhusudan Mishra, Tara Prakashan Modal Town, Delhi, 1977.
7. Studies in the History and culture of Nepal—Lallanji Gopal and T.P. Verma, Bharati Prakashan, Varansi-I, 1977
8. Selection from SKT Inscriptions D. B. Diskalkar, 1977
9. The Licchavis (of Vaishali) Vol. LXXV., Dr. Hit Narain Jha, The Chaukhambha SKT Series Varanasi-I, 1970
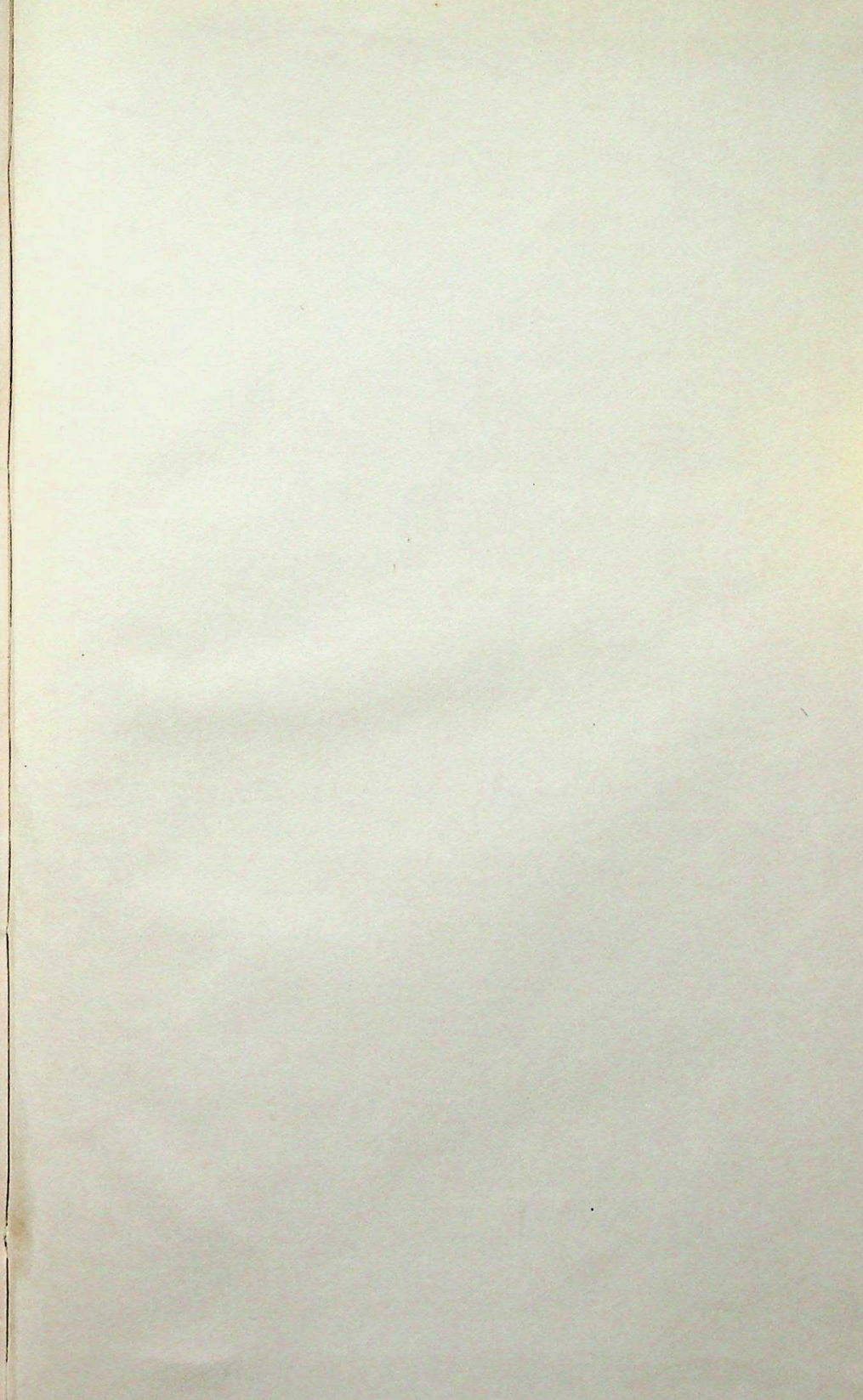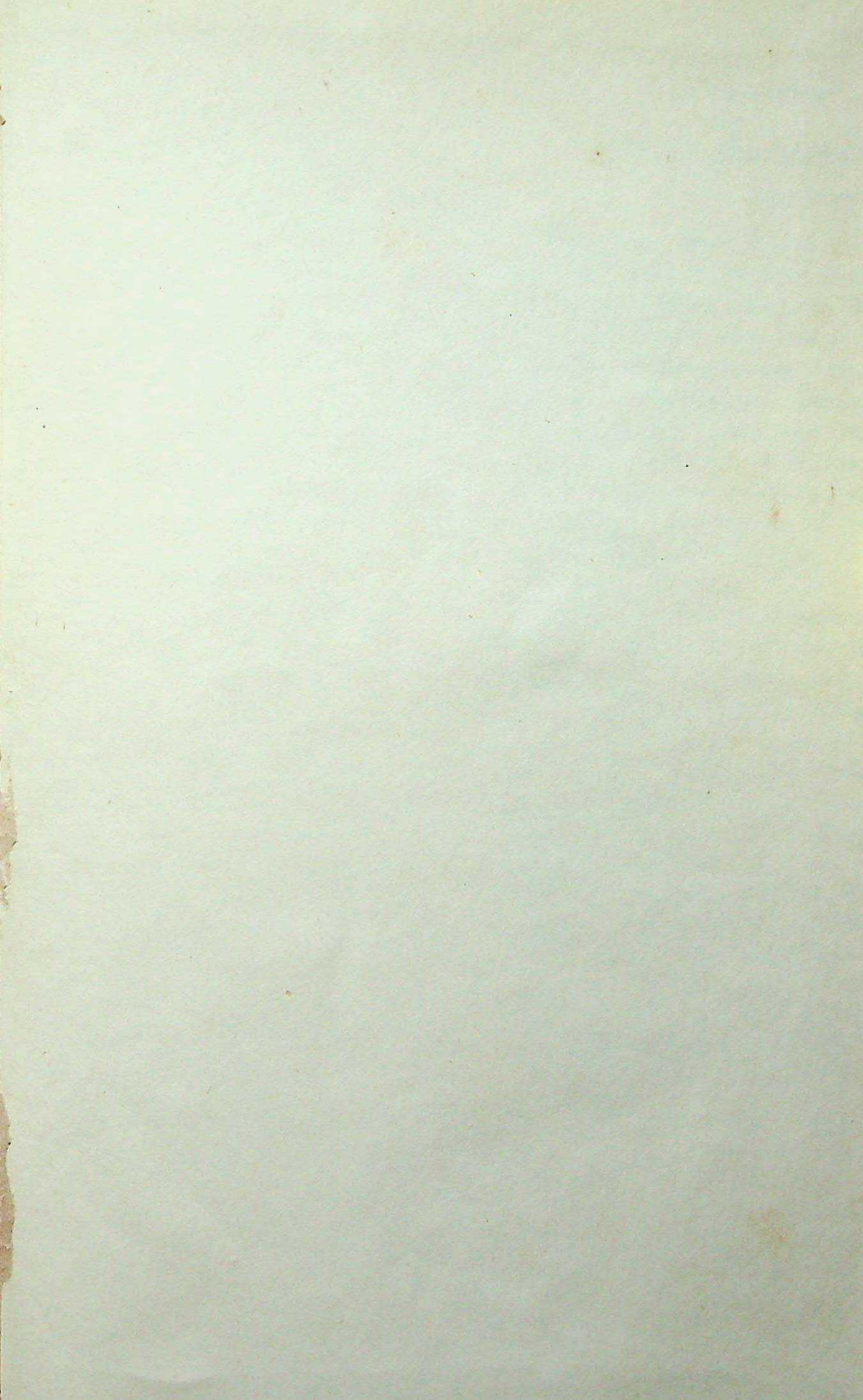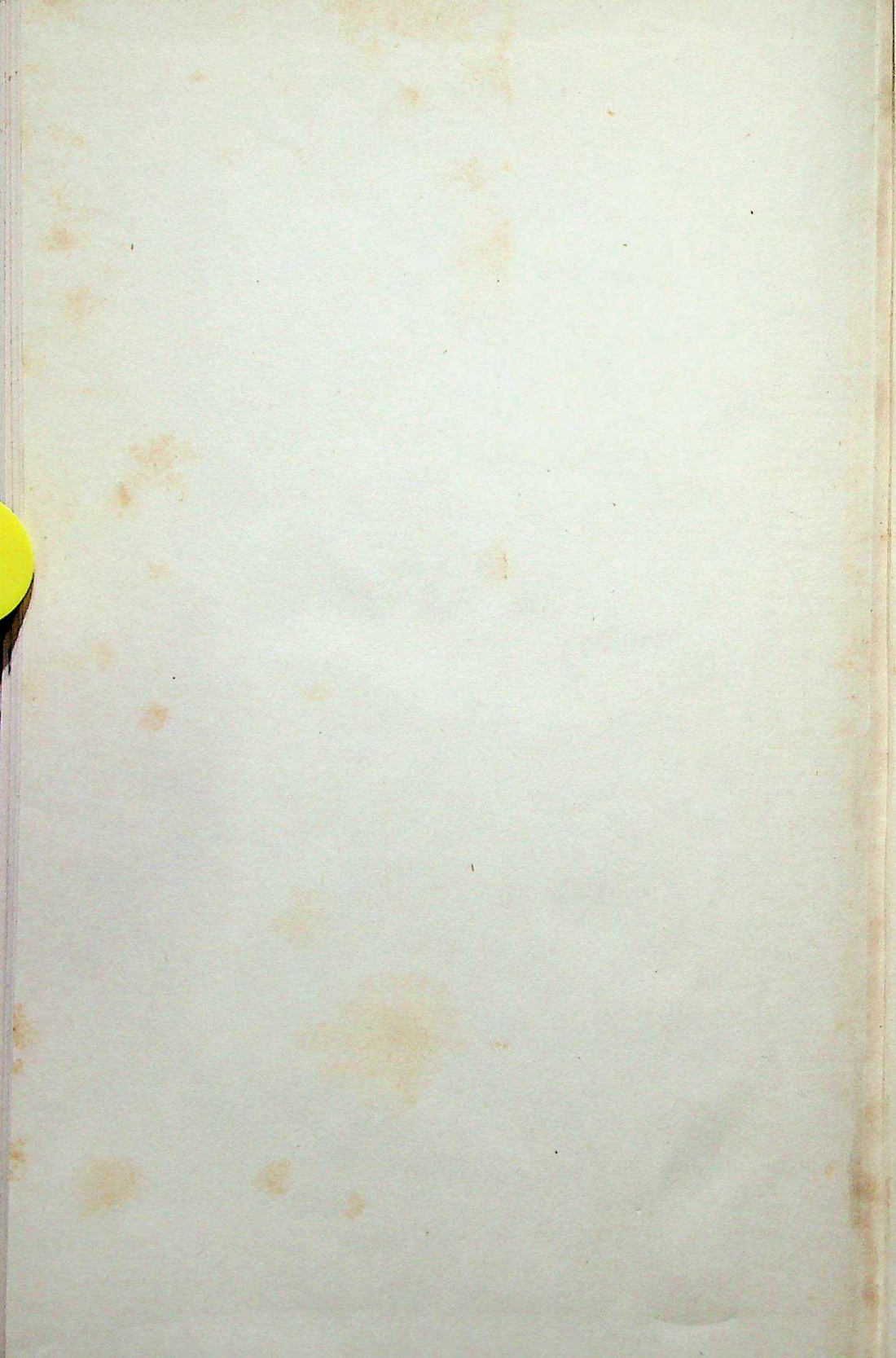
SOME ASPECTS
OF
ADVAITA PHILOSOPHY

—Prof. Ram Murti Sharma

The book, *Some Aspects of Advaita Philosophy* is an unparalleled contribution to Advaita Vedāntic Literature. It covers research material and critical analysis regarding some important aspects of Advaita Philosophy and contains many Advaitic aspects which have been untouched and unexplored hitherto. The author has taken in careful and scholarly consideration the concepts of Brahman, Īśvara, Māyā. Mukti, Ābhāsa, Avccheda, Pratibimba, Dṛṣṭisṛṣṭi, Ethics, Rebirth, Hindu Religion and the philosophy of life etc. It is claimed that Professor Sharma's arguments and conclusions will remove many errors and misunderstandings about the Advaitic tenets. On the whole, the book presents the view that Vedānta is a means of attaining salvation as well as a practical philosophy, very much meaningful for this very life.

The findings are based on the basic texts of Advaita-Vedānta and the arguments and the interpretations of the author. The views of modern scholars also have been incorporated and examined. The lucidity and simplicity of the style will make it accessible to all, it is hoped.

Rs. 100.00